श्री तुलसी कृत

श्री हनुमान चालीसा

व्याख्याता

डॉ. रामक लक्ष्मणमूर्ति

अनुवादक : डॉ. शिव सत्यनारायण

श्री तुलसी कृत

श्री हनुमान चालीसा

व्याख्याता

डॉ. रामक लक्ष्मणमूर्ति

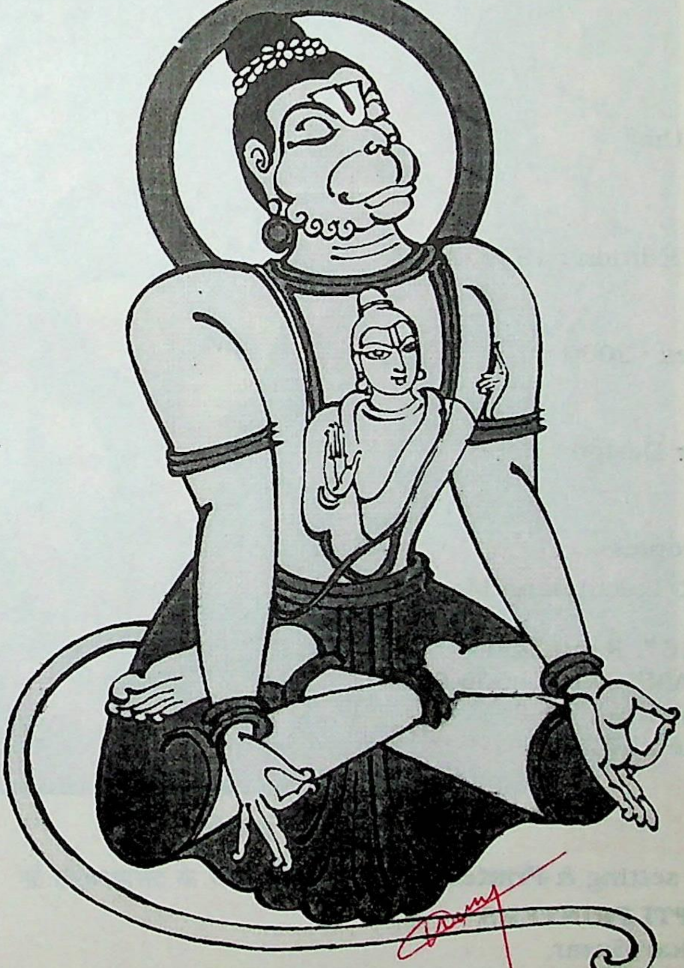

अनुवादक : डॉ. शिव सत्यनारायण

A commentary in Telugu on
'Sri Hanuman Chalisa' of
Sri Goswamy Tulasidas Ji
by **Dr. R. Lakshmana Moorthy**

Hindi Translation
by **Dr. Shiv Satyanarayana**

© Author

First Edition : 1999, April

Copies : 2000

Cover Design : Bapu

For copies :
Dr. R. Lakshmana Moorthy,
M.D.
2-4-167, Ramnagar,
HANAMKONDA - 506 001.
WARANGAL - A.P.
Phone : 77488

Rs. 95/-

Type setting & Printed at :
DEEPTI PRINTERS
Lashkar Bazar,
HANAMKONDA - 506 001. A.P.
Phones : 77519, 67955

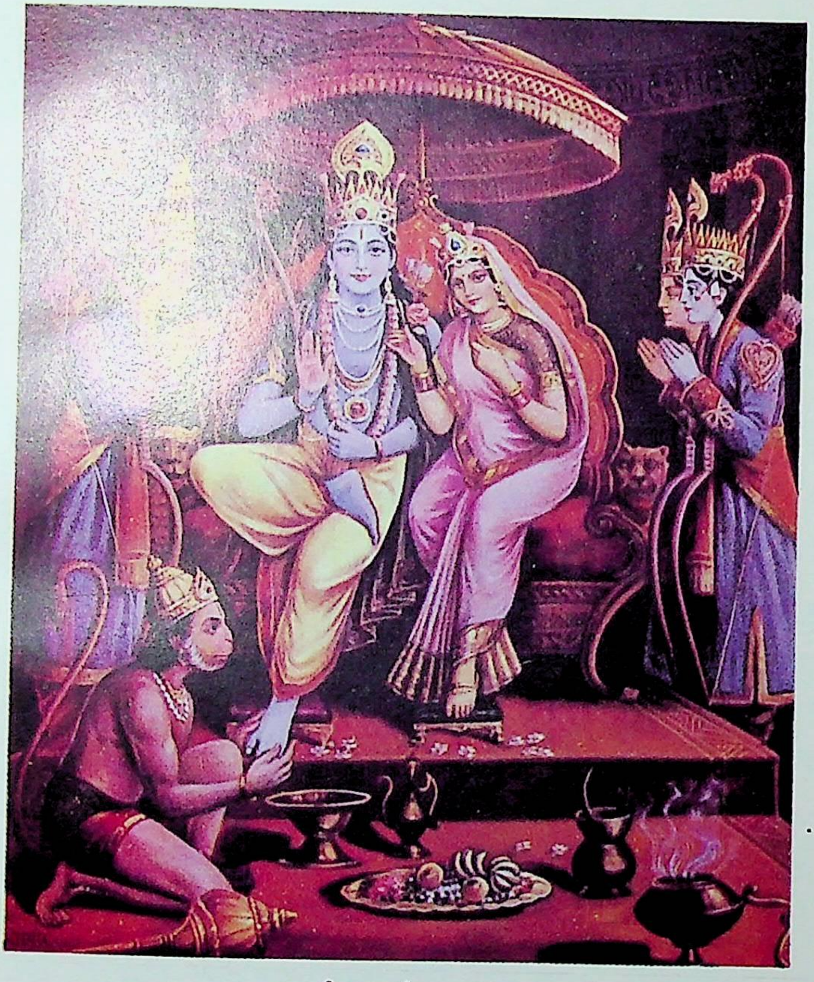

श्री राम पंचायतन

श्री सीतारामचंद्र के चरणकमलों में भक्ति पूर्वक समर्पण

Dr. Ram Niranjan Pandeya
M.A.,Sans, M.A., Hindi, LL.B., (BHU)
Sahitya Shastri, Vedant Shastri, Ph.D. (Nagpur)
Retired Professor & Head, Dept. of Hindi
Osmania University, Hyderabad - 7

Phone : 662458
1-8-702/19, Nallakunta,
Hyderabad - 500 044 (A.P.)

डॉक्टर रामक लक्ष्मण मूर्तिजी का श्री हनुमान चालीसा पर व्याख्यान पढ़ा। कभी–कभी लोग यह सन्देह करते हैं कि हनुमान चालीसा श्री गोस्वामी तुलसीदास की रचना नहीं है। पर डॉ. रामक लक्ष्मण मूर्तिजी के भाष्य को आद्यंन्त अनुशीलित कर लेने के बाद मेरा सन्देह समाप्त हो गया। श्री हनुमान चालीसा के इस भाष्य ने मेरे लिये ज्ञान–दीपक का काम किया।

बावन अध्ययन स्रोतों को आधार बना कर डॉक्टर जी ने इतनी सारस्वतिक सामग्री प्रदान की है कि अब मुझे यह विश्वास हो गया कि श्री हनुमान चालीसा श्री तुलासीदास निर्मित ही है। श्री हनुमान चालीसा के इतने गूढ़तत्वों की सामग्री डॉक्टर जी ने मनोयोग द्वारा संग्रहीत की है कि अब यह निश्चित हो गया कि श्री हनुमान चालीसा गोस्वामी तुलसीदास की ही रचना है।

डॉक्टर जीने बावन अध्ययन स्रोतों के आधार पर इतनी प्रामाणिक सामग्री प्रस्तुत की है कि श्री हनुमान चालीसा पूर्ण प्रकाश से आलोकित हो उठा है।

श्री हनुमान चालीसा के अपने भाष्य की अवतारिका में ड़क्टर जी ने अपनी श्रद्धा–भक्ति–संवलित जो सामग्री तुलसी एवं श्री हनुमान के प्रति प्रदान की है, वह भी मुझे अन्यत्र कहीं नहीं प्राप्त हुई। डॉक्टर जी सिद्ध हनुमद्भक्त हैं यह तथ्य उनके श्री हनुमान चालीसा भाष्य से बार–बार परिलक्षित होता है। लगभग पचास हजार शब्दों वाला यह भाष्य अद्वितीय है। "नभूतो, न भविष्यति" हनुमान चालीसा का ऐसा भाष्य न पहले था और न भविष्य में –उसकी सम्भावना है।

डॉक्टर जी सिद्ध हनुमद् भक्त हैं। श्री हनुमान जी की कृपा से ही यह भाष्य प्रकट हुआ है। इसमें सन्देह के लिये कोई स्थान नहीं है।

पवन–तनय संकट हरन, मंगल मूरति रूप ।
राम लखन सीता सहित, हृदय बसहु सुरभूप ॥

इस अनुपम दोहे की व्याख्या में ड़क्टर जी कहते हैं पवन–तनय सम्बोधन से यह मालूम होता है कि जैसे पवनदेव बादलों के पर्देको हटा देते हैं। वैसे ही श्री हनुमान जी हमारे ऊपर आये संकटरुपी बादलों के पेर्द को हटा देते हैं।

इसी व्याख्या में उन्हों ने यह भी कहा है – "जब हमारे हृदय में मंगल स्वरुप श्री हनुमानजी रहेंगे तब हमें शुभ, आनन्द और मंगल ही मंगल होगा"। कोई निस्वार्थ सेवा करने वाला ही ऐसे ग्रंथ की रचना कर सकता है। डाक्टर साहब ने ग्रंथ की रचना नहीं की, यह तो मंथन किया है समुद्र मंथन के समान। तुलसी दास ने लोक कल्याण के लिये सरल भाषा में हनुमान चालीसा की रचना की है। रामचरित मानस की भाषा से हनुमान चालीसा की भाषा मिलती जुलती है। हनुमान जी की उपासना के बिना राम की उपासना नहीं हो सकती। हनुमान चिरंजीवी है इसीलिए लोगों के कल्याण के लिये गोस्वामी जी ने हनुमान चालीसा की रचना की है।

डॉक्टर लक्ष्मण मूर्ति जी की लिखी हुई तेलुगु के हनुमान चालीसा भाष्य का सुगम एवं सरल हिन्दी में नरसापुर के निवासी डाक्टर शिव सत्यनारायण जी ने जो अनुवाद किया है वे अभिनंदन के पात्र है। रायपुर (मध्य प्रदेश) के मेरे सन् १९४४ से १९४८ तक के छत्तीसगढ़ कालेज के मेरे पुराने छात्र श्री मास्पाक सदाशिव राव जी का योगदान भी वास्तव में अभिनंदनीय है।

हनुमद् भक्त डॉक्टर जी की इस रचना को अनन्त प्रणाम ।

राम निरंजन

(हस्ताक्षर)

आशंसा

विगत एक हजार वर्षों के हिन्दी साहित्य के इतिहास में गोस्वामी तुलसीदास, अपनी रचनाओं के कारण, सूर्य के समान प्रदीप्त हैं। उनके अपूर्व काव्य 'रामचरित मानस' का प्रचार भारत देश में ही नहीं, विदेशों मे भी हुआ है। संभवतः संसार के साहित्य के इतिहास में 'रामरितमानस' ही ऐसी एक मात्र रचना है, जिसे हजारों लाखों की संख्या मे जनता कंठस्थ किए हुए है। धर्म और वर्ण के भेदभाव से परे 'रामचरितमानस' समस्त जनता के लिए मार्गदर्शक बना हुआ है। उपनिषद्सार को गीता के रूप में साधकों के समक्ष प्रस्तुत करनेवाले भगवान श्री कृष्ण के समान प्रातःस्मरणीय गोस्वामी तुलसी दास ने नानापूराण निगम आगमों के सार के रूप में सरल और सुगम कथा के रूप में मर्यादापुरूषोत्तम की कथा को आदर्श रूप में प्रस्तुत किया है। वे स्वयं कहते हैं कि

"नानापुराणनिगमागम सम्मतं यद्
रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतो z पि ।
स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथगाथा
भाषानिबन्धमतिमन्जुलमातनोति ॥'

तुलसीदास के पांडित्यप्रकर्ष और निगमागम पुराणों पर अधिकार को 'मानसपीयूष' नामक व्याख्या ग्रन्थ के आठ खंडों में श्रद्धेय अंजनीनंदन शरण जी ने व्याख्यायित किया है। किन्तु यह आश्चर्य का विषय है कि तुलसीदास ने अपनी विद्वता का प्रदर्शन न करके, सामान्य पामर–पाठक के लिए रामकथासुधा को सुलभ बनाया है।

पंडित रामकिंकर उपाध्याय ने 'मानसमुक्तावली' के चार खंडों में यह निरूपित किया है कि गोस्वामी तुलसीदास महान भक्त थे। उपर्युक्त दोनों ग्रन्थों को समग्ररुप से अध्ययन करने से यह पता चलता है कि तुलसीदास पंडित वर्ग और पामर लोग दोनों के लिए किस कारण से लोक प्रिय बन गए हैं।

तुलसीदास की दूसरी लोकप्रिय रचना, जो भक्त जनों में नित्यपारायण का साधन बना हुआ है, हनुमान चालीसा है। हनुमान चालीसा भाषा भेद को पारकर, समस्त भारत देश में नित्यपारायण का साधन बन गयी है। वैसे भारत देश में कोई भी ऐसा गाँव नहीं है, जहाँ कोई मंदिर–खासकर राममंदिर न हो। प्रत्येक मंदिर में हनुमान चालीसा मंदिर के दीवारों पर खुदा हुआ मिलेगा। यह शोध का विषय बन सकता है कि आंध्र प्रदेश में या दक्षिण भारत में 'हनुमानचालीसा' का पारायण कब से प्रचलित हो गया अस्तु ।

यह बड़ी प्रसन्नता का विषय है कि पेशे से डाक्टर (वैद्य) होते हुए रामक लक्ष्मण मूर्ति ने 'हनुमान चालीसा' की व्याख्या तेलुगु में लिखी और बाद में संरल शुद्ध हिन्दी में नरसापुर के डाक्टर शिव सत्यनारायण जी ने अनुवाद किया वे अभिनंदन के पात्र हैं। इस व्याख्या को पढ़ने से मुझे फिर से श्री अंजनीनंदन शरणकृत 'मानसपीयूष' का स्मरण हो आया। इस व्याख्या ग्रन्थ को पढ़ने से गोस्वामी तुलसीदस के प्रकांड पांडित्य का सुस्पष्ट प्रमाण मिलजाता है, साथ ही साथ डाक्टर लक्ष्मण मूर्ति के गंभीर अध्ययन और पारदर्शी पांडित्य का भी। भक्तजन तो 'हनुमान चालीसा' का नित्य पारायण करते रहते हैं, उस की गहराइयों में जाने की आवश्यकता नहीं समझते। फिर भी जो जिज्ञासु 'हनुमान चालीसा' में निहित गंभीर पांडित्य के बारे में और नानापुराणों की सारग्राहिता को जानना चाहते हैं, ऐसे जिज्ञासु पाठकों के लिए डॉक्टर लक्ष्मणमूर्ति की व्याख्या सचमुच एक करदीपिका है, जिसके सहारे 'हनुमान चालीसा' में निक्षिप्त गूढ़ अर्थो का हृदयंगम किया जा सकता है।

मैं इस सत् प्रयास के लिए डॉक्टर लक्ष्मण मूर्ति जी का हृदय से अभिनंदन करता हूँ।

जहाँ तक मेरा ज्ञान है, हिन्दी भाषा में इतनी सारगर्भित, समग्र और सुचारूरूप से लिखी गई 'हनुमानचालीसा' की व्याख्या प्रकाशित नहीं हुई है। डॉ रामक लक्ष्मण मूर्ति कृत व्याख्या को हिन्दी में प्रस्तुत एवं मुद्रण कराने में एम सदाशिव राव का योगदान भी अविस्मरणीय है।

आशा है, हिन्दी के सुधी पाठक इस ग्रन्थ का स्वागत करें गे।

इतिशम्।

बुधजन विधेय
भीमसेन निर्मल
सम्मान्य आचार्य, हिन्दी
उस्मानिया विश्व विद्यालय

गांधीनगर
हैदराबाद – 500 080

Prof. P. G. Laley
M.A.(Sans) M.A. (Hindi), Ph.D.
Retd. Prof. of Sanskrit
Osmania University

5 KAMALA
Park Society
Ganesh Nagar
Pune - 411 038

तुलसीदासकी हनुमान चालीसा

भारत के सांस्कृतिक इतिहासमें संतोंका महत्व अभूतपूर्व है। भगवंत और संतमें मानों अद्वैतसा प्रस्थापित हुआ है। अस्ति ब्रह्मेति चेद्वेद सन्तमेनं तनो विदुः से लेकर महाभारतके संतकी परिभाषा तक सन्त शब्द काफी व्यापक अर्थमें प्रयुक्त हुआ है। जैसे

सतां सदा शाश्वत धर्मवृत्ति :
सन्तो न सीदन्ति न च व्यथन्ते ।
सतां सद्भिर्नाफलः सङ्गमो z स्ति
सद्भ्यो भयं नानुभवन्ति संतः ॥

'सन्त' पद से कुछ गुणोंकी संहति से । ऐसे पुरुषश्रेष्ठ का अर्थ भी सूचित होता है । उन गुणों में सत्य, निष्कामता, अपरिग्रहता, अमानिता आदि गुण हैं । गीता में जिसे स्थितप्रज्ञ कहा गया डै, वह भी सचमुच सन्त ही है। धीरे –धीरे 'सन्त' शब्दको एक सामाजिक संदर्भ प्राप्त हुआ । 'सन्त' के कार्य वे हैं जिनमें हरिकथानिरुपण, कीर्तन, अध्यात्मश्रवण, परमार्थविवरण आदियों के द्वारा जनजागरण करना और जनप्रवाहको सन्मार्ग की ओर प्रवृत्त करना । भारतीय भाषाओ में 'सन्त' पदका यह अर्थ अधिक रूढ होगया । इस 'सन्त' पदको जिन्होने अपनी प्रतिभा एवं गुणसमृद्धिसे उजागर किया, उन हिन्दी संतों में स्वश्रेष्ठ हैं तुलसीदास। उन्होंने राम कथा को अपनी रसप्लावित भाषा में लिखकर उसे समूचे भारत में लोकप्रिय बना दिया। 'रामचरितमानस' के साथ–साथ विनयपात्रिका, बरैव रामायण लिखकर तुलसीदासने नवविधा भक्ति के सुंदर निदर्शन प्रस्तुत किये।

तुलसीदासजी हनुमान के भी एकनिष्ठ भक्त थे। दास्यभाव का एक अनुपम उदाहरण है आंजनेयस्वामी । ''हनुमान चालीसा' चालीस चौपाइयों का एक

जनप्रिय स्तोत्र है, जिसका केवल उत्तर भारत में ही नहीं, अपितु पूरे भारतमें नित्य पठन होते रहता है। आंध्र देशमें भी उसको पर्याप्त लोकप्रियता मिली है। उस स्तोत्र का अनुवाद तथा विवरण डॉ. रामक लक्ष्मण मूर्तिजी ने किया है। डॉ. लक्ष्मण मूर्ति चिकित्साक्षेत्र में ही नहीं, साहित्यक्षेत्र भी विख्यात हुए हैं। संस्कृत, हिन्दी और तेलुगु भाषापर उनका समान अधिकार है। प्रस्तुत हिन्दी अनुवाद से उनके तेलुगु विवरण से उनकी मूलविषयकी प्रतिपत्ति और प्राचीन संस्कृत भक्तिसाहित्य के गंभीर अध्ययन का प्रत्यय मिलता है।

तुलसीदासने प्रमुखतः रामभक्ति का प्रचार किया। राम के साथ हनुमद्भक्तिको भी उन्होंनें महत्वपूर्ण स्थान दिया। तपस्वी, ज्ञानी, त्यागी तथा पराक्रमी– राम भी थे और हनुमान भी। भारत में नौ प्रकारकी भक्ति प्रचलित है। उसमें तुलसीदास ने कीर्तन या गुणानुवर्णन के द्वारा पुण्यश्लोकों का वर्णन किया है। जैसे कि कहा गया है–

इदं हि पुंसस्तपसश्श्रुतस्यवा
स्त्रिष्टस्य सूक्तस्य च बुद्धिदत्तयो ॥
अविच्युतोर्थः कविभिर्निरुपितो
यदुत्तम श्लोक गुणानुवर्णनम् ॥ भागवत १–५–२२

हनुमान् चालीसा में भक्ति की नौ विधाएँ पूर्णरूप से परिलक्षित होती हैं। जय हनुमान् ज्ञानगुणसागर से लेकर कई दोहोंमें तुलसीदासने तेजप्रताप महाजगवंदन, विकट–भीमरूप आदि गुणोंका वर्णन किया है। उसका सूर्यको फल समझकर पकड़ लेना, रामकी रखवारी करना, अष्टसिद्धि, नवनिधिको देना, आदि क्रिया – कलापोंका भक्ति रस पूर्ण वर्णन भी कविने किया है। रामरसायन उनके पास होने के कारण वे सब संकटोंका निवारण करते हैं। तेलुगु अनुवाद की प्रस्तावना में डॉ लक्ष्मण मूर्तिने भी हनुमान के अनेक गुणों का संग्रह किया है। उनका जन्म, विद्याभ्यास, सुग्रीवमैत्री आदियोंका उल्लेख उन्होने किया है। इसी तरह वंदन, पादसेवन, आत्मनिवेदन आदि विधाओंके उदाहरण हनुमान् चालीसा मे पाये जाते हैं। डॉ लक्ष्मण मूर्तिजी का विवरण प्राचीन संस्कृत ग्रथों पर लिखी हुई टीकाओं एवं वृत्तियों की याद दिलाता है। शुद्ध अनुवाद और भिन्न भिन्न भावों की सटीक व्याख्या उन्होंने की है।

उन्हों ने समस्त अर्थका वहन करने वाली वाल्मीकि रामायण की पंक्तियां अनेक स्थानों पर दी हैं। साथ साथ पराशर संहिता रामचरित मानस आदि ग्रंथों से भी अनेक उद्धरण दिये हैं। प्राण दाता जैसे बारह नामों का संदर्भ उन्होंने आनंद रामायण से लिया है (पृ १०७)

"रामकाज करिबे को आतुर" की व्याख्या करते समय टीका के साथ उनका भक्त हृदय भी उद्वेलित हो उठा है और हनुमान के पांच गुणों का साधार उद्‌भावन किया है (पृ ९२–९९)। हनुमान जी संकर सुवन कैसे है। यह उन्होने कई आख्यायिकाओं द्वारा सिद्ध किया है। एकाध बार उन्होंने कुछतीर्थों का भौगो लिक वर्णन भी दिया ङै। (उदा–पंचमुख हनुमान के वर्णन में मंत्रालय का उल्लेख। एक जगह उन्होंने यह सिद्ध करके दिखाया है " पांच" संख्या हनुमान को कैसे प्रिय हुई थी। (पृ १६२)। राम ने हनुमान को भरत के समकक्ष रखा था – इस का समर्थन डॉ. लक्ष्मण मूत्रि ने गुजराती गिरधर रामायण का आधार देकर किया है। वैसे "रामदूत" के विवरण के समय उन्होंने नीति ग्रंथों के अवतरण देकर "दूत" शब्द का अर्थ विशद किया है (पृ ५८) डॉ लक्ष्मण मूर्ति के व्यापक अध्ययन के ऐसे कई निदर्शन दिये जा सकते हैं।

उनके दैनंदिन कार्याचरण के संबंध में अनुवादक महोदय डॉ शिव सत्यनारायण जी ने जानकारी दी है। उनके समस्त जीवन का आदर्श भी हनुमान होना स्वाभाविक है। काय चिकित्सा के साथ अनाश्चिकित्सा में रममाण होनेवाले डाक्टर साहब ने तुलसी का पुनदर्शन भी कराया है। यह बात ग्रंथ की उपादेयता ही बतलाती है कि उनकी पुस्तक का दूसरा संस्करण भी प्रकाशित हुआ है। इस में कोई शंका नहीं कि इस ग्रंथ के और भी संस्करण भविष्य में आजाएंगे।

अनुवादक महोदय डॉ शिव सत्यनारायण जी भी हिंदी के मूर्धन्य विद्वान हैं। उन्होंने अब तक बहुत से हिन्दी ग्रंथों का तेलुगु में अनुवाद किया है। उन्होने मूल संहिता को न बिगाडते हुए मनोहर शैली में हनुमान चालीसा के विवरण का हिन्दी में अनुवाद किया है। पढ़ते समय लगता है कि यह हिन्दी अनुवाद नहीं डॉ शिव सत्यनारायण जी की मौलिक रचना है। हिन्दी की आत्मा को सुरक्षित रखकर मूल तेलुगु में आये हुए विचार धन को उन्होंने सफलता पूर्वक बटोर लिया है। दोनों

लेखकों की विद्वत्ता, बहुश्रुतता और भक्ति गंभीरता सहज ही परिलक्षित होती है।

मेरी यह एक आंतरिक इच्छा है कि इस ग्रंथ का अनुवाद मराठी, गुजराती, बंगला, उड़िया आदि भाषाओं मे भी हो, ताकि इस ग्रंथरत्न की आभा सर्वत्र फैले। इसमें कोई कठिनाई नहीं होती क्योंकि

दुर्गम काज जगत के जेते सुगम अनुग्रह तुम्हरे तेते

मैं उन भक्तवर आंजनेय स्वमी से प्रार्थना करता हूं कि वह धर्मनिष्ठ डॉ. लक्ष्मण मूर्तिजी को और कुछ ग्रंथ लिखने की प्रेरणा दे और डॉ शिव सत्यनारायण जी की अनुवाद कुशलता को अक्षुण्ण रखे।

जय बजरंग बली की जय।

हस्ताक्षर

प्र.ग. लाले

२६–१–९९

श्री हरिः
श्री कृष्ण गोविन्द हरे मुरारे।
हे नाथ नारायण वासुदेव ॥

श्री संकीर्तन भवन ट्रस्ट

संस्थापक – पूज्यपाद संत श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी जी महाराज

डॉ. विद्याधर द्विवेदी
श्री संकीर्तन भवन
श्री संकष्टहर हनुमान मंदिर
श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी मार्ग, बसंत गांव,
बसंत विहार, नई दिल्ली – 1100 057
दूरभाष : 6144082

दिनांक : 10–12–1998

श्री हनुमते नमः

हिन्दी साहित्य मे गोस्वामी तुलसीदास जी को कौन नहीं जानता ? ये प्रत्यक्ष प्रभु के प्रतिनिधि बनकर भारत भूमि पर सीय–राम की अलौकिक लीलीओं का गुणगान करने पधारे थे। गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपने जीवन काल में अनेक ग्रन्थों की रचना की, जिन मे रामचरितमानस प्रधान ग्रन्थ है। इस के अतिरिक्त गोस्वामी जी की एक रचना "श्री हनुमान चालीसा" भी है। यह श्री हनुमान चालीसा, हनुमान जी के बल–विक्रम तथा गुणों पर आधारित है। श्री तुलसीदास जी का मार्गदशकि रहा है।

डॉ. रामक लक्ष्मणमूर्ति जी जो आंध्र प्रदेश के बहुत ही नामी डाक्टर हैं, उन्होंने श्री तुलसीदास जी की श्री हनुमान चालीसा से प्रभावित होकर तेलुगु भाषा में चालीसा पर महत्वपूर्ण भाष्य लिखा है और जिन प्रामाणिक तच्वों को स्थान दिया है, यह उनकी व्यक्तिगत योग्यता समझी जायेगी। उस तेलुगु भाष्य का मेरे अग्रज डॉ. शिव सत्यनारायण जी ने हिन्दी में अनुवाद किया है।

बहुत प्रसन्नता की बात है कि उसे डॉ. लक्ष्मणमूर्ति जी प्रकाशित करा

रहे हैं। इस भाष्य ग्रन्थ को मैंने आद्योपांत अवलोकन किया है और आदि से अंत तक आर्ष ग्रंथों के प्रमाणों से सिद्ध कर दिया है।

श्री हनुमान चालीसा गोस्वामी जी की सामान्य स्तर की रचना है ऐसा समझकर किसी महानुभाव ने इस विषय पर कलम नहीं उठाई है, किन्तु यह सोचना भ्रम है। श्री हनुमान चालीसा में संपूर्ण रामचरित मानस समाहित है। चालीसा की एक–एक चौपाई में अनेकानेक आख्यान भरे पड़े हैं, जिन को डाक्टर साहब ने अपनी विवनेचनाओं से परिपूर्ण कर दिया है। डॉ. सत्यनारायण जी ने तेलुगु भाष्य ग्रंथ का हिन्दी में अनुवाद कर अपनी योग्यता का परिचय दिया है। यह कार्य अत्यधिक श्लाघनीय और सराहनीय है। धार्मिक जगत को यह एक उनकी अनूठी देन है। वैसे वे तेलुगु भाषा भाषी हैं पर हिन्दी भाषा और साहित्य पर उनका पूरा अधिकार है। यह अनुवाद न होकर मूल रचना जैसा लग रहा है। एतदर्थ दोनों डॉक्टर धन्यवाद के पात्र हैं।

मुझे आशा ही नहीं, विश्वास है कि श्री हनुमान जी के भक्त इस हनुमान चालीसा भाष्य को श्रद्धापूर्वक पाठ करेंगे और अपने जीवन को सार्थक बनायेंगे।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वेसन्तुनिरामयाः

सर्वे भद्राणिपश्यन्तु, माकश्चिद् दुःखभाग् भवेत् ॥

डॉ. विद्याधर द्विवेदी
संकीर्तन भवन, श्री हनुमान जी का मंदिर
बसंत गाँव, नई दिल्ली

हनुमान ; हनुमान चालीसा

– *प्रो. माधवराव रेगुलपाटी*

हनुमान सर्वदेवता स्वरुप हैं, शीघ्र फल प्रदाता हैं। वे शक्ति, बुद्धि, प्रकाश, धन, दौलत, स्वास्थ्य, सौंदर्य आदिदेने के अतिरिक्त भूत, प्रेत, पिशाच, राक्षस, बेताल आदि दुष्ट शक्तियों को दूर करने वाले देव हैं।

हनुमान ने लंका का दहन किया था। लंका में लक्ष्मण के मूर्छित होने पर संजीविनी पर्वत उठा ले आया। कही, कहीं यह उल्लेख मिलता है कि राम ने शिवलिंग की प्रतिष्ठा रामेश्वर में करने के लिए रावण को जो ब्राह्मणथा और विद्वान था पुरोहित के रुप में निर्मंत्रित किया । पत्नी के बिना राम शिवलिंग की प्रतिष्ठा नहीं कर सकते थे। यह सोचकर रावण स्वयं सीता सहित आये थे। सीता ने सैकत शिवलिंग का निर्माण किया। रावण ने उसका, प्रतिष्ठापन कराया। मुहूर्त समीप था। मुहूर्त चले जाने के बाद लिंग का प्रतिष्ठापन करने से फल–प्राप्ति नहीं होती। उसके बाद जरा देर से हनुमान काशी से शिवलिंग लेकर आये । तब रामेश्वर में उस लिंग का प्रतिष्ठापन हनुमतेश्वर के नाम से किया गया। मूर्ति प्रतिष्ठा के बाद रावण सीता को लंका वपस ले गया । यही राम का धर्म–पालन है। क्या विचित्र मिलन–राम–सीता और रावण का था। यह कितनी विचित्र घटना है। राम सीता को युद्ध में जीत कर वापस लाना चाहते थे; यही राम का शील है। स्वामि कार्य निर्वहण में हनुमान का योगदान अत्यन्त महत्वपूर्ण था।

तुलसीदास की कृतियों में "हनुमान चालीसा" की विशेषता विश्व–विख्यात है। तुलसीदास द्वारा रचित ग्रन्थों में निम्न लिखित ग्रन्थ अत्यन्त प्रसिद्ध हैं –

1) रामचरित मानस 2) राम लला नहछ् 3) वैराग्य संदीपिनी 4) बरवै रामायण 5) पार्वती मगंल 6) जानकी मंगल 7) रामाज्ञा प्रश्न 8) दोहावली 9) कवितावली 10) गीतावली 11) श्रीकृष्ण गीतावली 12) विनय पत्रिका.

हनुमान चालीसा तुलसी की अवधी रचना मानी जाती है। भक्त–प्रवरों के नित्य–गान के लिए आवश्यक सुलभ शैली में रचित 'हनुमान–चालीसा' भारत के कोने–कोने में प्रसिद्ध होकर हनुमत् भक्तों को तारने में, भव–जलधि पार

कराने में अपना स्थान रखती है। इस में ४0 चापाईयाँ हैं। चालीसा के आरंभ में दो दोहे और समाप्ति में एक दोहा हैं।

श्रीमान लक्ष्मण मूर्ति जी वैद्य–सेवा में प्रवीण तथा विख्यात हैं। सरकारी नौकरी से स्वैच्छिक अवकाश प्राप्त कर हन्मकोंडा नगर स्वास्थ्य–सौभाग्य की संरक्षा में निरंतर व्यवसाय–रत हैं। प्रवृत्ति से साहित्यिक हैं; भावना मार्ग में भक्त हैं। स्वभाव से संत हैं। ऐसे भक्त प्रवर श्री लक्ष्णम मूर्ति द्वारा रचित श्री हनुमान चालीसा की व्याख्या में सरस्वती की महती वीणा का मुदुल सस्वर मुखरित होकर, किंकिणी गणगण संगीत सा ध्वनित होकर, अनंत विद्वत् – सागर की गहराई को हृदगत् करता है।

श्रीमान लक्ष्मण मूर्ति द्वारा विरचित हनुमान चालीसा की व्याख्या (तेलुगु) का हिन्दी अनुवाद डॉ. शिवसत्यनारायण ने किया। वे हिन्दी, तेलुगु तथा संस्कृत भाषाओं के विद्वान हैं। इन्होंने पूज्यपाद श्री श्री श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी कृत "श्री हनुमच्चरित्र" हिन्दी का तेलुगु में सफल अनुवाद किया; जिस के कई संस्करण प्रकाशित हुए ।

हनुमान की महिमा जान कर कई महात्माओं ने इसे प्रकाशित कर लोगों में बाँटनें का पुण्य–कार्य किया। उनमें अवधूतेन्द्र सरस्वती स्वामीजी का नाम उल्लेखनीय है। ब्रह्म श्री सिया रघुवर दास जी संकीर्तन सम्राट थे। बाद में वे अवधूतेन्द्र सरस्वती स्वामी जी के नाम से प्रसिद्रध हुए थे। वे संपूर्ण आन्ध्र प्रदेश में रामनाम का प्रचार करने के अतिरिक्त श्री हनुमान चालीसा को लाखों में बंटवारा किया। श्री हनुमान चालीसा के शिला लेखों को शताधिक मंदिरों में प्रतिष्ठापित किया। 1975 में वे परलोक सिधारे । श्रीगुरु स्वामी मीनाक्षी दंपती ने उनकी संगोमरमर–शिलामूर्ति की प्रतिष्ठा अपने गृह में कराकर महान कार्य किया।

हनुमान चालीसा भाष्य के बारे में मेरा अभिमत लिखने का आदेश श्रीमान रामक लक्ष्मण मूर्ति से मिला; मैं इसे लिख कर अपने आपको धन्य मानता हूँ ताकि दैव–कर्य की संपन्नता में मेरा भी सहयोग अणुमात्र उपयुक्त हुआ। श्रीमान लक्ष्मण मूर्ति जी की स्नेह–दृष्टि से मैं अत्यन्त अभिभूत हूँ, एतदर्थ उन्हें शत शत प्रणाम।

आपका विनीत

प्रो. माधवराव रेगुलपाटी

गाँधीनगर हन्मकोंडा – 506 001.

मेरे विचार

मास्याक सदाशिव राव
एम.ए. एम.एड
अवकाश प्राप्त प्राध्यापक
प्रशासनिक स्नातक महाविद्यालय

यह मेरा परम सौभाग्य है कि डाक्टर लक्ष्मण मूर्ति जी ने मुझे उनके हनुमान चालीसा के तेलगु भाष्य के हिंदी अनुवाद के बारे में अपने विचार व्यक्त करने कहा। डॉ. लक्ष्मण मूर्ति एक सफल चिकित्सक ही नहीं धार्मिक और आध्यात्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति है। इस ग्रंथ के द्वारा सस्कृत और हिंदी के विविध ग्रंथों के उनके गहन अध्ययन का पता चलता है। उनके चेहरे पर की चिर मुस्कुराहट और विनम्रता अनुकरणीय है। पूर्व जन्म संस्कार से उन जैसा व्यक्ति जन्म लेता है। डाक्टर साहब को मैं सन् १९६४ से जानता हूं । मेरा उनसे ३५ वर्षों का घनिष्ठ परिचय है। सन ६४ में डाक्टर साहब को मैं नें सज्जनता की प्रतिमूर्ति के रूप में जे देखा था। उस में आज भी जरा भी अंतर नहीं है। प्रातः नौ बजे से रात्रि के दस बजे तक रोगियों की चिकित्सा में व्यस्त रहने वाले एक आदर्श और सफल चिकित्सक तेलुगु, हिंदी साहित्य का, वेदो का, सस्कृत साहित्य का, विभिन्न भाषाओं के रामायणों का इतनासूक्ष्म और विस्तृत अध्ययन कर सकता है यह हमारी कल्पना शक्ति से परे हैं । हनुमान चालीसा भाष्य के अंत के पचपन छप्पन पुस्तकों की सूची देखने से मेरा कथन सत्यसाबित होता हैं। लक्ष्मण मूर्ति जी का व्यवहार रोगियों से इतना सुंदर और विनम्र होता है कि रोगी की बीमारी उनके दर्शन से ही आधी चली जाती है। वे कालेज में संस्कृत का अध्ययन करते–करते चिकित्सा के क्षेत्र में आये। मद्रास में डॉ रंगाचारी को जो ख्याति मिली उससे अधिक डॉ लक्ष्मण मूर्ति जी को जो कीर्ति और यश मिला वह किसी प्रकार कम नहीं। मेरी आयु इस समय बहत्तर वर्ष की है। मेरे इस लंबे जीवन में मुझे महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश कर्नाटक और तेलंगाने मे पूरे पचास वर्षो तक सन् १९४८ से आज तक एक सफल प्राध्यापक के रूप मे काम करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ । मैने

विद्याध्ययन मध्यप्रदेश में रायपूर और जबलपुर में किया । डाक्टर लक्ष्मण मूर्ति का वंरगल के नागरिकों की ओर से नागरिक सम्मान किया गया । यह एक अभूत पूर्व घटना है। मैं ने इस लंबे जीवन में ।एक चिकित्सक का नागरिक सम्मान होते कहीं नहीं देखा । डाक्टर साहब को धन का लालचलेश मात्र भी नहीं। मित्रों से परिचितों से वे कभी फीस नहीं लेते । जो जितना देता है वे उसे ले लेते है। परिचित अपरिचित सभी से उनका एक समान व्यवहार रहता है। रोगियों को दवा भी अधिकतर अपने पास आने वाले फिजीशियन सैंपल्स में से देते हैं।

मैं बचपन से हनुमान चालीसा श्री रामरक्षा स्तोत्र और विष्णु सहस्त्रनाम का नित्य पारायण करता आया हूं । डाक्टर साहब के द्वारा रचित हनुमान चालीसा भाष्य के अध्ययन से मै ने कई नई बातें सीखी । हनुमान जी के विवाहित होने के बारे में पंचमुखी हनुमान के बारे में मुझे इसी भाष्य से मालूम हुआ ।

हिंदी से मुझे एक विशेष लगाव है। हिंदी मेरी मातृभाषा नहोकर भी मेरी मातृभाषा से बढ़ कर है। मैं २८ वर्ष की आयु तक मध्यप्रदेश मे रहा । १९५५ मे तेलंगाने मे आया । हिंदी अनुवाद की भाषा इतनी सरल और सुबोध है कि अनुवादक के अपार हिंदी ज्ञान का पता चलता है। हिंदी में उनकी विद्वत्ता अपार है। व्याकरण की दृष्टि से, शैली की दृष्टि से अनुवाद अति उत्तम है। वे कही भी डॉ. लक्ष्मण मूर्ति जी के तेलगु भाष्य से थोडा भी द्वर नहीं हटे हैं। यही एक संच्चे अनुवादक का लक्षण है ।

वाल्मीकि रामायण, तुलसी रामचरित मानस, विनय पत्रिका, पराशर संहिता, शौनक संहिता का प्रामाणिक उद्धरणों के साथ उल्लेख किया गया है। भारत केअधिकतर भागों में हनुमान जी के भक्तों की संख्या किसी भी देवता के भक्तों से अत्यधक है। हनुमान के जन्म तिथि के बारे में, उनके विवाह के बारे में, पत्नी के बारे में प्रामाणिक आधारों का उल्लेख किया गया है। उत्तर भारत की जनता हनुमान जी को ब्रह्मचारी मानती है। पर पराशर संहिता, शौनक संहिता के आधार पर उनका सुवर्चला देवी से विवाह होना सिद्ध किया है। उनकी जन्म तिथि के विषय में उनके वाहन के रूप में ऊंट के होने के शौनक संहिता, हनुत्मत्सूक्ति

के प्रमाण दिये गये है। उन्हे भगवान श्री कृष्ण के समान प्राजापत्य ब्रह्मचारी कहा गया है।

हनुमान के जन्म के बारे में राम लक्ष्मण भरत शत्रुघ्न के जन्म से निकट का संबंध बताया गया है। पुत्रेष्टि यज्ञ के बाद अग्निदेव प्रत्यक्ष होकर चरुक्षीर देते है– महाराज दशरथ उस प्रसाद को प्रेम से कौशल्या सुमित्रा और कैकयी को देते हैं। कैकयी रोने लगती है उसे छोटा भाग मिलने पर । उसी समय सुवर्चला नामक एक अप्सरा शापग्रस्त चील के रूप में कैकयी के चरू को झपट कर लेजाती है । वायु के झोंके से वह चरू चील के चोंच से गिरकर अंजनी के अंजलि में जाकर गिरता है शिवजी का वरदान था चील शाप विमुक्त होजाती है। अंजनी उसे खाजाती है। उसी के फलस्वरूप हनुमान का जन्म होता है। वशिष्ठ के आदेश से कौशल्या अपने चरुक्षीर से आधा भाग कैकयी को देती है उससे भरत का जन्म होता है। उसी के कारण राम और भरतका अनन्य प्रेम सिद्ध किया गया है। सुमित्रा अपने भाग का आधा भाग कैकयी को देती है। शत्रुघ्न का जन्म उससे होता है । हनुमान संजीवनी लेकर आते हैं तो राम उनकी प्रशंसा करते हुए कहते हैं। तुम मुंझे भरत के समान प्रिय हो। राम सीता से भी अधिक लक्ष्मण से प्रेम करते हैं इसीलिए लक्ष्मण के मूर्च्छित होने पर वे कहते हैं सीता को छुडाने से अधिक महत्व लक्ष्मण की मूर्च्छा को हटाने की बात करते हैं। वे कहते हैं ढूंढने पर सीता जैसी सुंदर नारी पत्नी के रूप में मिल सकती हैं पर लक्ष्मण जैसा रणधीर भाई नहीं मिलेगा ।

सारे भारत में चालीस करोड़ से भी अधिक जनता की मातृभाषा हिंदी है। इस अनुवाद के द्वारा सारे भारत की जनता डाक्टर लक्ष्मण मूर्ति जी के भाष्य से परिचित हो गी और हनुमानजी के बारे में कई नई नई बातें सामने आयेंगी। इस ग्रंथ का सारे भारत में स्वागत होगा । इस अनुवाद के कारण डाक्टर साहब की कीर्ति भारत के कोने–कोने में फैले–यही हनुमान जी से मेरी प्रार्थना है । मैरी आशा और प्रार्थना अवश्य साकार रूप धारण करेगी।

अनुवादक नरसापुर के डॉ शिव सत्यनारायण एक सेवा निवृत्त हिंदी के प्राचार्य है। वे हिंदी के एक माने हुए विद्वान हैं । सन् १९४८ मे श्री सियारधुवर दास जी के साथ आंध्र से वे प्रयाग के पास झूंसी में स्वामी प्रभुदत्त ब्रह्मचारी के आश्रम में गये। वहां वे दस बारह वर्ष प्रभुदत्त ब्रह्मचारी जी के सहवास में रहे। वहीं से वे बी ए, एम. ए. करते हैं। १९५८ से १९९१ तक नरसापुर कालेज में हिंदी के व्याख्याता के रूप में काम करते रहे। १९९१ में वे सेवा निवृत्त हुए । सत्यनारायण जी श्री सियार रघुवरदास जी और पूज्य प्रभुदत्त ब्रह्मचारी जी को अपना विद्या गुरू मानते हैं । वे श्री राम शरण जी को अपना मंत्र गुरू मानते हैं। वे एक सफल अनुवादक हैं। हनुमान चालीसा का हिंदी अनुवाद मैने एक लंबे समय तक विस्तार से अध्ययन किया हैं। हिन्दी भाष्य ग्रंथ के प्रकाशन में जो कुछ सहयोग मुझसे हो सका है, किया है।

– सदाशिवराव

श्री हनुमान चालीसा तेलुगु भाष्य कार के बारे में..

डॉ. रामका लक्ष्मण मूर्ति जी हनमकोंडा के बहुत बडे नामी वैद्यरत्न हैं। व्यक्तित्व से वे महान है, स्वभाव से सत्वगुण संपन्न हैं, श्रोत्रिय है, परम भागवतोत्तम हैं, भावुकभक्त है, मितभाषी है, सरल हैं, सच्चे मित्र है, पर दुःखकातर हैं, निस्वार्थ समाज सेवा तत्पर हैं, और साहित्य – संगीत– कलाकोविद हैं।

डॉ. साहब शैशव में ही मातृ–पितृ स्नेह से वंचित हुए । उनके मामाकी देखरेख में वे पाले–पोसे गये और पढाये – लिखाये गये, उन्होने उनमें भगवान के प्रति भक्ति, साधु – संतो के प्रति श्रद्धा, प्राणियों के प्रति करूणा एवं उत्तम संस्कार के बीजबोये और रामायण, भागवत, गीता जैसे आध्यात्मिक ग्रंथों को भी पढाया है ।

सुबह स्नानादि से निपट कर नियमित रूप से संध्यावंदन, रूद्राध्यायी से शिवाभिषेक – अर्चन – प्रार्थना आदि से निवृत्त होकर चाय पीकर नौ बजेके करीब अपने क्लिनिक में प्रवेश करते हैं। चिकित्साक्षेत्र में उनका अनुभव असाधारण है। वे आज के जैसे डाक्टर नहीं, प्राचीनपरंपरा के है। रोगियों को देखने और उनके साथ व्यवहार का उनका ढंगविलक्षण है। वे पहले रोगी का निदान भली–भाँति करते हैं और रोगके लक्षण अच्छीतरह जानने के बाद ही चिकित्सा करने लगते हैं। रोगियों से उनका जो शि.ष्टसंभाषण होता है उसी से रोगियों का आधा रोग दूर हो जाता है हर रोगीको आधा घंटा या चालीसमिनिट तक देखते है, सही सलाह देते हैं और बहुत ही कम गोलियाँ लिखते हैं । यह काम लगातार रात में नौ बजे तक चलता रहता है। उन्हे अपने खाने– पीने का भी ख्याल ही नहीं रहता । बुलावे पर बुलावे आने पर दो–ढाई बजे अंदर जाकर भोजन करके वापस आजाते हैं । वे आराम करना या सुस्ताना जानते ही नहीं। पाँच बजे के करीब चाय लेते हैं। पीड़ित लोगों की पीडा को दूरकरने के प्रयत्न, चिकित्सा करना मात्र ही अपना कर्तव्य मानना, उसके निवारण को भगवान के भरोसे छोडकर देखना, मानव सेवा कोही माधव सेवा के रूप में स्वीकार करना, उनके जीवन के सिद्धांत हैं। वे किसी से मुंह खोलकर पैसे

माँगना या कंपौंडर से मँगवाना जानते नहीं । लोग अपने आप जो स्वेच्छा से देदेते हैं उसे लेकर संतुष्ट रहते हैं। गरीबो से और परिचितों से वे पैसे लेतेही नहीं। इसीसे वे सब के प्रेम पात्र बन गये हैं। एक प्रकार से डाक्टर साहब का जीवन बहुजनसुखाय और बहुजन हिताय ही है।

वरंगल के डाक्टरों में वे सीनियर हैं फिर भी उनमें नाम मात्र के लिये भी गर्व नहीं। वे चाहे अमीर हो, गरीब हो, मित्र हो, या पहचानके हो – सब के साथ एक सा व्यवहार करते है और सब को एकसादेखते हैं। डाक्टर साहब के पास शांपिल्स के रूप में जो दवाकी गोलियाँ आती हैं वे उनको गरीबों को या परिचितों को दिया करते हैं। उन से मिलने मेडिकल रिप्रजेंटेटिव आते है, चाहे वे नयेहों, या पुराने हो – सबके साथ एक जैसा व्यवहार, एक जैसा मंदहास, और एक ही जैसी आत्मीयता है। उन के व्यक्तित्व से सीखो... करो... आचरण करके दिखाओ .. का महान संदेश मिलता है ।

डाक्टर साहब ने शिवमहिम्नस्तोत्र की व्याख्या हरिहराव्दैत रूप में लिखकर प्रकाशित किया हैं। ''श्रीकिरणें' नामक काव्य संकलन को श्री पी. राममूर्तिके साथ मिलकर लिखा है और प्रकाशित किया है। शिवाभिषेक – पाशुपत विधान नामक पुस्तक लिखकर प्रकाशित किया है ।

डाक्टर साहब अपने घर में शनिवार के दिन सत्संग का आयोजन कर श्री तुलसी दास कृत हनुमान चालीसा का पाठ करते हैं । वे श्री चालीसा से बहुत ही प्रभावित हुए । पराशर संहिता और हनुमत् संबधी उपलब्ध सामग्री मंगाकर हनुमत्तत्वके बारे में एक शोधार्थी की भाँति अध्ययन किया । चालीसा की कई पुस्तके देखी, श्री जयरामजी महाराज द्वारा लिखित हिंदी चालीसा भाष्य को भी देखा । उनके मन मे हनुमान चालीसा श्री तुलसी दासजी का जो बीजाक्षरों से पूर्ण हैं और सिद्धमंत्र हैं, उस पर नये ढंगसे कुछ लिखनेकी इच्छाहुई । श्री हनुमानजी और हनुमत्तत्वके बारे में वे प्रवचन देनेलगे और लिखने लगे। विजयवाडा से निकलने वाली हनुमत् सेवा पत्रिका में क्रमसे चालीसा भाष्य के कुछहिस्सों को छपवाये । वेदों, उपनिषदों अेर पुराणों से हनुमान संबधी सामग्री का अनुशीलन किया और चालीसा पर शब्दार्थ, भाव और विशिष्ट व्याख्या के साथ भाष्य प्रस्तुत

किया। उन्हें इस काम मे पूरे नौ साल लगे। वे अपने व्यस्त जीवन में से भी थोडा समय निकाला करते थे । श्री हनुमज्जयंती के अवसर पर सामूहिक पूजा कार्यक्रमों का आयोजन करते थे । श्री चालीसा पाठ से उन्हें जो अनुभव हुए उन्हे मित्रोंको बताया करते थे और अपने लिखित भाष्य को मित्रों को सुनाया करते थे । आखिर मित्रों की प्रेरणासे चालीसा भाष्य को पुस्तकाकार रूप में छपवाया। सन् १९९४ जून १४ को प्रथम संस्करण के विमोचन का उत्सव बडे धूम – धाम से मनाया गाया। डॉक्टर साहब से मैं परिचित नहीं था । मेरे गुरूदेव श्री रामशरणजी के आदेश से मैं विमोचन के उत्सव मे सम्मिलित हुआ । बाद में डाक्टर साहब से परिचय बढ़ता गया। श्री हनुमान चालीसा भाष्य को देखने पर मुझे लगा–यह भाष्य हिंदी मे प्रकाशित होता तो उत्तर भारत की जनता भी हनुमत् संबधी नये–नये विषयों से परिचित हो जाती और लाभ उठाती – प्रथम संस्करण की प्रतियाँ चार महीनों में ही समाप्त होगयीं । डाक्टर साहब ने दूसरा संस्करण भी प्रकाशित कराया । तेलुगु चालीसा भाष्य को पढ़कर बहुत लोगो ने लाभ उठाया और डाक्टर साहब को पत्र लिखकर धन्यवाद दिया । मैं ने चालीसा भाष्य का हिंदी में अनुवाद किया। डाक्टर साहब के पास भेज दिया। यहाँ – वहाँ करते और अब–तब करते चार साल बीत गये। अखिर चालीसा –भाष्य तेलुगु को छापने वाले दीप्ति प्रेस के प्रबंधक श्री रतनबाबू से डाक्टर साहब ने एक दिन कहा तो बाबूजी ने कहा हिंदी कंप्यूटर रख कर हमी छापेंगे । छपाई का काम पूरा होगया ।

डाक्टर साहब जैसे बहुत ही बिरले हुआ करते हैं। सुबह दस बजे जैसे उनका मुखप्रसन्न रहता है, रात के नौ बजे भी वैसे ही प्रसन्न और अम्लान रहता है। यही उनके व्यक्तित्व की महानता है।

हम सर्वदेवता स्वरूप श्री हनुमान जी से प्रार्थना करते हैं कि वे डाक्टर साहब को सपरिवार स्वस्थ रखें, सानंद रखें, चिरायु प्रदान करें और अपनी इस सेवा से भी अधिक सेवा करने का सुअवसर प्रदान करे ।

– अनुवादक

अनुवादक के बारे में

श्री शिवसत्यनारायण जी का जन्म वंकायल पाडु प्रकाशम जिलेमें हुआ। जब वे श्री शंकर विद्यालय, बापटला में संस्कृत पढ़ते थे तब सन् १९४८ में पूज्य श्री सियारघुवर दासजी के साथ प्रयाग चले गये। वहाँ पर पूज्यपाद श्री प्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी के संकीर्तन भवन, झूंसी, प्रयाग में संस्कृत का अध्ययन करने लगे। श्री ब्रह्मचारी जी की सेवा में रहते हुए व्यक्तिगत रूपसे हाईस्कूल, इंटर परीक्षओं में उत्तीर्ण हुए। बाद को प्रयाग विश्वविद्यालय से १९५६ में बी.ए. और १९५८ में एम.ए. परीक्षओं में उत्तीर्ण हुए । संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी से वे साहित्य शास्त्री की परीक्षा में उत्तीर्ण हुए । श्री ब्रह्मचारीजी के आश्रम मे वे पूरे दस साल रहे और उनके कृपापात्र बनगये। सन् १९५८ में श्री.वै.एन.कालेज नर्सापुर में हिंदी विभाग केअध्यक्ष के रूप मे प्रविष्ट हुए और सन् १९९१ में सेवा से निवृत्त-हुए । सन् १९७० में हिंदी – तेलुगु नीतिकाव्य–तुलनात्मक अध्ययन नामक शोधकार्यकर आंध्र विश्वविद्यालय से पी.एच.डी की उपाधि भी प्राप्त की ।

श्री सत्यनारायण जी ने हिंदी तेलुगु प्रतिनिधि कवियों का तुलनात्मक अध्ययन लिखकरं उत्तरप्रदेश शासन से और भारत सरकार से पुरस्कार प्राप्त किया। आधुनिक तेलुगु साहित्य–प्रवृत्तियाँ, तेलुगुकाव्य परंपराएँ लिख कर भारत सरकार से पुरस्कृत हुए । नेशनल बुक ट्रस्ट दिल्ली की ओर से "पूर्णकुंभ" नामक उपन्यास का हिंदी से तेलुगु मे अनुवाद किया। श्री डोंगरेजी महाराज के श्री रामायण रहस्य, श्री गोपीगीत, श्री ब्रह्मचारी जी के महावीर हनुमान आदि कई ग्रंथों को तेलुगु में अनुवाद करके प्रकाशित किया ।

श्री सत्यनारायण जी ने कई सालों तक नर्सपूर तथा आस पास के कई गाँवो में भगवन्नाम का प्रचार किया और धार्मिक अनुष्ठानों का संचालन किया। इस समय वे अपन सारा समय अनुष्ठान और धार्मिक ग्रंथों के पठन–पाठन में बितारहे हैं।

श्री सत्यनारायण जी श्री सियारघुवरदासजी और संत प्रभुदत्त जी ब्रह्मचारी को अपना विद्या गुरूमानते हैं और श्री रामशरणजी महाराज को अपना मंत्र गुरू मानते हैं।

भगवान से प्रार्थना करते है कि वे श्री सत्यानारायण जी को स्वस्थ रखें और वे अपना शेष जीवन भगवत् सेवा में बिताकर सफल बनावें।

– लक्ष्मण मूर्ति

आंध्र–प्रदेश – श्री हनुमान चालीसा का प्रचार

श्री अवधूतेंद्र स्वामी

आंध्र–प्रदेश में सन् १९५० से गोस्वामी तुलसी दास कृत श्री हनुमान चालीसा का प्रचार देखने में आ रहा है। इस का एक मात्र श्रेय ब्रह्मलीन श्री सिया रघुवरदास जी को ही दिया जाना चाहिये। वे. प.गो.जिले अत्तिलिगाँव के रहनेवाले थे। वे पूर्व आश्रम में आचंट विश्वेश्वरराव नाम से पुकारे जाते थे । पहले वे नाटकों में श्री कृष्ण का अभिनय किया करते थे। संगीत सीखने की इच्छा से ग्वालियर गये। वहाँ संगीत सीखते समय– जन्मांतरीय संस्कार वश परिवार के प्रति विरक्ति होने से सीधे अयोध्या पहुँचकर नामी संत श्री जानकीवल्लभशरणजी महाराज से मंत्र दीक्षा लेकर श्री सिया रघुवरदास नाम से प्रसिद्ध हुए । गुरूजी के आदेश से उत्तर भारत के तीर्थों में भ्रमणकर के फिर से अयोध्या पहूँचे । उस समय उनके जीवन में जो घटना घटित हुई – उसकी चर्चा श्रीराम पांडेय जो बिहार प्रांत के हैं इस प्रकार की– वे एक बार आंध्र प्रदेश के प.गो.जिले के भीमवरम नामक नगर में – जो प्राकृतिक चिकित्सा केंद्र है – वहाँ पर अ.भा.प्रा. चिकित्सा सम्मेलन हुआ। उस में कलकत्ते के कई मित्रों के साथ सम्मिलित होने गये। सम्मेलन के बाद आश्रमके जीवन और चिकित्सा पद्धति देखने के निमित्त दस दिन केलिये वे रहगये ।

ऐसे शांत वातावरण में देखा कि आश्रम के एक कक्ष में एक महात्मा कुछ भक्तों से घिरे बैठे हैं। एक मित्र ने उनसे मिलाया । ये थे आंध्र के संगीताचार्य श्री अवधूतेंद्रसरस्वती। हिंदी में ही बात–चीत हुई । मैं रोज महात्मा के पास जानेलगा। एक दिन देखा कि – वे विद्यार्थियों और रोगियों को हनुमान चालीसा बाँट रहे हैं जो तेलुगु लिपि में छपी हुई हैं। दो प्रतियाँ मुझे भी दीं। पूछनेपर उहोने बताया– हनुमान चालीसा तेलुगु लिपिमें छपाकर वितरित करनेके पीछे उनके जीवन का रहस्य है। उन्होंने आगे कहा – "जब मैं बिहार और उत्तर प्रदेश में भ्रमण कररहा

था और वहाँ के साधु–संतों की सत्संगति से लाभ उठारहा था, तभी अयोध्याकी बात है, मुझे लकवा मार गया। उठना – बैठना तो दूर, मेरी वाणी भी बंद होगही थी । एक भक्त द्वारा डाक्टर बुलाया गया। उसने रोग को असाध्य बता कर चिकित्सा करने से इनकार कर दिया। मेरे भक्त से उसने कहाकि मुझपर व्यय करना व्यर्थ है।

उसी दिनकी बात है। अयोध्या के उस मठ के महात्माने जिसमे मैं ठहराथा, मुझे सान्त्वना देते हुए एक हनुमान चालीसा मेरे हाथ मे दी और कहा– महात्मन् आप दुखी नहोइये । आप इस का पाठ कीजिये, आपका कल्याण होगा। यदि मरे भी तो आप पुण्य धाम में हैं।

जब मैं ने उन को संकेत से बतायाकि, मेरी वाणी भीतो चलीगयी, पाठ कैसे करूँगा, तो उन्होंने कहा कि मनही मन पाठ कीजिये"।

मैं लेटे– लेटे यही करने लगा। २४ घंटों में जब जगा होता, यही करता। फल आश्चर्य जनक हुआ । तीन महीने में बिना औषधि सेवन के ही चलने–फिरने में समर्थ होगया और छठवें महीने में मेरी वाणी भी खुलगयी। उसीके बाद मैने तेलुगु लिपिमें हनुमान चालीसा छपवाया । हर वर्ष सहस्रों प्रतियाँ बाँट ता हूँ । रोगीभी लाभ उठाते हैं और विद्यार्थी भी।

महात्मा की रोगमुक्ति की बात से मुझे चालीसा की ये पंक्तियाँ याद हो आयी :–

नासैरोग हरे सब पीरा, जपत निरंतर हनुमत वीरा ।
यह सत बार पाठकर कोई, छूटहि बंदि महासुख होई ।।

फलतः हनुमत् चरित्र की महिमा, रहस्य और पाठ का फल सब आपके हाथों मे है। इस की हर चौपाई मंत्र है। श्री रामके प्रिय भक्त, पवनकुमार, केसरीनंदन सब का मंगल करे।

– श्री हनुमत्त् महिमा और चालीसा पृ ७–८

श्री स्वामीजी संकीर्तन भवन, झुसी, प्रयाग के संत शिरोमणि श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी जी की सेवा मे कई साल रहें । सन् १९४८ में इस चालीसा के हिंदी अनुवादक को उन्होंने आंध्र से लेजाकर श्री ब्रह्मचारी जी के आश्रम मे रखदिया। अनुवादक ने वहीं पर दस साल तक रहकर अपनी सारी शिक्ष प्राप्त की। वे मेरे विद्यादाता

रहे। जाडें में अस्वस्थ होजाने से वे श्री ब्रह्मचारी जी से कहकर आंध्र मे चले आये। गुंटूर के रामनामक्षेत्रम कों अपना केंद्र बनाकर मोटर कार में ध्वनि यंत्र लगाकर सभी जिलों में, सभीनगरोमें और सभी गाँवों में घूम--घूमकर अपनी संकीर्तन मंडली के साथ भगवन्नाम संकीर्तन, श्री हनुमान चालीसा का प्रचार अैर वासुदेवनाम मंत्र का प्रचार किया । १९५० से सन् १९७५ तक पूरे पच्चीस वर्ष चक भगवन्नाम का और श्री हनुमान चालीसा का प्रचारकिया। कई जगहों पर भगवन्नाम संकीर्तन के सप्ताह और सप्तसप्ताहों का सुचारूप से संचालन किया।

गुंटूर, विजयवाडा, ओंगोल, भीमवरं, हैदराबाद उन के प्रचार के केंद्र रहे। सन् १९७५ में सिकिंदराबाद मे रात में संकीर्तन कर के हिमायत नगर के अवधूत मंदिर में लौटकर अकेले विश्राम करते रहे। रात में शौचालय गये। वहीं पर सिरोवेदना से बेहोश होकर गिर पड़े और चल बसे । सबेरे शौचालय से बाहर निकाले गये। उसी दिन विजयवाडा लेजाकर श्री कृष्णा नदी में जोर दार जूलूस के साथ निमज्जित किया गया । उनकी पावन स्मृति में भीमवरंम में मीनाबिस्कुट कंपनी के मीनाक्षी दंपतिने संगमर मर मूर्ति की स्थापना करायी। कारंचेडु में उनके शिष्य पी. श्रीराम ने भी जयपूर से संगमरमर मूर्ति बनवाकर लाकर अवधूतेन्द्र भक्त संधमें स्थापित की । आज भी कई जगह उनके शिष्य भगनन्नाम संकीर्तन के प्रचार और श्री हनुमान चालीसा के प्रचार में लगे हुए हैं।

आज आंध्र में जो श्री हनुमान चालीसा की प्रस्तकें मिलती हैं, उन में एक रूपता नहीं। कई भक्त कवियों नें तेलुगु भाषा में गेय रूप में पद्य रूपमें गद्य रूप में चालीसा के अनुवाद किये हैं और करते जारहे है। लेकिन तुलसीकृत हनुमान चालीसा का जो महात्व है वह अन्य किसी चालीसा को प्राप्त नहीं। कारण तुलसी नेअपनी चौपाईयों में मंत्रशक्ति भर दी है। इस कारण तुलसी की चालीसा के पाठ से जोफल मिलता है वह अन्य रूपांतर चालीसाके पाठ से नहीं मिलता। श्री हनुमान चालीसा का प्रामाणिक रूप गीताप्रेस, गोरखपूर से प्रकाशित मे ही मिलता है। इस कारण उसी को प्रमाणिक मान कर पाठ कर लाभ उठानेका प्रयत्न करना चाहिये ।

– शिवजी महाराज

गोस्वामी तुलसीदास – हनुमान चालीसा

– एम. एस. पराशर

रामचरित मानस, हनुमान चालीसा एवं कई अन्य ग्रन्थों के रचयिता परम पूज्य गोस्वामी तुलसीदास के माता पिता हुलसी तथा आत्माराम थे । उनका जन्म अभुक्त मूल नक्षत्र में हुआ । वह नक्षत्र अत्यंत अशुभ माना जाता था । उनके जन्म के तुरंत उपरांत उनकी माता हुलसी का निधन हुआ। इसे अत्यंत अशुभ मान कर उनके पिता ने तुलसीदास को मुनिया नामक अपनी दासी को दे दिया। मुनिया की मृत्यु के बाद वे नहररिदास नामक एक संत महात्मा के साथ रहने लगे। वे राम के बड़े भक्त थे। तुलसी दास पर नरहरिदास की अनन्य राम भक्ति का अत्यंत प्रभाव पड़ा । तुलसी दास ने जब से बोलना सीखा उनके मुंह से सब से पहला शब्द 'राम' निकला । इसी लिए लोग उन्हे "रामबोला" के नाम से संबोधित करते थे। नरहरि दास ने उनका उपनयन संस्कार अयोध्या में कराया । वहाँ से वे तुलसीदास को विद्याध्ययन के लिये काशी के प्रख्यात विव्दान शेष सनातन के पास छोड़ कर गये। तुलसीदास उनके पास भृत्य शिष्य के रुप में रहा करते थे। गुरूजी के घर के सबकाम किया करते थे और साथ ही साथ विद्यार्जन करते थे। इसी लिए उन्हें भृत्य शिष्य कहा जात था । उस समय लोगों को भूत प्रेत पर अत्यंत विश्वास था। अंतिम समय में काशी में करवट लेने देश भर के लोग वहाँ आते थे । लोगों का विश्वास था कि देश भर के भूत वहां रहा करते हैं । तुलसी दास भी भूत प्रेतों पर विश्वास करते थे। पर वे अपने मित्रों से कहा करते थे कि राम मंत्र सिद्धमंत्र हैं। नरहरिदास बाबा ने उन्हें बताया था । वे कहते थे कि जिसके हनुमान और अंगद जैसे महावीर सैनिक है जो नाथों के नाथ विश्वनाथ के भी इष्टदेव उन्हीं राम मंत्र को क्यों न जपे। तुलसी दास के परममित्र गंगाराम उनके सहपाठी थे। तुलसी ने उनको बताया कि राम जैसे बड़े भगवान को कष्ट देने की आवश्यकता नहीं । जब उनके परम सेवक बजरंगबली से उन्हें रक्षा मिल जाती है। आधी रात को एकदिन उनकी कोठरी की छत पर ब्रह्मराक्षस पीपल की डाल पर बैठा हुआ दिखायी दिया बस, उन्होंने राम राम बजरंग बजरंग जपना शुरू किया। एक पंक्ति भी बन गयी "भूत पिशाच निकट नहीं आवै महावीर जब नाम सुनावे। संकट से हनुमान छुडावै मन क्रम वचन ध्यान जो लावै"।

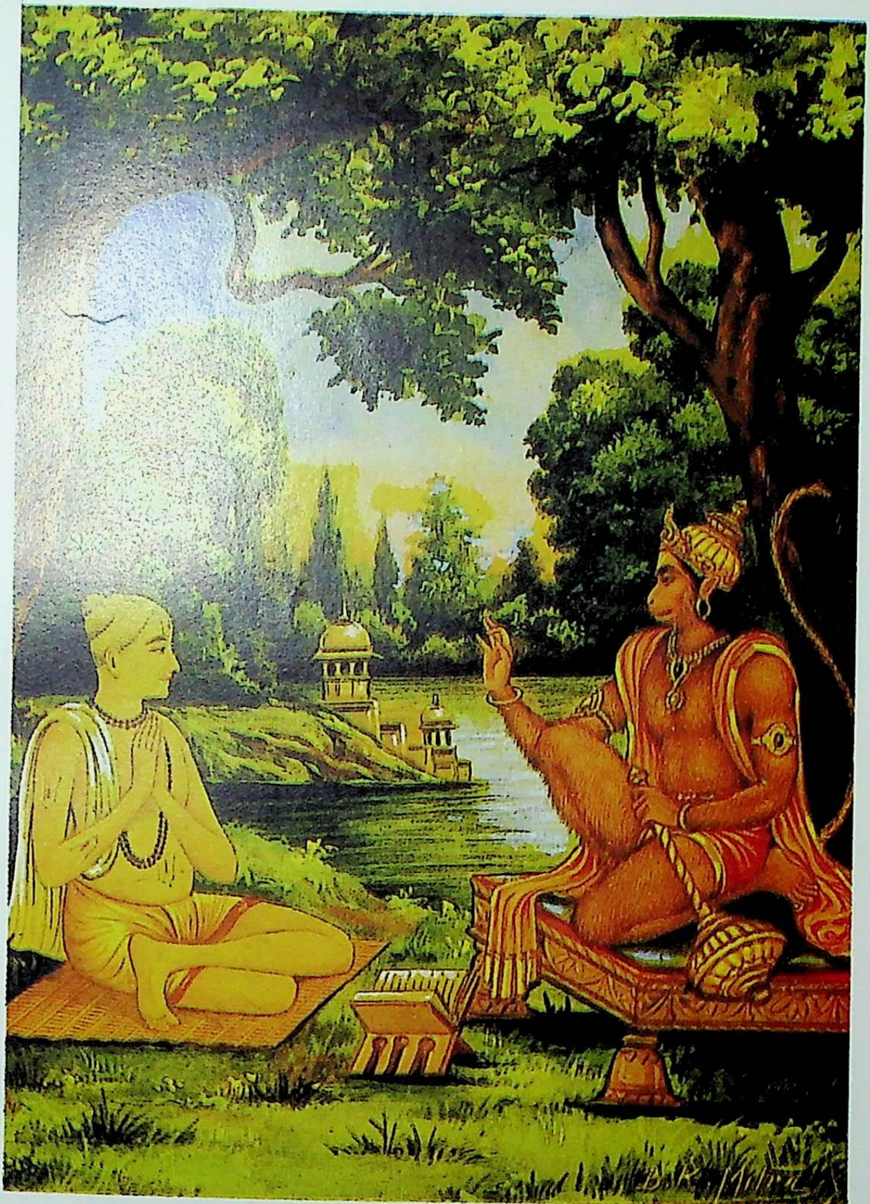

गोस्वामी तुलसीदास पर अनुग्रह करते हुए श्री आंजनेय प्रभु

एक उनका सहपाठी बटेश्वर दत्त जो शास्त्र अध्ययन में तुलसी की बराबरी नहीं कर सका । वह प्रत्येक अमावास्या की रात को हरिश्चंद घाट के श्मशान पर कापा लिक से भूत विद्या सीरखने के लिए जाता था। तुलसी दास के दो मित्रों ने उनसे कहा कि बटेश्वर ऐसा कहता है कि अमावास्या की आधी रात को श्मशान के शिवजी के मंदिर मे सारे भूत एकत्रित होते हैं और भूतनाथ की आरती उतारते है । उस समय जो कोई वहाँ जाकर शंख बजा दे तो सारे भूत उसके वश में हो जाएं पर कोई बजा ही नहीं सकता। बड़े बड़े सिद्ध भी यह साहस नहीं कर सकते।

तुलसी दास को ताव आगया – उसने सौगंधखाकर कहा कि बटेश्वर से कहना अब की अमावास्यिा की रात मेरा शंख घोष रामजी की दया से वे सुन लेंगे। उनके चेहरे पर निश्चय की स्फटिक शिलाजम गई थी। उन्होंने आचार्यपाद शेषसनातन से आज्ञा ली और कहा "भूत पिशाच बजरंग बली से बढकर नहीं है। जिसकी भक्ति राम के चरणों ने यह कंहकर आज्ञा दी" यदि तुम्हारी भक्ति अटल है तो भय से भूतनाथ तुम्हारी रक्षा करेंगे। जा ओ मेरा आशीर्वाद है"। तुलसी ने अमावस्या की आधी रात को हरिश्चंद्र घाट के श्मशान में जाकर शंख बजाने का निश्चय किया। वहां बटेश्वर भूतविद्या सीखने जाता था। उसको भी तुलसी की बात मालूम हो गयी। तुलसी ने उससे कहा "देखूंगा भूत बड़े है या राम सेवक कपि केसरी किशोर" तुलसी ने कलम और कागज उठा लिया और लिखना आरंभ किया – हनुमान चालीसा

जै हनुमान ज्ञान गुन सागर जै कपीस तिहुँलोक उजागर ।। मध्यरात्रि तक हनुमान चालीस पूरी की।

गुरू पत्नी से आशीर्वाद लिया और शंख भी मांग लिया। उनकी कल्पना शक्ति के अनुसार उन्हें ब्रह्मराक्षस के बजाय हनुमान जी अपनी कल्पना में बढ़ते हुए दिखाई देने लगे। हनुमानजी के दायें बाये कंधों पर राम लक्ष्मण बैठे थे दोनो ही अपने अपने धनुषों पर बाणचढाएं मानो तैयार बैठे है। तुलसी का मन अपनी कल्पना से प्रसन्न हो गया। "जहाँ राम हैं वहाँ भय कहा? भय ही तो भूत है" । राम लक्ष्मण मानो कहरहे थे चलरे राम बोला चल, आज यह दिखा दे कि तेरा राम बल अनंत भूतों से अधिक शक्तिशाली और विशाल है।

अमावस्या की आधीरात को तुलसी यह जपते हए हरिश्चंद्र घांट के श्मशान की ओर चल पड़े "जय हनुमान ज्ञान गुन सागर, जय कपीस तिहुँलोक उजागर" गंगा तट पर जलती हुई चिता के पास बटेश्वर और उसके गुरूकापालिक बैठे हुए दिखाई दिये। विशाल शिवलिंग के समक्ष खड़े होकर पूरी शक्ति के साथ तीन बार अपना शंख बजाया। एक कड़कडातीहुई आवाज आई "कौन है रे"। आत्म विश्वास से जगमगाते हुए तुलसी ने शिवजी के चबूतरे से कड़क कर जवाब दिया "रामजी का खास सेवक तुलसी दास"। तुलसी श्मशान से यों घर लौट रहे थे मानों त्रिलोक विजय करके आरहे हैं। उस समय उन्हे न जाड़ा सता रहा था और न किसी प्रकार का भय। आस्था प्रबल होकर उन्हें राम मय बना रही थी। यह था उनकी राम और हनुमान भक्ति का प्रमाण। उस समय वे पंद्रह सोलह वर्ष के बालक रहे होंगे। उस दिन से उनसे बड़ी आयुवाले विद्यार्थी भी उनका विशेष आदर करने लगे। गुरूजी उन्हे पुत्रवत् प्यार करने लगे। गुरू पत्नी ने उनसे भृत्य का काम लेना बंदही कर दिया।

– अमतृलाल नागर

"मानस के राजहंस" के आधारपर

साभार

आत्मनिवेदन

भगवान राम के चरित्र केलिये जैसे रामायण है, कृष्ण के चरित्र के लिये जैसे भागवत है, वैसे ही श्री हनुमानजी के चरित्र केलिये पराशर संहिता है। तेलुगु भागवत के कवि पोतना ने लिखा है " तेलुगु में वेदव्यास के महाभारत को कवित्रय (नन्नय्या, तिक्कना, एर्राप्रगड) ने पद्यानुवाद किया है। रामायण को कई कवियों ने अनुवाद किये हैं पर भागवत का अनुवाद किसी ने नहीं किया है। संयोग से भागवत को अनुवाद करने का मेरे पूर्व जन्म पुण्योदय से मुझे मिला है"। ठीक उसी भांति श्री हनुमान जी के बारे में अब तक किसी ने कलम नहीं चलायी। श्री हनुमान चालीसा का पाठ करते करते मेरे मन में स्फुरणा हुई कि चालीसा और हनुमान के बारे में मैं कुछ क्यों न लिखूं । फिर सोचा "कहां अत्पज्ञ मैं और कहां श्री हनुमान के अगाध और अनंत चरित्र"। धीरे धीरे श्री हनुमान के संबंध में हिन्दी-तेलुगु और संस्कृत भाषाओं में उपलब्ध सामग्री को मंगाया। सबका अध्ययन किया। कई विद्वानों से संपर्क स्थापित किया। पराशर संहिता के प्रकाशक डॉ अन्नदानं चिदंबर शास्त्री से नागरी लिपि में प्रकाशित मूल ग्रन्थ जो हनुमानजी के बारे में विज्ञान सर्वस्व है उसे मंगाकर पढ़ा । नयी नयी बाते सामने आगयी । वाल्मीकि रामायण के उत्तर कांड में श्री हनुमान के बारे में काफी सामग्री देखने में आयी है। कई संहिताओं में कई नये विषय देखने को मिले हैं। लेकिन श्री हनुमानजी के विषय में एकरूपता नहीं । पुराणों में तथा अन्य ग्रंथों में सामग्री बिखरी पड़ी है। मैं श्री हनुमान जी की प्रेरणा से लिखता गया और मित्रों को सुनाता गया। आखिर मित्रों के प्रोत्साहन से पुस्तक रुप में प्रकाशित किया। १४-६-९४ के दिन तेलुगु भाष्य ग्रंथ के विमोचन का उत्सव संपन्न हुआ । चार महीने के अंदर सब प्रतियां समाप्त हो गयी। दूसरा संस्करण प्रकाशित किया। इस भाष्य ग्रंथ को पढ़ने से कई लोगों को कई अनुभव हुए और कई लोगों की कामनाएं पूरी हुई ।

श्री शिव सत्यनारायण जी ने चालीसा तेलुगु भाष्य का हिन्दी में अनुवाद कर मुझे भेज दिया। मैं सोचता रहा इसे कहां छपाया जाय। एक दिन दीप्ति प्रेस के

प्रबंधक श्री रतन बाबू से बात हुई तो उन्होंने झट से कहा हमारे पास हिन्दी कंप्पूटर है। हम करायेंगे । हिन्दी में पुस्तक छपने लगी—धनुर्मास के संबंध मे. प.प. श्री त्रिदंडी चिन्न जीयर स्वामी आये हुए थे उन से मिलकर उन से मंगलाशासन मांगा तो तो उन्होंने कृपाकर दे दिया। श्री तुलसी साहित्य के विशेष मर्मज्ञ डॉ. रामनिरंजन पाडेय, प्रो. प्रमोद गणेश लाले, प्रो. भीम सेन निर्मल, प्रो. माधवराव डॉ. विद्याधर द्विवेदी, श्री एम. सदाशिव राव जी को अभिमत लिख भेजने के लिये भाष्य ग्रंथ भेजे गये तो सबने अपने अपने विचार प्रकट किये। मैं उन सबको अपनी कृतज्ञता का अभिवंदन करता हूं। प्रत्यक्ष रुप से और परोक्ष रूप से जिन सज्जनों ने इस विषय में मुझे सहयोग दिया है, उन सबके प्रति मैं अपना आभार प्रकट करता हूं । दीप्ति प्रेस के प्रबंधक श्री रतन बाबू और प्रेस के कार्यकतीओं को मैं अपना साधुवाद देता हूं। इस ग्रंथ के बारे में यदि किसी सज्जन को किसी प्रकार की शंका या संदेह हो तो लिखने पर उसे दूर करने का प्रयत्न करूंगा । इस में कहीं कोई त्रुटि रह गयी तो सुझाव देने पर अगले संस्करण में सुधार करूंगा ।

भक्त लोग इस भाष्य ग्रंथ को पढ़कर सर्वदेवता स्वरूप श्री हनुमान जी के कृपा पात्र बनें और लाभ उठावें तो मैं अपने इस श्रम को सफल और सार्थक समझूंगा ।

सेवाभिलाषी

– लक्ष्मण मूर्ति

अवतारिका

मानव जन्म और भगवान के भजन की आवश्यकता :

जंतूनां नरजन्मदुर्लभमतः पुंस्त्वं ततो विप्रता
तस्माद्वैदिक धर्ममार्ग परता विद्वत्वमस्मात्परं
आत्मानात्म विवेचनं स्वनुभवो ब्रह्मात्मना संस्थितिः
मुक्तिर्नो शतकोटि जन्म सुकृतैः पुण्यैर्विना लभ्यते ।।

– विवेक चूडामणि –2

मानव जन्म का मिलना दुर्लभ है । चौरासी लाख जीव राशियों में भगवान के समान मानवको समान स्थिति प्राप्त है । जीवों मे उत्तमोत्तम है मानव । भगवान को समझने योग्य जन्म तो मानव का जन्म ही है । ऐसे नर जन्म को पाकर भी जो मानव भगवान का भजन नहीं करता, वह द्विपाद पशु ही कहलाता है । युक्ता–युक्त विवेक शील ज्ञान संपन्न मानव को उस का सदुपयोग कर आत्मानात्म विवेक शील बनकर भगवान की आराधना करनी चाहिये ।

इस कलियुग में यज्ञ–यागादि कर्म–जप–तप आदि करना सुलभ नहीं है। इस युग में तो भगवन्नाम संकीर्तन और भगवान का नाम–स्मरण सुलभ हैं । "कलिसंतरणोपनिषद्' में कहा गया है " हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम्, कलौ नास्त्येव, नास्त्येव, नास्त्येव गतिरन्यथा ।" स्पष्ट है कि इस कलियुग में भगवन्नाम स्मरणबिना मोक्षसाधन केलिये अन्य उपाय सुलभ नहीं है । मन की एकाग्रता केलिये नामसंकीर्तन की आवश्यकता है ही । नवविध भक्ति पध्दतियों में संकीर्तन एक है। मनकी एकग्रता केलिये और भवरोगनिवारण केलिये दिव्य ओषधि तो एक मात्र भगवन्नाम संकीर्तन है । स्वामी शिवानंद जी ने कहा Sankirtan Yoga is the Sweet, safest and quickest path to God realisation - Allopathy, Ayurvedopathy, Naturopathy and Homeopathy all may fail but Namopathy never fails. भलेही सभी पंथ अपने धर्म और कार्य को करना छोड दे पर भगवन्नामोपति तो स्मरणकरने वालों को अवश्य तार देगा ।

ऐसे भगवन्नाम स्तोत्रों और संकीर्तनों में श्री हनुमानचालीसा एक है । इसे हिन्दी की अवधी भाषा में गोस्वामी तुलसीदास ने लिखा है ।

श्री गोस्वामी तुलसी दास : इन का जन्म यमुनातट के राजापुर नामक गाँव में पंद्रहवीं शताब्दी में (१४९७) में ब्राह्मण परिवार में हुआ । इन के पिता आत्माराम दुबे और माता हुलसी थे । ऐसा कहा जाता है कि इन के जन्म के पश्चात् इन को माता–पिता ने त्याग दिया था । इन के काव्यों में कई स्थानों पर माता–पिता द्वारा त्यागे जाने का उल्लेखमिलता है । इन के माता–पिता की मृत्यु इन के जन्म के साथ ही होगई हो ।

"जनक जननि तज्यो जनमि,

माता–पिता द्वारा त्यागे जाने पर इन्हे बडे–बडे कष्ट झेलने पडे । द्वार–द्वार भटकना पडा, जैसाकि उनकी लिखी एकपंक्ति (कवित्त रामायण) से प्रकट होता है कि–

"बारे ते ललात बिलखात द्वार–द्वार दीन"

इनके गुरू श्री नरहरिदास थे जिन्होने इनकी शिक्षा –दीक्षा का भार लेलिया था और उन्ही के प्रसाद से तुलसी के हृदय में राम–नाम–प्रेम का अंकुर उत्पन्न हुआ । ऐसा संकेत उन्होने कई बार दिया है ।

"बंदौ गुरू–पद कंज, कुपासिंधु नररूप हरि ।
"मैं पुनि निजगुर सन सुनी कथा सूकर खेत ।

संभव है इन्ही गुरु की कृपा से उन्हे तुलसी नाम प्राप्त हुआ । कारण इन्होने स्वयं अपना नाम 'राम बोला' एक स्थान पर बतलाया है ।

"राम कौ गुलाम नाम राम बोला राख्यौ राम"

तुलसी का विवाह दीन बंधु पाठक की पुत्री रत्नावली से हुआ था । यह प्रसिद्ध है कि इन्हे अपनी पत्नी से बहुत अधिक प्रेम था । ये एकक्षण के लिये भी अपनी पत्नी से विलग न होते थे । एक बार इनकी अनुपस्थिति में इनके साले आकर इनकी धर्मपत्नी को मायके लिवालेगये । तुलसी जब घर आये तो इन्हे सब समाचार ज्ञात हुआ । ये बडे दुःखी हुए और उसी समय अपनी पत्नी को लेआने चल पडे । उस

समय घन घोर वर्षा हो रही थी । गंगा में भयंकर बाढ आई हुई थी । किन्तु इन्होने कुछ भी चिंता नहीं की। नदी को तैर कर पार किया और एक सांपकी सहायता से चढकर घर के आंगन में आधीरात के समय पहुँचगये । रत्नावली को यह सब देखकर महान आश्चर्य हुआ । उन्होने यह कल्पना भी नहीं कीथी कि इतना साहस तुलसीदास करसकेंगे । रत्नावली बडी विदुषी और लज्जाशील स्त्री थी । उन्होने इस प्रकार पति को विषयानुरक्त देखकर एक्र करारी चोट दी जिससे तुलसी एक नवीन और अनोखे तुलसी बनगये – उन्होने कहा –

'लाज न आवत आपको, दौरे आयहु साथ ।
धिक् धिक् ऐसे प्रेम को, कहा कहौ नाथ ।।
अस्थि चर्ममथ देह ममता मैं जैसी प्रीति :
तैसी जो श्रीराम में होतन तौ भव भीति ।।

इन इब्दों ने तुलसी के मानस पर पडेहुए झीनेपट को टूक टूक करदिया और उनको अपना साक्षात् वास्तविक स्वरू प दिखाई देने लगा । उसी समय उन्होने अपनी धर्मपत्नी कोही नहीं वरन् गृहस्थाश्रम को भी सदैव केलिये नमस्कार कर लिया। चित्रकूट पहूँचे । वहाँ सारा जगत सियाराममयदीखा –

"सियाराममय सब जग जानी । करहु प्रनाम जोरि जुग पानी "

कई साल तक तीर्थयात्रा की । श्री हनुमानजी की कृपा से १५५0 ई.को इन्हें श्रीराम के दर्शन हुए । इन्होंने १५७५ ई.में श्रीराम नवमी मंगलवार के दिन राम चरित मानस की रचना प्रारंभ कर दो साल सात मास छब्बीस दिनों में लिखा है। इस में भक्ति रस की प्रधानता है । इन्होंने अध्यात्म रामायण का अनुसरण किया है । संस्कृत भाषा में न लिख कर सर्व साधारण जन भाषा अवधी में लिखा है । उत्तर भारत में ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं मिलेगा जो राम चरित मानस से परिचित न हो । यह एक प्रकार से धर्म शास्त्र है । इसे पढ़कर बहुत से लोग भवसागर से पार हो गये। अवधी भाषा अयोध्या के आस पास बोली जाती है । इसे अवधूत भाषा भी कहते हैं । तुलसी की भाषा तुक प्रधान हैं याने चरणों के अंत में तुक रहता है । वह सुनने योग्य रहता है । तुलसी के लिखे कई ग्रंथ हैं पर उन में रामचरित मानस, विनय पत्रिका, गीतावली, हनुमान बाहुक, हनुमान चालीसा आदि उल्लेखनीय

हैं । कई सालों तक तप करके अपनी रचनाओं में मंत्र शक्ति भर दी है । १६२३ ई.में श्रावण शुक्ल सप्तमी शनीचर के दिन करीब १२६ साल जीकर अपनी इह लोक लीला समाप्त की।

कलौ कपिः कलियुग के आये अभी छः हजार साल नहीं बीते । धर्म एक पैर पर भी नहीं , चल ही नहीं रहा हैं । सत्य, शौच, दया आदि शब्द निघंटु तक सीमित हैं । विश्वास नहीं रह गया । विज्ञता, विवेक की शक्ति लुप्त हो गई । परद्रव्य का अपहरण, हिंसा, आतंक आदि आसुरी लक्षण बढ़ गये हैं । संकट का काल आसन्न है । आज का मानव आलसी है और सरल मार्ग का अन्वेषण करता है। सुख के सिवा मेहनत करना नहीं चाहता । अधिकार चाहता है पर कर्तव्य को नहीं जानता । फल चाहता है पर सेवा करने को तैयार नहीं रहता । सद्यःफल देने वाले के सिवा अन्य किसी बात का विश्वास नहीं करता । प्रत्यक्ष के सिवा अप्रत्यक्ष पर विश्वास नहीं करता । ऐसे विचित्र स्वभाव वाला होकर भी महा पुरुषों के प्रति विश्वास न होने पर भी स्वार्थ प्रेरणा से या पाप भीति से भगवान के ध्यान के लिये तैयार होता है । पुराण कहते हैं कि भगवान भक्त की परीक्षा करते हैं पर आज भक्त भगवान की परीक्षा करना चाह रहा है । भगवान की कृपा से कामना पूरी हो गई तो भगवान है अन्यथा भगवान नहीं है । चुप भी नहीं रहता । भगवान की निंदा करने लगता है । आलोचना करता है और लोक को बताने लगता है । इस कलिकाल में संघटित होने वाली यही विचित्र विपरीत स्थिति है । ऐसे विचित्र विपरीत दृष्टि रखने वाले मानव के ऊपर भी कृपा करने वाले भक्त सुलभ और दयालु एक ही एक है वह और कोई नहीं; श्री हनुमानजी । इसी से "कलौ कपिः" कहे गये हैं ।

आंजनेयः पूजितश्चेत्, पूजितास्सर्व देवता : ।
हनुमन्महिमाz शक्यो ब्रह्मणापि न वर्णितुम् ।।

हनुमान की महिमा ही ऐसी है जिसे ब्रह्मा भी वर्णन नहीं कर सकते । उनकी पूजा करने से सभी देवताओं की पूजा हो जाती है।

यत्रास्ति भोगो नहि तत्रमोक्षः
यत्रास्ति मोक्षो नहि तत्र भोगः ।

श्री मारुतेस्सेवन तत्पराणां
भोगश्चमोक्षश्चकरस्थ एव ।

— शौनकसंहिता

जहाँ भोग रहता है वहाँ मोक्ष नहीं रहता और जहाँ मोक्ष रहता है वहाँ भोग नहीं रहता । लेकिन हनुमानजी के भक्तों को तो भोग और मोक्ष दोनों की प्राप्ति सुलभ हैं ।

रामायण के महायज्ञ में राम यजमान बने, सर्वकार्य निर्वहणपरतंत्र श्री हनुमानजी ऋत्विक्र बने । श्री हनुमान एक मंत्री (सुग्रवि के) सेनाधिपति (वानरसेना), सलहाकार (विभीषण को अभय देते समय) दौत्यनीति वेत्ता (हनुमान से दूतकार्य) महासत्व (वारधि लांघने में) कार्यशीली (संजीवनी पर्वत हरण में) घन कर्य निर्वहण तंत्रज्ञ (अहि रांवण के कारागृहसे राम लक्ष्मण को छुडाने में) महान अर्थशास्त्रवेत्ता (कोशल राजा के कोशागार को भरने में) अपने वचन पर सुदृढ रहने वाले सत्य संध (ययाति रक्षण में) विनय शीली (अपने से कमज़ोर जांबवान आदिको आदर करने में) कर्तव्य पालन करने में महा तपस्वी (श्रीराम के दास्य में) सत्य शौर्ययुक्त, गान कलानिधि और प्रज्ञा धुरंधर हैं। अपने सारे जीवन को दूसरों की सेवा में व्यतीत करने वाले निस्वार्थ प्राणी हैं । वे हमारे लिए आदर्शवान हैं । यही हनुमान का रहस्य है । यही हनुमान का धर्म है । इस हनुमतत्व को समझ कर, एतद्गुणसिद्धि के लिए नित्य साधक बनकर, उनके मार्ग पर मनसा–वाचा–कर्मणा चलने में ही सच्चे अर्थ में हनुमान की सेवा है । इस त्रिमूर्त्यात्मक हनुमान की कृपा प्राप्ति के लिए यही एक मात्र साधना है ।

श्रीपराशर संहिता :– श्रीराम चरित्र के लिए जैसे रामायण है श्रीकृष्ण चरित्र के लिए जैसे भागवत है वैसे ही हनुमान के चरित्र के लिए पराशर संहिता है । वह श्री हनुमान के विषय में सर्वस्व है । पराशर शक्ति के पुत्र हैं । इसकी माता अदृश्यंती है। दादा महर्षि वशिष्ठ हैं ; पुत्र महर्षि व्यास हैं ; शिष्य मैत्रेय हैं ।

श्री हनुमान का जन्म :– लोकानुग्रहकांक्षा से राक्षस संहारार्थ श्रीराम कार्य निर्वाह के लिए श्रीहनुमान का आविर्भाव हुआ । ये अजंना केसरी के पुत्र हैं । अंजना

केसरी वानर की पुत्री है और कुछ लोग कहते हैं कुंजर नामक वानर की पुत्री है। इस सम्बन्ध में कई कथाएँ प्रचलित हैं ।

कुछ संदर्भों में कहा गया है (The Hindu Saturday March 13, 1993) - young world - केसर बडे दयालु, साधु, महान शिव भक्त असुर, प्रह्लादादि साधु राक्षस की कोटि में आता है । संतान हीन होने से शिवजी की प्रार्थना करने पर शिवजी ने उन्हें वैसा वर दिया कि अजंना नाम की पुत्री पैदा होगी और भविष्य में इन्हें महान वीर पुत्र पैदा होंगे । बाद में असुर केसर ने वानर राजा केसरि के साथ अपनी पुत्री का विवाह किया। इन्हीं के गर्भ से हनुमान पैदा हुए ।

जयंती :– जैसे हनुमान के जन्म के सम्बन्ध में विभिन्न कथाएँ प्रचलित हैं वैसे ही जन्म तिथि के बारे में भी कई प्रकार के वाद प्रचलित हैं । कुछ लोग चैत्र शुद्ध पूर्णिमा, चैत्र शुद्ध एका दशी, वैशाख कृष्ण दशमी, कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी और कुछ लोग कार्तिक पूणिमा मानते हैं । जो भी हो, श्रीहनुमान के चरित्र का जो प्रामाणिक ग्रंथ पराशर संहिता है, उसमें श्रीहनुमान वैशाख कृष्ण दशमी, शनीचर के दिन, पूर्वाभाद्र नक्षत्र में वैधृतीयोग में मध्याह्न समय में कर्काटक लग्न में कौंडिन्यस गोत्र में पैदा हुए ।

वैशाखे मासि कृष्णायां – दशमी मंद संयुता ।
पूर्वप्रोष्ठपदायुक्ता – तथा वैधृति संयुता ।।
तस्यां मध्याह्नवेलायां – जनयामास वै सुतम् ।
महा बलं महा सत्वं विष्णु भक्ति परायणम् ।।

– पराशर संहिता – छठा पटल

विद्याभ्यास :– श्रीहनुमान के गुरूसूर्य हैं। उदायाद्रि और अस्ताद्रि दोनों पर अपने दोनों पैर रख कर वेद वेदांग और सभी शास्त्रों को हनुमान ने सीख लिया । वे नव व्याकरण पंडित हैं।

सुग्रीव मैत्री :– बालक राम से कई साल तक खेलने – कूदने के बाद अपने प्रभु श्रीराम की आज्ञा से, राम कार्य निर्वाह के लिए पंपानदी के तट पर स्थित किष्किंधा नगर पहुँच कर वाली और सुग्रीव के साथ मित्रता की । बुद्धिमान, बलवान, सरल

श्री आंजनेय ध्यानम्

मनोजवं मारुत तुल्य वेगं
जितेंद्रियं बुध्दिमतां वरिष्ठं ।
वातात्मजं वानर यूथमुख्यं
श्री रामदूतं शिरसा नमामि ॥

उष्ट्र वाहन स्तुति

गंधमादन शैलाग्र स्वर्णरंभावनाश्रयं ।
उष्ट्रं ध्यायेत् सदा वंद्यं हनुमव्दाहनोत्तमम् ॥

श्री सुवर्चला ध्यानम्

प्रभाकरात्मजां सुमेरु चारुस्वर्ण शोभितां ।
विराजमान पंकज प्रभात्त हस्त वैभवां ॥
धरात्मजा पतिप्रसाद प्राप्त धन्य जीवितां ।
नमामि तां वरप्रदां रमाकळां सुवर्चलां ॥

स्वभाववाले हनुमानजी को देखकर वालि ने सोचा कि उसे अपना मित्र बना लिया जाय । लेकिन अपने अंशसे प्रादुर्भूत सुग्रीव की रक्षा करने की गुरूदक्षिणा सूर्य ने हनुमान से मांगी । अपने उस वचन को निभाने हेतु सुग्रीव के साथ मित्रता की। उन के मंत्री और अंग रक्षक के रूप में वे रहे ।

हनुमत्कल्याण :– श्री हनुमान गृहस्थ हैं । उनकी पत्नी सुवर्चला है । सुवर्चला काश्यप गोत्रज भगवान सूर्य की पुत्री है । ज्येष्ठ शुद्धदशमी श्रीसुवर्चलाहनुमत्कल्याण की तिथि है । आंजनेयस्तोत्र में 'सुर्वचला प्राणनायक'' है । हनुमान के भक्त प्रातःकाल उठते ही पढ़ने वाले सुप्रभात में ''श्रीसूर्य पुत्रि प्रिय नाथ मनोज्ञ मूर्ते'' दिखाई देता है, नित्य पूजा विधान में ''आगच्छ हनुमद्देव त्वं सुवर्चलया सह'' कहकर शौनक संहितोक्त आवाहन है। हनमत्सूक्त में ''सकल दिव्यास्त्रधारी श्री सुवर्चलारमणः'' कहा गया है । मंगलाष्टक में ''सुवर्चला कळत्राय चतुर्भुज धरायच उष्ट्रारूढाय वीराय मंगलम्'' कहकर पाठ करते हैं । इस प्रकार हनुमान के गृहस्थ होने के कईप्रमाण हैं ।

प्रश्न उठता है कि अगर हनुमान गृहस्थ है तो ''ब्रह्मचारिणे नमः'' कैसे कहा जाय? विवाह के बाद दंपति को बिना नमक–मिर्ची मसाला के भोजन करते हुए ब्रह्मचर्य की दीक्षा लेकर सत्कर्म करते हुए जमीन पर सोना चाहिए । संतान की अपेक्षा होने पर ऋतुकाल में अपनी पत्नी के साथ संपर्क रखने वाले और पर स्त्री विमुख को बोधायन ने ''प्राजापत्य ब्रह्मचारी'' कहा है । इस कारण हनुमान ''प्राजापत्य ब्रह्मचारी'' और श्रीकृष्ण भी ''प्राजापत्य ब्रह्मचारी हैं ।

निवास :– मेरूपर्वत की नैऋति दिशा में स्थित गंधमादन पर्वत पर विभिन्न फल पुष्पों से पूर्ण कदली वन में अनवरत श्रीराम के ध्यान में हनुमान तत्पर रहते हैं ।

वाहन :– हनुमान के वाहन ऊँट है । इस पर चढ़ कर पंपा सरोवर के आसपास भ्रमण करते रहते हैं ।

सर्वदेवमय :– राक्षस नाश के लिए विष्णु ने ब्रह्माजी और अन्य देवताओं से अपने तेज में से तेज का अंश लेकर गोला बनाकर शंकर को दिया तो वे उसे लील ले गये। उस तेज से ही महावीर हनुमान पैदा हुए ऐसा पराशर संहिता के छठे पटल

में कहा गया है। इसी से हनुमान जी सर्वदेव मय हैं ।

चिरंजीवीः– ब्रह्मादि देवताओं ने इन्हें दीर्घायु प्रदान किया। संजीवनी पर्वत ले आकर लक्ष्मण को जिलाने से संतुष्ट होकर श्रीराम ने हनुमान को चिरंजीवी होकर रहने का आशीर्वाद दिया ।

अश्वत्थामा बलिर्व्यासो हनुमांश्च विभीषणः ।
कृपः परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविन ः ।।

प्रात ः स्मरण में कहा गया है कि इन सात चिरंजीवियों का स्मरण अपमृत्यु को दूर करता है।

नाम महिमा ःः–

बुद्धिर्बलं यशोधैर्य निर्भयत्वमरोगता ।
अजाड्यं वाक्पटुत्वंच हनुमत्स्मरणात् भवेत् ।।
पवित्रं हनुमन्नाम द्वादशावृत्तिमात्रतः ।
ये स्मरन्ति जनास्तेषां कार्यसिद्धिर्भवेत् धृवं ।।

बुद्धि. बल, यश, धैर्य, निर्भयत्व, अरोगता, जाड्य, आदि का हट जाना, वाक्पटुत्व आदि गुण हनुमानजी के स्मरण मात्र से आ जाते हैं । परम पवित्र हनुमान जी के नाम को श्रद्धा के साथ बारह बार स्मरण करने से कार्य की सिद्धि हो जाती है, पराशर मुनि ने कहा ।

प्रशंसा से बढ़ने वाले स्वामी ः– उनकी शक्ति उन्हें नहीं मालूम है। शैशव में वे अपने कुचेष्टाओं से महर्षियों को सताते थे, उनके तप में रोडा अटकाते थे । इससे भृगु आदि महर्षियों ने हनुमान को शाप दिया ।

बाधसे यत् समाश्रित्य बलमस्मान् प्लवंगम।
तत्दीर्घकालं वेत्तासि नास्माकं शापमोहितः ।।
यदातेस्मार्यते कीर्तिः तदाते वर्धते बलम् ।।

– वा.रा. ७–३६–३४–३५

हे वानर वीर । तुम जिस बल का सहारा लेकर हमे सता रहे हो, हमारे शाप से मेहित तुम्हें अपने बल के बारे में मालूम नहीं रहेगा । अगर कोई उसे याददिला कर स्मरण करेगा तो वह कई गुना बढ़ जायेगा । जांबवान आदिने उन्हें बढा चढा कर प्रशंसा कर समुद्र को पार कराया । हम जितना एकाग्र होकर उनकी आराधना करेंगे वे उतने ही उत्साह से वर प्रदान कर हम को संकट के समुद्र से पार करायेंगे ।

सिंदूर तैलाभिषेक : मंगलवार की विशिष्टता :

इसके बारे में हनुमान चालीसा की व्याख्या चौथी चौपाई में वर्णित है ।

शनिवार की महत्ता :–

हनुमान शनीचर को पैदा हुए थे । इस कारण हर शनिवार एक पर्वदिन है । उस दिन हनुमान की विशेष पूजा करने से और एक वक्त भोजन करने से वे प्रसन्न होकर हमारी कामनाओं को पूरा करेंगे – ऐसा पराशर का वचन है ।

कदली वनार्चना :

"कदली वन मध्यस्थं पूजयेद्यः कपीश्वरम् ।
तस्य पुण्यफलं प्रोक्तं गुणितं कोटि संख्यया ।।

हनुमान की पूजा अगर कदलीवन में की जाती है तो करोडों गुना फल देती है। कदली फूलों से और कदली फलों से अष्टोत्तर शत, सहस्रनाम पूजा करना और कदली फलों को भोग लगाना भी श्रेष्ठ माना जाता है ।

नागवल्ली दलार्चना : पान के पत्ते से सहस्रनामार्चना, अष्टोत्तर शतनामार्चना करने से हनुमान प्रसन्न हो जाते हैं। कम से कम पाँच पत्ते समर्पित करने चाहिए।

पंचसंख्या : हनुमान जी को पंच संख्या पसंद है। इसकारण हनुमान जी की प्रसन्नता के लिए पत्र–पुष्प–फल–तांबूल–लड्डू आदि पंच संख्या में समर्पित करना चाहिए।

श्वेतार्क : हनुमान जी को श्वेतार्क बहुत पसंद है। सौ साल की आयुवाले श्वेतार्क की जडपर हनुमान जी का आकार अपने आप बन जाता है । कहते हैं कि ऐसे

श्वेतार्क की पूजा विशेष फलप्रद होती है । श्वेतार्क की जड़ से हनुमान की मूर्ति बनवाकर कदलीवन में पूजा करने से शीघ्र हनुमान प्रसन्न हो जाते हैं ।

हनुमान की परिक्रमा :– भूत–प्रेत–पिशाचादि बाधाओं से मुक्त होने के लिए, दीर्घरोगों से, संकटो से छूटने के लिए , एवं अभीष्ट सिध्दि के लिए हनुमान जी की परिक्रमाएँ की जाती हैं । चाहे देव मंदिर में, या हनुमान जी के यंत्र के सामने, या हनुमान जीकी मूर्ति के सामने, चित्रपट को घर पर रखकर परिक्रमाएँ की जा सकती हैं । पुष्पों, सुपारियों, या अन्य किसी वस्तु को लेकर गिनती करना श्रेष्ठ है। एक सौ आठ परिक्रमाओं का विधान है।

"श्री हनुमन जय हनुमन जय जय हनुमन"
आंजनेयं महावीरं ब्रह्म विष्णु शिवात्मकम् ।
तरुणार्क प्रभं शांतं रामदूंत नमाम्यहम् ।।
मर्कटेश महोत्साह सर्व शोक विनाशन
शत्रून संहर मां रक्ष श्रियं दापय मे प्रभो ।।

इन श्लोकों का पाठ करते हुए परिक्रमाएँ करनी चाहिए । भक्ति श्रद्धा के काथ हाथ जोड कर धीरे – धीरे नम्रतापूर्वक्क परिक्रमा करनी चाहिए । शौच–स्नान से निवृत्त होकर साफ कपडे पहन कर करना चाहिए । चाहे १०८, या ५४ या ११ कम से कम पाँच कर सकते हैं ।

नमस्कार :

नमस्तेस्तु महावीर । नमस्ते वायुनन्दन ।
विलोक्य कृपया नित्यं । त्राहि मां भक्त वत्सल "।

यह श्लोक पढ़कर पाँच बार नामस्कार करना चाहिए । दक्षिणाभिमुख हनुमान जी को पंडित लोग शक्तिशाली कहते हैं । ऐसे स्वामी की आराधाना से जल्दी फल मिलता है ।

हनुमान के आयुध :

"खड्गं त्रिशूलं खट्वांगं पाशमंकुश पर्वतम् ।
धृव मुष्टि गदा मुंडं दशभिर्मुनि पुंगवा ।

एतान्यायुध जालानि धारयंतं यजामहे ।।

– श्री विद्यार्णव तंत्र, हनुमतप्रकरण ३३–७–९

खड्ग, त्रिशूल, खट्वांग, पाश, अंकुश, पर्वत, स्तंभ, मुष्टि, गदा और ठूँठ ये दस पंच मुख आंजनेय के आयुध हैं । हनुमान जी के बायें हाथ में गदा का उल्लेख मंत्रमहार्णव के पूर्व खंड़ के नवें तरंग १८५ वें पृष्ठ में किया गया है ।

"वामहस्त गदा युक्तम् "

उनको वज्रधारी भी कहा गया है।

"नमः श्रीराम भक्ताय अक्ष विध्वंसनाय च ।
नमो रक्षः पुरीदाहकारिणे वज्रधारिणे

– स्कंद पु.ब्रह्म, खं. ३७–३

'हाथ बज्र औ ध्वजाबिराजै" हनुमान चालीसा की पाँचवी चौपाई में कहा गया है। पर्वत, नख और वृक्ष उनके आयुधकहे गये हैं।

"तराल शैल शस्त्राय द्रुम शस्त्रायते नमः।"

– श्री विद्यार्णव तंत्र–हनुमत स्तुति प्रकरण २८–१३

नखायुधधारी दंतयुधधारी भी इनको कहते है ।

"नखायुधभीमाय दंतायुध धरायच"

– नारद पुराण – पूर्वखंड –तृतीय, अ ७८–४३

हनुमान जी की पूँछ :

ज्वलत्कांचन वर्णाय, दीर्घलांगूल धारिणे ।
सौमित्रि जयदात्रेच, राम दूतायते नमः ।।

– नारद पुराण पूर्व खंड तृतीय अ. ७८–३७

वे दीर्घ लांगूल धारी है । रावण से अग्नि प्रदीप्त कराये जाने पर लंका को भस्म करने वाला यही लांगूल है । लक्ष्मण को बचाने के लिए उसी लांगूल के अग्रभाग पर द्रोणाचल को रखकर कई हजार योजन दूरपारकर लंका में हनुमानजी ने प्रवेश किया । काशी में स्थित भैरवनाथ की आराधना न करने से तुलसीदास के बाहुमें उस

भैरवनाथ ने पीड़ा पहुँचाई । कई प्रकार की वैद्यचिकित्सा कराई गई, पर कोई लाभ नहीं हुआ । तब तुलसीदास ने अपने एक मात्र रक्षक हनुमान जी से अपने सुदीर्घ लांगूल से अपने बाहु को सहलाने की प्रार्थना की । यही हनामान बाहुक नामक स्तोत्र है । झट से तुलसी की बाहुपीड़ा गायब होगई । इसी से हनुमत्पूजा में हनुमत वालाग्र पूजा का महत्व है । लोग कहा करते हैं कि इस पूजा से कामनाओं की पूर्ति शीघ्र हो जाती है और हनुमान जी के कृपापात्र बन जाते हैं ।

ग्राम–ग्राम में आंजनेयालय – अपने भारत देश में ऐसा कोई गाँव नहीं मिलोगा जहाँ श्री हनुमान जी का मंदिर नहो । जिस गाँव में हनुमान जी का मंदिर नहीं होता उस गाँव में श्रीराम की आज्ञा से राक्षस भूत–प्रेत–पिशाचादि रूपों से मानवों का भक्षण करते रहते हैं ।

"खिल संहिता" में कहा गया है –

मम पार्श्वगता वीरा राक्षसाः पिशिताशनाः
याचंते जानकीनाथं नर भोजन मेवच ।
इति शृत्वा राम चन्द्रः अब्रवीत् जानकीपतिः
आंजनेयं विना यत्र तत्र भक्षंतु मानवाः ।।

मांस भक्षण करने वाले राक्षसों ने श्रीराम से पूछा कि उन्हे नरमांस चाहिए। तब श्रीराम ने राक्षसों से कहा कि जिस गाँव में आंजनेय की मूर्ति नहीं होगी और जिस गाँव में हनुमान जी का स्मरण नहीं होगा वहाँ के लोगों को जाकर खाओ ।

सुंदरकांड पारायण और हनुमान चालीसा :

सुंदर कांड पारायण से सभी प्रकार के कार्य शुभ प्रद और मंगलप्रद हो जाते हैं । महाभारतांतर्गत भगवद् गीता का पाठ मुमुक्षु लोग जैसे करते हैं, वैसे ही ऐहिक प्रगति चाहनेवाले रामायणांतर्गत सुंदरकांड का पाठकरते हैं । जिस कांड में सुन्दर हनुमान की कथा है उसका पाठ करने से संपूर्ण रामायण के पाठ का फल मिल जाता है। श्री हनुमान चालीसा का पाठ प्रतिदिन ११ बार चालीस दिन तक करने से सभीकार्य सुसंपन्न हो जाते हैं। नित्य तीनों समय एक–एक

बार करने वाले के योगक्षेम को भक्त रक्षक हनुमान जी खुद देखते हैं और सदा रक्षा करते हैं।

श्री तुलसीदास की रचनाओं में दीनता प्रकट होती है –

"तुलसीदास सदा हरि चेरा"

श्री हनुमान चालीसा लिखने में श्री तुलसीदास जी को बहुत ही सावधान रहना पड़ा था / श्री हनुमान जी में दो विशिष्ट गुणदिखाई देते हैं ।

पहला : अपनी प्रशंसा वे नहीं सुनते और सुनना पसंद नहीं करते।

दूसरा :– अपने प्रभु श्री राम का कथा–संकीर्तन और अपने प्रभु के गुण –गान की चर्चा जहाँ भी हो, वहाँ पर उपस्थित होना ।

श्री हनुमान चालीसा में श्री हनुमान की स्तुति है । अपनी प्रशंसा को पसंद न करने वाली की स्तुति कैसे की जाय? श्री तुलसीदास जी संकट में पड़ गये पर आंजनेय स्वामी के दूसरे गुण का सहारा लेकर अपनी रचना आगे बढाई । श्री हनुमान चालीसा में श्री हनुमान की, प्रकट रूप से, प्रशंसा करने वाली चौपाइयाँ २४ हैं । श्रीराम का और एक जगह सीता माता का उल्लेख करते उनकी प्रशंसा करते है। परोक्षरूप से श्री हनुमान जी की प्रशंसा करनेवाली ऐसी चौपाइयाँ १६ हैं। अपनी प्रशंसा बिलकुल पसंद न करनेवाले पवन पुत्र के मन की व्याकुलता को समझकर श्री तुलसी दास जी अपने कविता कौशल से, श्रीराम की महिमा का उल्लेख करते हुए उन्हें संतुष्ट रखते हैं । अपने इष्टदेव श्री राम के महत्वपूर्ण और कृपापूर्ण अपनी प्रशंसा विवश होकर श्री हनुमान जी को सुननी ही पड़ी। इस दुर्बलता का सहारा लेकर श्री तुलसीदास जी रचनापूरी हो जाने तक उन्हे अपने सामने बिठालेते हैं इस से श्रीतुलसीदास जी की प्रतिभा और आंजनेयस्वामी की प्रभुभक्ति परायणता एंव निरभिमानता प्रकट हो रही है । इस प्रकार श्री हनुमान चालीसा के पाठ से श्रीराम की स्तुति और श्री आंजनेयस्वामी की स्तुति से मिलनेवाले दोनों फल एक साथ मिल जाते हैं।

पहले : तुलसी कहते हैं – भगवान श्रीराम की स्तुति कर रहा हूँ ।

"श्री गुरु चरन सरोजरज, निज मनु मुकुरु सुधारि।

बरनउ रघुबर बिमल जसु, जो दायकु फल चारि ।।

श्री राम की कथा का आरंभ होते देख – स्वामी विराजमान होते हैं। स्वामीके सामने ही चालीसा का श्रीगणेश करते हैं।

"बुद्धिहीनं .... उजागर ।

स्वामी का झुंझुलाना

" राम दूत............. नामा ।।"

राम के बारे में कहना ।

रामदूत हो, अतुलित बलधाम, श्रीराम के बल के धाम हो, तुम स्वयं बलवान न हो, स्वामी की प्रसन्नता ।

"महाबीर .... अति चातुर ।"

स्वामी के मन का विकल होना ।

यह जानकर तुरंत रामकाज .... बसिया..... स्वामी का आनंदित होना ।

"सूक्ष्मरूप ....संहारे ।

स्वामी का विरक्त होना ।

" राम चन्द्र के काज सँवारे "

स्वामी का संतुष्ट होना ।

"लाय सजीवन लखन जियाये "

स्वामी का कुपित होना ।

"श्री रघुबीर हरषि उरलाये"

स्वामी का प्रसन्न होना ।

"रघुपति कीन्ही ... लगावे ।"

यह मेरे द्वारा की जानेवाली प्रशंसा नहीं, तुम्हारे इष्टदेव श्रीराम कृत प्रशंसा ।

"सनकादिक .... सके कहाँ ते ।

स्वामी की मनो व्याकुलता

तब तुलसी दास कहते हैं .. श्री आंजनेय जो भी काम करेंगे उसका समर्थन श्रीराम करेंगे और अपने इष्टदेव श्रीराम उनका आदर करेंगे । ऐसा कहते हुए इन नीचे की चौपाइयों में श्री आंजनेय ने जो काम किये उनका वर्णन करते हैं ।

"तुम उपकार .... जाना"

सुग्रीव को राज सिंहासन पर बिठाना, राम के साथ उनकी मित्रता की योजना बनाना, विभीषण की शरणा–गति को श्रीराम से मनवाना, उन्हे लंकेश्वर बनाना आदि से आंजनेय का संतुष्ट होना ।

"जुग सहस्र .... तेते " ।

शैशव में ही कई हजार योजन दूर पर स्थित सूर्य को फल समझकर लील लेने जाना, श्रीराम की दया से ही समुद्र का पार जाना, श्रीराम की मुद्रिका मुँह में रहने के कारण ही वह तुम्हें सुसाध्य हुआ है। दुर्गम काजों का सुगम हो जाना, तुम्हारे इष्टदेव श्री राम की कृपा से ही, इस में तुम्हारा कोई बडप्पन नहीं–कहते ही स्वामी का आनंदित हो जाना ।

" राम दुआरे ... पैसारे"।

तुम श्री राम के द्वारपालक हो, विना तुम्हारी पूजा के, बिना तुम्हारी आज्ञा के, हम सकल सुखधाम श्री राम के दर्शन नहीं कर सकते । भगवान से वरदान पाने के लिए पहले पुजारी की प्रशंसा करनी पड़ती ही है न ।

सब सुख लहै ..... लावै "

ये सब सुख और सुविधाएँ हम तुम से पाने पर ही श्रीराम के दर्शन कर सकेंगे।

गुप्त विषय और एक है ।

" सब पर राम .... साजा"

तपस्वियों के राजा श्री राम हैं । ऐसे महान के कामों को तुमने सुसंपन्न

किया। इसी से हमारी कामनाओं को पूरा करके, हमें जीवन के फल –मोक्ष को तुम प्रदान करोगे ।

"और मनोरथ ... फल पावै "।

"चारों जुग ...... उजियारा "।

तुम्हारा प्रताप सर्व व्यापक होकर प्रसिद्ध होने के कारण,

"साधु सन्त के.... दुलारे " ।

तुम श्री राम के अत्यन्त प्रिय होने से,

"अष्ट सिद्धि... माता ।"

अष्ट सिद्धि और नव निधि के दाता होगे – कहकर माता श्री जानकी ने तुम्हें वरदान दिया। वह तो मेरे प्रशंसित नहीं ।

"राम रसायन ....दासा।"

राम रसायन उनके पास होने की बात ने उन्हें अत्यंत आनंद प्रदान किया। बहुत ही गुप्त रहस्य और एक है।

"तुम्हरे ...... बिसरावै "।

हे आंजनेय ! तुम्हारा भजन तुम्हें प्रसन्न करने के लिए नहीं, तुम्हारे इष्टदेव श्रीराम को तुम्हारी प्रशंसा करना बहुत पसंद है। तुम्हारी प्रशंसा से हमलोग श्री राम के कृपापात्र बनेंगे । तुम तो निरभिमानी हो, इस कारण, तुम्हारी इस प्रशंसा से तुम व्याकुल न होना । इस समय तुलसीदास को श्री आंजनेय की प्रशंसा करने का सुअवसर (Green singal) मिल गया है । श्री आंजनेय की प्रशंसा फिर से करने लगते हैं –

"अंतकाल .... कहाई " ।

तुम्हारे भजन से श्री राम के दर्शन और मोक्ष दोनों एक साथ मिलेंगे ।

"और देवता ..... गौरीसा" ।

श्री तुलसीदास जी भगवान शंकर को साक्षी के रूप में रखकर कह रहे

हैं कि अन्य देवताओं की प्रशंसा न करके एक मात्र श्रीआंजनेय की आराधना करने वालों के सभी संकट दूर होंगे और सभी संपदाएँ मिलेंगी ।

"तुलसीदास ... डेरा"।

अत्यन्त नम्रता और दीनता से श्री तुलसीदास जी आंजनेय से प्रार्थना करते हैं कि मैं सदा तुम्हारे इष्टदेव श्री राम के दास हूँ । इस कारण सदा मेरे हृदय में सीता, राम, लक्ष्मण केसाथ बसो ।

४० संख्या की विशिष्टता : आयुर्वेद में (४०)चालीस या मंडल दिन तक किसी–व्याधि की चिकित्सा की जाती है। कोई व्रत या अनुष्ठान करते हैं तो चालीस दिन के हिसाब से करते हैं। मंत्रशास्त्र में मंडल दिन की दीक्षा का विधान है । इस्लाम धर्म में अगर कोई व्यक्ति मर जाता है तो चालीस दिन तक अशुचि मानते है । इसे चेहलुम कहते हैं । प्रसूति का अशौच भी चालीस दिन तक माना जाता है । इसे 'चिल्ला' कहते हैं । मुहर्रम के दिनों में मृतात्माओं की सद्गति प्राप्ति के लिए "कुरान" का पाठ चालीस दिन तक करते हैं। दूसरी बात उत्तर प्रदेश के लोग हनुमान की जयंती चैत्र की पूर्णिमा से मनाते हैं और दक्षिण के लोग जो जयंती मनाते हैं उस में चालीस दिन का अन्तर है। कुछ लोग कहते हैं – चैत्र पूर्णिमा को हनुमान का जन्म हुआ । चैत्र अमावास्या के दिन इन्द्र के वज्रायुध से मार खाकर फिर वैशाख बदी दशमी के दिन होश में आये ।

मालूम होता है – चालीस दिन तक की मंत्र दीक्षा लेना और चालीस चौपाइयों से स्तोत्र करना, इस चालीस संख्या के पीछे कोई न कोई खास विशिष्टता रही होगी।

इस परम पवित्र हनुमान चालीसा का पाठ सब कोई करके श्री सीता समेत श्रीराम पाद सेवा धुरंधर श्री आंजनेय स्वामी के कृपा पात्र बनेंगे।

एको देव स्सर्वद श्री हनुमा
ने को मंत्र श्री हनूमत् प्रकाशः
एका मूर्ति श्री हनुमत्स्वरूपा
चैकं कर्म श्री हनुमत् सपर्या ।।

पराशर जैसे महान महर्षि ने अनन्य भक्ति से श्री हनुमान जी के प्रति इस प्रकार कहा है।

देवता एक ही है– वे श्री हनुमान जी हैं । एक ही मंत्र है वह श्री हनुमान जी का मंत्र है। मूर्ति एक ही है वह श्री हनुमान जीकी मूर्ति है। कर्म एक ही है वह श्री हनुमान जी की सेवा है।

ओं शांतिः शांतिः शांतिः

"जै बोलो पवनसुत हनुमान की"

हनुमत् चरणाश्रित,

हनमकोन्डा डॉ. रामक लक्ष्मणमुर्ति

२३–५–१९९४

श्री हनुमतेनमः

श्री हनुमान चालीसा

दोहा

श्री गुरु चरन सरोज रज।
निज मनु मुकुरु सुधारि ॥
बरनउँ रघुबर बिमल जसु ।
जो दायकु फल चारि ॥
बुद्धिहीन तनु जानि के।
सुमिरौं पवन कुमार ।
बल बुधि बिद्या देहु मोहिं ।
हरहु कलेस बिकार ॥

चौपाई

जय हनुमान ज्ञान गुन सागर ।
जय कपीस तिहुँ लोक उजागर ॥ १
राम दूत अतुलित बल धामा ।
अंजनि –पुत्र पवन सुत नामा ॥ २
महाबीर बिक्रम बजरंगी ।
कुमति निवार सुमति के संगी ॥ ३
कंचन बरन बिराज सुबेसा ।
कानन कुंडल कुंचित केसा ॥ ४
हाथ बज्रऔ ध्वजा बिराजै।
काँधे मूँज जनेऊ साजै ॥ ५

संकर सुवन केसरी नंदन ।
तेज प्रताप महा जग बंदन ॥ ६
बिद्यावान गुनी अति चातुर ।
राम काज करिबे को आतुर ॥ ७
प्रभु चरित्र सुनिबे को रसिया ।
राम लषन सीता मन बसिया ॥ ८
सूक्ष्म रूप धरि सियहिं दिखावा ।
बिकट रूप धरि लंक जरावा ॥ ९
भीम रुप धरि असुर सँहारे ।
रामचन्द्र के काज सँवारे ॥ १०
लाय सजीवन लखन जियाये ।
श्री रघुवीर हरषि उर लाये ॥ ११
रघुपति कीन्ही बहुत बड़ाई ।
तुम मम प्रिय भरतहि सम भाई ॥ १२
सहस बदन तुम्हरो जस गावैं ।
अस कहि श्रीपति कंठ लगावै ॥ १३
सन कादिक ब्रह्मादि मुनीसा ।
नारद सारद सहित अहीसा ॥ १४
जम कुबेर दिगपाल जहाँ ते ।
कबि कोबिद कहि सके कहाँ ते ॥ १५
तुम उपकार सुग्रीवहिं कीन्हा ।
राम मिलाय राज पद दीन्हा ॥ १६
तुम्हरो मन्त्र बिभीषन माना ।
लंकेस्वर भए सब जग जाना ॥ १७
जुग सहस्र जोजन पर भानू ।
लील्यो ताहि मधुर फल जानू ॥ १८
प्रभुमुद्रिका मेलि मुख माहीं ।
जलधि लाँधि गये अचरज नाहीं ॥ १९

दुर्गम काज जगत के जेते ।
सुगम अनुग्रह तुम्हरे तेते ॥ २०
राम दुआरे तुम रखवारे ।
होत न आज्ञा बिनु पैसारे ॥ २१
सब सुख लहै तुम्हारी सरना ।
तुम रच्छक काहू को डरना ॥ २२
आपन तेज सम्हारो आपै ।
तीनों लोक हाँक तें काँपै ॥ २३
भूत पिसाच निकट नहिं आवै।
महाबीर जब नाम सुनावै ॥ २४
नासै रोग हरै सब पीरा ।
जपत निरंतर हनुमत बीरा ॥ २५
संकट तें हनुमान छुडावै।
मन, क्रम बचन ध्यान जो लावै ॥ २६
सब पर राम तपस्वी राजा ।
तिन के काज सकल तुम साजा ॥ २७
और मनोरथ जो कोई लावै।
सोइ अमित जीवन फल पावै॥ २८
चारों जुग परताप तुम्हारा ।
है पर सिद्ध जगत उजियारा ॥ २९
साधु संत के तुम रखवारे ।
असुर निकंदन राम दुलारे॥ ३०
अष्ट सिद्धि नौ निधि के दाता ।
असबर दीन जानकी माता ॥ ३१
राम रसायन तुम्हरे पासा ।
सदा रहो रघुपति के दासा ॥ ३२
तुम्हरे भजन राम को पावै ।

जनम–जनम के दुख बिस रावै ॥ ३३

अंत काल रघुबर पुर जाई ।

जहाँ जन्म हरि –भक्त कहाई ॥ ३४

और देवता चित्त न धरई ।

हनुमत सेइ सर्ब सुख़ करई ॥ ३५

संकट कटै मिटै सब पीरा।

जो सुमिरै हनुमत बल बीरा ॥ ३६

जै जै जै हनुमान गोसाई ।

कृपा करहु गुरु देवकी नाई ॥ ३७

जो सत बार पाठ कर कोई ।

छूटहि बन्दि महा सुख होई ॥ ३८

जो यह पढै हनुमान चालीसा ।

होय सिद्धि साखी गौरीसा ॥ ३९

तुलसीदास सदा हरि चेरा ।

कीजै नाथ हृदय महँ डेरा ॥ ४०

दोहा

पवन तनय संकट हरन ,
मंगल मूरति रूप ,
राम लषन सीता सहित ,
हृदय बसहु सुर भूप ॥

" जै बोलो श्री पवनसुत
हनुमानकी"

श्री

दोहा

श्री गुरु चरन सरोज रज ।
निज मन मुकुरु सुधारि ।
बरनउ रघुबर बिमल जसु ।
जो दायकु फल चारि ।

अर्थ : श्रीगुरु = श्रीसहित आचार्य के ; श्री गुरु देवके, चरन सरोज = चरण कमलों की ; रज = धूलि से ; निज = अपने ; मन = मन रूपी; मुकुरु = दर्पण को, सुधारि = सुधार कर ; जो =जो ; चारि = चारों ; फल = धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष रूपी फलों को याने, चतुर्विध पुरु षार्थों को ; दायकु = देने वाले हैं, (वैसे) रघुबर = रघु वंश के श्रेष्ठ श्रीराम चंद्र के; बिमल = निर्मल ; जसु = यश का, बरनउ = वर्णन करता हूँ ।

भाव : श्रीगुरूजी के चरण कमलों की धूलि से, अपने मन रूपी दर्पण को सुधार कर श्रीरघुवर के विमल यश का वर्णन करता हूँ जो चारों फलों को (धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष रूपी) चतुर्विध पुरूषार्थों को देने वाला हैं ।

व्याख्या : "श्रीगुरूचरन सरोज रज निज मन मुकुरूसुधारि" कहने से स्पष्ट है कि मन रूपी दर्पण को श्री गुरु देव के चरण कमलों की धूलि से निर्मल बनाऊँगा। गुरूदेव की पाद धूलि को सिर पर धारण करना सुप्रसिद्ध ही है । लेकिन सिर पर धारण करने की धूलि का मन पर गिरना कैसा ? इस बात को ऐसे समझ लेना चाहिए = विद्युत् के स्पर्श से शरीर और शरीर का वह अंग ही पीडित नहीं होता, उसके साथ मन भी पीडित होता है । दूसरी बात – सुगंधित इत्र, चंदन आदि को शरीर पर लगाने से मात्र नाक और शरीर ही नहीं, मन भी प्रसन्न हो जाता है। ठीक उसी प्रकार से श्री गुरुदेव की चरण रज सिर पर पड कर सारे शरीर को

निर्मल बना देता है वैसे ही मन को भी निर्मल बना देगा । वास्तव में मन अमूर्त वस्तु है। उस का निर्मल होना माने पवित्र हो जाना है । भाव यह है कि अमूर्त वस्तु का निर्मल हो जाना भी अमूर्त विधान द्वारा ही हो सकता है । पूर्वकाल में लोहे के दर्पण बनते थे और उनमें मुख का प्रतिबिंब उसी भांति दीख पडता था जिस भाँति तलवार में दीख पडता है। इसलिए उसे धूलि से रगडना पडता था । दर्पण का उपयोग प्रतिबिंब दर्शन में ही होता है। जितना ही मन मुकुर शुद्ध होगा उतना ही दूसरों के मनोगत भाव ठीक –ठीक उस में प्रतिबिंबित होंगे ।

श्री तुलसीदास ने "श्री गुरू –सुधारि" में श्री गुरूदेव की वदंना करके जिस चरित्र का वर्णन करने जा रहे थे उस की चर्चा भी इस दोहे में की है । गुरू वंदना के प्रसंग में "श्री" मंगल कर शब्द का कई बार कई स्थलों में प्रयुक्त किया गया है। जैसे –

श्री गुरु– पद–नख–मनि–गन जोती ।
सुमिरत दिब्य दृष्टि हिय होती ।।

– राम चरित मानस – 1–3 चौपाई

श्रीगुरूके चरणों के नाखून भी मणियों के समान ऐसे चमाचम चमकते रहते हैं कि उन नाखूनों (की चमक) का मात्र स्मरण करने से हृदय की दिव्य दृष्टि खुल पडती है, ज्ञानोदय होने लगता है । इसे दूसरे ढंग से समझ सकते हैं । श्री गुरूचरण नख ही मणि हैं । गुरूकी वंदना करने वाले भक्त का मन दर्पण है । इस दर्पण पर उन मणियों की कांति पडने से मन प्रकाशित हो जाता है। यहाँ पर पदनख की तुलना मणि गण से की गई है । इस कारण 'श्री' शब्द को गुरु शब्द के साथ जोडने की भाँति पदनख से जोड सकते हैं । चाहे – जैसा भी जोडे, भाव में कोई अंतर नहीं पडता । "श्री" शब्द कई बातों को सूचित करता है । गुरु देव, बुद्धि, सिद्धि, यश, प्रताप, ज्ञान आदि को प्राप्त कराता है । इसी से गुरूवंदना की इतनी महिमा है ।

जे गुरूचरन रेनु सिर धर हीं ।
ते जनु सकल बिभव बस कर हीं ।।

जो लोग गुरू के चारणों की रज माथे पर चढाते हैं वे मानो संपूर्ण ऐश्वर्य अपनी

मुठ्ठी में किये रहते हैं । "सरोज श्री" इन दोनों में एक प्रकार से अविनाभाव सम्बन्ध है । श्री माने लक्ष्मी, उनका निवास स्थान सरोज, सरोज माने सरोवर में जात = पद्म है । पद्म, बिल्व दल का ऊपरी भाग, गौ का पृष्ठ भाग, पतिव्रताओं का सीमंत और हाथी का कुंभ स्थल इन पाँचों को लक्ष्मी के निवास स्थान के रूप में कहा करते हैं। लक्ष्मी का एक नाम पद्मालया है।

"लक्ष्मी पद्मालया पद्मा"

– अमर कोश

"मन मुकुरु सुधारि" यहाँ मन की तुलना दर्पण से की गई है। इस बात को वैसे रहने दिया भी जाय, मन को निर्मल बनाने से तात्पर्य अज्ञान या विषयेन्द्रिय लालसा को हटा लेना है।

"काई विषय मुकुर मन लागी"

विषय भोग की लालसा ही मन रूपी दर्पण पर लगी मलिनता है। विषय माने क्षण भंगुर संसारिक सुख हैं। इनकी जो लालसा है वही मलिनता है। उसे मन से हटाकर श्री हनुमान के च्रित्र को प्रतिबिंबित कर लेना है। तब निर्मल बनाने के लिए धूलि की क्या जरूरत है ? कह सकते हैं – और किसी पदार्थ से काम चल ही नहीं सकता। लेकिन दर्पण पर लगी मलिनता को धूलि से हटा लेना आसान है। इसी से यहाँ पर धूलि को निर्मल बनाने का विशिष्ट विधान के रूप में बताया गया है।

इस प्रसंग पर सोचने से ध्वनित होता है कि तुलसीदास जी में पूर्ण रूपेण प्रपत्ति का लक्षण है।

प्रपत्ति को शरणागति, आत्म–समर्पण, न्यास, सिद्ध भक्ति त्याग आदि कई विधान बताये जाते हैं। शरण + आगति = शरणागति । शरण माने गृह (आश्रय) रक्षक पर्याय हैं। आगति = पाना, "शरणं गृह रक्षितोः" – अमर कोश

तुम्ही एक मात्र आश्रय हो, तुम्ही एक मात्र रक्षक हो, ऐसे सुदृढ भाव से परमात्मा को प्राप्त कर लेना ही शरणागति है । इस शरणागति के छह अंग हैं।

आनुकूल्यस्य संकल्पः । प्रतिकूल्यस्य वर्जनम् ।

रक्षिष्यतीति विश्वासः। गोप्तृत्व वरणं तथा ।।
आत्मनिक्षेपकार्पण्ये । षड्विधा शरणा गतिः

– यतीन्द्रमत दीपिका ६४

)) आनुकूल्यस्य संकल्प :

भगवान को पाने के लिए अनुकूल विषयों को समझना, अपने प्रयत्नों को सफल बनाने वाले उपयुक्त विषयैं को इस संसार में समझना ।

2) प्रातिकूल्यस्य वर्जनम् :

भगवान और भागवतों के प्रति तब तक अहंकार के कारण अपने में स्थित प्रतिकूल प्रवृत्ति को छोड देना । इस संसार में भगवत् प्राप्ति के प्रतिकूल विषयों को और उनके संकल्प को छोड देना ।

3) रक्षिष्यतीति विश्वास :

भगवान अपनी रक्षा अवश्य करेंगे – ऐसा सुदृढ विश्वास रखना, "पिताच रक्षकश्शेषी" (पिता, रक्षक, प्रभु) "सकल फल प्रदोहि विष्णुः" (विष्णु ही सब फलों को प्रदान करने वाले हैं) ब्रह्मादि देवताओं से प्रशंसित, विश्वसित श्रीमन्नारायण ही अपनी रक्षा अवश्य करेंगे – ऐसा विश्वास रखना । वास्तव में यह विश्वास ही प्रथम दो विषयों में प्रधान है ।

4) गोप्तृत्व वरणं (तथा) :

गोप्ता = रक्षक ; गोप्तृत्व = रक्षकत्व; रक्षा की मांग । याने प्रार्थना करते हैं कि हे भगवन् । मेरी रक्षा करो ।

सर्वज्ञो z पिहि विश्वेशः सदा कारुणिको z पिसन् ।
संसार तंत्रवाहित्वात् । रक्ष्यापेक्षां प्रतीक्षते ।।

यह स्मृति वचन है। विश्वेश्वर भगवान सर्वज्ञ ही हैं । सदा करुणा दिखाने वाले हैं फिर भी इस अनाद्यनंत संसार तंत्र के संचालन में संलग्न रहने से – रक्षणीय की अपेक्षा है या नहीं , समझना लेना चाहिए । इससे जीवात्मा को भगवान से अपनी रक्षा करने की मुक्त–कंठ से प्रार्थना करनी ही पडती है। ठीक ही है– बिना मांगे

माता भी कुछ नहीं देती । भक्त यदि प्रार्थना नहीं करता तो भगवान चुप रहते हैं। जैसे अजीर्ण रोग के अंत होने पर जोर से भूख लगने पर, खाना मांगने पर ही खाना देने की सलाह वैद्य देते हैं। वैसे ही इस संसार की लालसाओं के नष्ट होने पर, भगवत्प्राप्ति की तीव्र लालसा से प्रार्थना करने पर ही भगवान रक्षा करते हैं। इसी से गोप्तृत्व वरण भक्त के लिए अनिवार्य है ।

5) आत्म निक्षेप :

अनादि काल से परमात्मा से दूर होकर स्वेच्छा से जीवन बिताते रहने वाले अपने को भगवान के अधीन बनाना; याने अपनी शरणागति के लिए भगवान को प्रसन्न करना ही अपनी प्रवृत्ति का एक मात्र ध्येय समझना है।

6) कार्पण्य :

अपनी रक्षा में अपनी असमर्थता को प्रकट करने के विधान में दीनता दिखाना है । मैं महा पुरूषों के वंश में पैदा हुआ हूँ, तत्ववेत्ता हूँ, सर्व धार्मिक कार्यों को कर चुका हूँ, इनके कारण अपने को मोक्ष मिलेगा – ऐसे अहंभाव से रहित होना ही भक्त का कार्पण्य है ; कृपण = दीन ; कृपणता = दीनता; शराणागत का यही लक्षण है कि भगवान के सामने दीनता प्रकट करना – तेरे आश्रय के बिना मेरा अपना कुछ नहीं । इस कार्पण्य को दूसरे ढंग से भी समझ सकते हैं ।

कार्पण्य दोषोपहत स्वभावः
पृच्छामित्वां धर्म सम्मूढ चेताः ।
यच्छ्रेयस्यान्निश्चितं ब्रूहितन्मे
शिष्यस्तेहं शाधिमां त्वां प्रपन्नम् ।

– भ.गीता (अध्याय २–७)

इसे अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कहा था। यहाँ पर कार्पण्य एक दोष के रूप में बताया गया है। इस कार्पण्य का अर्थ आत्म–ज्ञान शून्यता है। ऐसी कृपणता से चोट खाये गये स्वभाव के कारण धर्म में मेरा मन विमूढ बन गया है। इसी से आप से पूछ रहा हूँ कि जो मेरे लिए श्रेयस्कर हो उसे निश्चित रूप से बता दो। अब मैं आपका शिष्य हूँ और आपका शरणागत हूँ । आपकी शरण में आया हूँ । कृपया मुझे इस

विषय में उपदेश दें । इस प्रकार अर्जुन ने कृष्ण से प्रार्थना की। कृपण माने लोभी, दीन, दरिद्र है। इसका विशिष्ट अर्थ है कि यह दरिद्रता आत्म – ज्ञान से सम्बन्धित है।

"योवा एतदक्षरं गार्ग्यविदित्वा z स्माल्लोकात्
प्रैतिसकृपणः"

– बृहदारण्यकोपनिषत् (३–८–१०)

बता रहा है अक्षर परब्रह्म को बिना समझे मर जाने वाला मानव कृपण हैं ।

श्रीकृष्ण गीता में पहले बहुत समय तक अर्जुन के भाषण को मौन होकर सुनते रहे । "ना पृष्टः कस्यचित् ब्रूयात्" । श्रीकृष्ण ने सोचा होगा कि बिना पूछे किसी को कुछ नहीं बताना चाहिए । आखिर जब अर्जुन ने श्रीकृष्ण को गुरू के रूप में स्वीकार किया और शरणागत होकर उपदेश देने की प्रार्थना करने पर ही कृष्ण ने तत्व बोध का श्रीगणेश किया । भक्त अपने साधु स्वभाव से, विनय से अपने को पापात्मा समझता हुआ मन की पवित्रता के लिए तपता रहता है। भक्ताग्रगण्य नारद ने कहा –

पापो z हं पापकर्मा z हं पापात्मा पाप संभवः ।
त्राहिमां पापिनं घोरं । शरणागत वत्सल ।

ऐसा बोलने वाले नारद को हम पापात्मा नहीं कह सकते । ऐसा कहने से भक्त की व्याकुलता सूचित होती है । यह शरणागत का लक्षण है ।

पर तुलसी दास अपने मन को विषयों की मलिनता न होने पर भी अपनी कृपणता को हटाने के हेतु शरणागत होकर हनुमान की प्रशंसा कर रहे हैं।

"बरनऊ रघुबर बिमल जसु" = रघुवर माने रघुवंश में श्रेष्ठ श्री रामचन्द्र से मतलब है पर यहाँ तुलसी हनुमान के गुणों को गाने जा रहे हैं फिर रघुवर क्यों कहा गया? लगता है यहाँ पर उल्टा हुआ हो, पर सोचने पर स्पष्ट होता है कि सब ठीक है।

रघुवंश में जैसे श्रीराम चन्द्र श्रेष्ठ हैं उन्हीं की भाँति हनुमान भी रघुवंश में श्रेष्ठ ही हैं । सीता माता ने कई प्रसंगों में हनुमान को अपने पुत्र के रूप में कहा है

उदा–

अजर अमर गुण निधि सुत हो हू
करहु बहुत रघुनायक छोहू ।

– रा.च.मा (5–16–2)

अशोक वन में शिंशुपा वृक्ष के नीचे दुःखी सीता बैठी थी । जब हनुमान जी ने राम कथा सुनाई, राम का संदेश सुना कर आश्वासन दिया। तब सीतामाता ने हनुमान को देख कर प्रसन्नता से ये बातें कहीं – हे पुत्र! तुम अजर–वृद्धावस्था रहित हो, अमर, मृत्यु रहित हो, इतना ही नहीं, कई सद्गुणों के निधि हो ।

जब हनुमान जी ने अशोक वन के फलों को खाने की आज्ञा मांगी तो सीता माता ने कहा –

सुनु सुत करहि बिपिन रखवारी ।
परम सुभट रजनीचर भारी ।।

– रा.च.मा. 5–16–4

हे पुत्र ! बहुत बडे–बडे राक्षस भट इस वन की रखवाली किया करते हैं ।

मात्र सीता माता ने हनुमान को पुत्र कहा हो, ऐसी बात नहीं, हनुमानजी ने भी देवी सीता को माता कहा है – उदाः–

"तिन्ह कर भय माता मोहि नाही
जौ तुम्ह सुख मानहु मन माहीं ।

– रा.च.मा. 5–16–5

माता! आप प्रसन्न होकर आज्ञा कर दे डालिये, फिर तो मैं इन से निपट लूँगा । मुझे इन राक्षसों का कोई भय नहीं । इस प्रकार सीता माता और हनुमान परस्पर कह लेते हो, ऐसी बात नहीं । श्रीरामचन्द्र ने भी हनुमान को अपने पुत्र के रूप में कई बार कहा है– उदाः–

सुनु सुत तोहि उरिन मैं नाहीं
देखेउ करि विचार मन मा हीं

– रा.च.मा. ५–३१–४

सीता माता को देख कर लौट आकर उनके कुशल समाचार कहे हनुमान से रामचन्द्र बोले--देखो पुत्र ! मैं भली प्रकार से मन में विचार कर देख चुका हूँ कि किसी भी प्रकार से तुम्हारे उपकार का बदला नहीं चुकाया जा सकता ।

इस प्रकार इन तीनों की बातों को गंभीरता से सोचने पर श्रीहनुमान जी श्रीसीताराम के प्रथम पुत्र हैं (लवकुश उनके अनुज है।) प्रथम पुत्र माने दत्त पुत्र हैं । इस कारण राम की भाँति हनुमान जी रघुवंश के हैं । क्या श्रीरघुवर भी हो सकते हैं ? निस्संदेह श्रीराम की भाँति हनुमान भी श्रीरघुवर हो सकते हैं ।

दूसरे ढंग से तो हनुमान को साक्षात् श्रीरामचन्द्र ही कहना होगा । रामचन्द्र जी के राज्याभिषेक के समय में श्रीराम ने हनुमान से पूछा – प्रिय हनुमान! तुम्हारी दृष्टि में मैं कौन हूँ ? हनुमान ने झट से कहा हे राम!

देह बुध्यातु दासो z हम्
जीव बुध्या त्वदंशकः
आत्म बुध्या त्वमेवा z हम्

हनुमान जी की तरफ़ से देखने पर आत्मबुद्धि से वे श्रीराम ही हैं। इस प्रकार श्रीहनुमान वास्तव में श्रीरघुवर ही हैं । इस कारण श्रीहनुमान चालीसा को रघुवर चालीसा भी कहा जा सकता है ।

बिमल जसुः निर्मल कीर्ति – श्रीराम की कीर्ति की भाँति श्री हनुमान जी की कीर्ति निर्मल और उज्वल है। वास्तव में भक्तों की कीर्ति भगवान की कीर्ति से बढकर है ।

मोरे मन प्रभु अस बिश्वासा ।
राम ते अधिक राम कर दासा ।

– राम.च.मा. ७–११९–८

हे पुभू ! मैं तो यह विश्वास करता हूँ कि ये राम के दास संत लोगराम से भी बढकर हैं। इसी से हनुमान चालीसा निष्कलंक है। वह बहुत ही निर्मल है और परम पवित्र हैं।

जो दायकु फलचारिः वास्तव में यह फल श्रृति है। साधारणतया फल श्रृति ग्रंथ के अंत में लिखी जाती है पर यहाँ पहले ही कही गई है । धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष स्र्पी चार फल – चतुर्विध पूरुषार्थ इस चालीसा पाठ से मिलेंगे । यह कलि युग है । इस युग में मानव आलसी है । सद्यः फल दायिनी – तुरंत फल देने वाली कोही चाहता है। इसी से श्री तुलसीदास जी – इस फल श्रृति को काव्य के आरंभ में ही सद्यः – तुरंत चतुर्विध पुरुषार्थ स्र्प फल इस चालीसा के पाठकों को मिलेंगे – कह रहे हैं। इनके मिलने में ज़रा भी संदेह नहीं है । इसी से अंत तक न रह कर आरंभ में ही कह दिया है। ये मिलने वाले फल तो अल्प सुख के नहीं, ये तो परम पुरुषार्थ हैं ।

पुरुषार्थ माने पुरुषों से अभीप्सित है । इस संसार में वे केवल चार ही हैं। वे हैं धर्म–अर्थ--काम–मोक्ष । धर्म माने वेद प्रतिपादित मानव के कर्तव्य बताये जाने वाले विषय । उन विषयों को कर्म–उपासना आदि को यथा–विधि आचरण करने से मिलने वाला विशेष पुण्य । अर्थ माने धन (सुख पूर्वक जीवन बिताने योग्य) । काम माने कामना । मोक्ष माने कैवल्य या सांसारिक बंधन से मुक्ति। इनमें अर्थ–काम पूर्ण स्र्पेण ऐहिक हैं। – इस लोक से सम्बन्ध रखते हुए सीधा मोक्ष के काम नहीं आते हैं । लेकिन इन्हें धर्म पूर्वक आचरण करने से मोक्ष के काम आते हैं । इस कारण अर्थ–काम को धर्म पूर्वक भोगते हुए मोक्ष कामी बनकर बहु जन्म समार्जित पुण्य परिणाम के स्र्प में प्राप्त इस मानव जन्म को सफल बना लेना चाहिए । यह हनुमान चालीसा नामक जो स्तोत्र है वह मोक्ष मार्ग के अनुकूल और अर्थ–काम को धर्म पूर्वक आचरण करने की प्रेरणा दे देगा । यही नहीं, आखिर श्रीराम प्रेम का जो सब से महान फल है वह भी मिल जायेगा ।

दोहा

बुद्धि हीन तनु जानि कै, सुमिरौ पवन कुमार ।
बल बुधि बिद्या देहु मोहि, हरहु कलेस बिकार ।।

अर्थ : तनु = (यह) शरीर ; बुद्धिहीन = बुद्धिहीनता से मिला है; जानिकै = जानकर ; पवन कुमार = हनुमान को; सुमिरौ = स्मरण करूँगा ; (वे) मोहि = मुझे ; बल = बल को; बुधि = बुद्धि को; बिद्या= ज्ञानको; देहु = देगा (देदेगा) और बिकार = (कामादि) दोषों से होने वाले कलेस = क्लेशों को; हरहु= हरण करे (दूर करे)

भाव : यह शरीर बुद्धि हीनता से मिला, जानकर हनुमान का स्मरण करूँगा । वे मुझे बल, बुद्धि, विद्या प्रदान करने के अतिरिक्त कामादि दोषों से होने वाले दुःखों को दूर करें।

व्याख्या : बुद्धि हीन तनु जानि कैः– मैं अपने आत्मस्वरूप को न पहचान कर स्वस्वरूपानुसंधान के बिना, इस शरीर को ही 'मैं' के रूप में समझते हुए बुद्धि हीन होकर अज्ञान याने शरीरात्मभ्रांति से, आत्मानात्म विवेक विहीन होकर दुःखों को भोग रहा हूँ।

परमात्मेति चाप्युक्तो देहेस्मिन् पुरुषः परः ।

–भगवद्गीता १३–२३

पुरुषः = पुरुष माने आत्मा; अस्मिन देहे (सति) अपि = इस शरीर में रहने पर भी; परः = शरीर से अन्य ; परमात्मा इति = परमात्मा ही है ; उक्तः = कहा गया है। गीता का ऐसा वचन है – आत्मा के इस शरीर में रहने पर भी वह आत्मा शरीर से भिन्न है, परमत्मा है।

य एवं वेत्ति पुरुषं प्रकृतिंच गुणैस्सह ।
सर्वथा वर्तामानो z पि नसभूयोभि जायते ।

– भगवद्गीता – १३–२४

यः = जो एवं = इस प्रकार ; वेत्ति = जानता है ; पुरुषम् = जीव को, प्रकृतिं = प्रकृति को ; च = तथा ; गुणैः = प्रकृति के गुणों के ; सह = साथ ; सर्वथा = सभी तरह से; वर्तमान = स्थित होकर, अपि = के बावजूद ; न = कभी नहीं; सः = वह ; भूयः = फिर से, अभिजायते = जन्म लेता है ।

भाव : जो व्यक्ति, प्रकृति, जीव तथा प्रकृति के गुणों की अंतः क्रिया से संबन्धित इस विचार धारा को समझ लेता है उसे मुक्ति की प्राप्ति सुनिश्चित है। उसकी वर्तमान स्थिति चाहे जैसी हो, यहाँ पर उसका पूनर्जन्म नहीं होगा । याने पुनर्जन्म रहित मोक्ष को पायेगा ।

इस प्रकार प्रकृति – पूरुष का ज्ञान जिसे है वह अनात्मा को याने दृश्य को, प्रकृति को अपने से (पुरुष को) अन्य रूप में देखते हुए उससे बिना संपर्क के रहते हुए मुक्त होकर फिर से नहीं जन्मेगा ।

इस आत्मानात्म का विवेक गत जन्म में न होने से यह शरीर मुझे प्राप्त हुआ है याने मैं फिर से जन्म लेकर शरीर को धारण कर चुका हूँ ।

सुमिरौ पवन कुमार : तुलसी कह रहे हैं कि ऐसे आत्म ज्ञान प्रदान करने के हेतु पवन पुत्र का स्मरण करूँगा । लेकिन ऐसे आत्म ज्ञान की प्राप्ति के लिए हनुमान को ही क्यों स्मरण करना चाहिए ? समाधान है कि एक मात्र हनुमान ही परिपूर्ण आत्म ज्ञान को प्रदान करने में समर्थ हैं । ज्ञानिनां अग्रगण्य हैं – ज्ञानियों में हनुमान अग्रगण्य कहे गये हैं ।

श्रीराम रहस्योपनिषद् में इस प्रकार है– एक बार श्री हनुमानजी के पास सनकसनंदनादि महर्षि ज्ञानार्थी होकर गये । उनके दर्शन कर, हनुमान से! अष्टादश पुराणों में, श्रृति, स्मृति, इतिहासों में, षट्शास्त्रों में और अध्यात्म विद्याओं में प्रतिपादित रहस्य को मालूम कराने की प्रार्थना की । तब हनुमान ने इस प्रकार कहा –

राम एव परं ब्रह्म, राम एव परं तपः ।
राम एव परं तत्वं, श्रीरामो ब्रह्म तारकम् ॥

श्री राम ही पर ब्रह्म है; श्रीराम ही श्रेष्ठ तप का स्वरूप है । श्रीराम ही परम तत्व है । श्रीराम ही तारक ब्रह्म है ।

इस प्रकार राम तत्व के रहस्य को महर्षियों को बताने वाले हनुमान परम ज्ञानी हैं।

बल बुधि बिद्या देहु मोहि : 'नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः" । (यह आत्म ज्ञान (स्वरूप ज्ञान) बलहीन को नहीं मिलता। कायर साधना नहीं करसकता ।

"बुद्धिर्यस्य बलस्तस्य" = जिस के बुद्धि है बल भी उसीको है। बुद्धि माने विवेक शक्ति । विद्या माने ज्ञान है। ज्ञान से माया की ग्रंथियाँ छूटजाती हैं । फिर माया माने क्या है ? श्री शंकराचार्य ने वाक्य सुधा (20) में इस प्रकार कहा है –

अस्ति भाति प्रियं रूपं नाम चेत्यंश पंचकम्।
आद्यत्रयं ब्रह्मरूपं, जगत्रूपं ततोद्वयम् ।।

अस्ति = है, भाति = प्रकाशित है, प्रियं = प्रिय, अस्ति = यह सत् सत्य है। भाति = यह चित्त है· = ज्ञान, प्रियं = यह आनंद है = सत् – चित् – आनंद (सच्चिदानंद)

ये तीनों अंश समष्टि रूप में ब्रह्म या आत्मा है । इस से भिन्न नाम रूप के दोनों अंश समष्टि रूप में अनात्मा के लक्षण हैं। वास्तव में अनात्मा ही माया है। (जगत्) सभी संसारिक दुःखों का मूल है।

हरहु कलेस बिकार : अनेक प्रकार के क्लेशों को पाप –तापों –विभिन्न विकारों को दूर करने की प्रार्थना तुलसी दास हनुमान से कररहे हैं । क्लेश पांच प्रकार के हैं – पातांजलि योगसूत्रों (2,3) में इस प्रकार वर्णित है।

अविद्या z स्मिता रागद्वेषाभिनिवेशा : पंचक्लेशाः

1. अविद्या – माया , अज्ञान, 2. अस्मिता = अहंकार, ममकार 3. राग = प्रेम, अनुराग 4 द्वेष = ईर्ष्या, असूया, क्लेश आदि 5. अभिनिवेश = अभिमान, गर्व आदि ।

विकार छः प्रकार के हैं ।

"षड्भाव विकारा भवंतीति वार्ष्यायणिः
जायते, अस्ति, विपरिणमते, वद्र्धते, अपक्षीयते,
विनश्यति इति"।

– पातंजल महाभाष्य

1. उत्पत्ति 2. स्थिति 3. परिणाम 4. वृद्धि 5. क्षय 6. विनाश इस प्रकार पंच विध क्लेशों और षड् विध विकारों को दूर करने की हनुमान जी से श्री तुलसीदास प्रार्थना कर रहें हैं । हमारी प्रार्थना भी तो यही है ।

चौपाई – १

जय हनुमान ज्ञान गुण सागर
जय कपीस तिहु लोक उजागर ।।

अर्थ : ज्ञानगुण सागर = ज्ञान, सौशील्य, सौजन्य आदि मंगलकर गुणों के सागर जैसे / हनुमान = हे आंजनेय! (तुम्हें) जय = जय हो, तिहु लोक = तीनों लोकों में, उजागर = प्रकाशित रहनेवाले, कपीश = कपीश्वर, (आंजनेय! तुम्हें) जय = जय हो ।

भाव : ज्ञान सौशील्य, सौजन्य आदि मंगलकर गुणों के सागर जैसे आंजनेय ! तीनों लोकों में सर्वदा प्रकाशित रहने वाले और सभी वानरों में श्रेष्ठ आंजनेय ! तुम्हारी जय हो, जय हो ।

व्याख्या : हनुमन्नाम की विवेचना :

'हनुमत्' शब्द का संस्कृत की प्रथमा विभक्ति के एक वचन 'हनुमान' बनता है। यह हनुमत् शब्द आंजनेय के समग्र व्यक्तित्व को सूचित करता है। हन् धातु का प्रयोग हिंसा या गति के अर्थ में होता है । इस धातु के अंत में 'उ' कार 'मतुप्' नामक तद्धित प्रत्यय इस, प्रत्यय में मत के रूप में ही शेष रहता है। यह व्याकरण की बात है और इस प्रत्यय का प्रयोग 'रहना' अर्थ में भी होता है । तब हनुमत् का अर्थ हनुके रहनेवाला होता है । मेदिनी कोश में हनु शब्द के कई अर्थ हैं ।

हनुर्हट्टविलासिन्यां मृत्यावस्त्रे गदे स्त्रियाम् ।
द्वयोःकपोलावयवे हीनंगर्यो नयोस्त्रिषु ।।

हनु शब्द के वेश्या, मृत्यु, अस्त्र, रोग, दोनों कापोल अर्थ कहेजाते है।

इन में अस्त्र और मृत्यु, दोनों हनु धातु के हिंसार्थ के अनुकूल हैं। अस्त्र में गत्यर्थ (गमन अर्थ) भी निहित है।

'हनु' शब्द के क्षेपण (फेंकना) दूरीकरण (दूरकरना) अर्थ भी हैं ।

इससे हनुमत् शब्द के अस्त्रवान्, मृत्युमान, प्रहार या संहार करनेवाले, प्रचंड शक्तिमान आदि अर्थ भी विदित हो रहे हैं । इन अर्थों को देखने से स्पष्ट होता है कि हनुमान सर्व संकष्ट हर्ता है । विपत्तियों को तथा सर्व विध भूत–प्रेत–पिशाचादि ग्रहादि बाधाओं को दूर करनेवाले हैं, शत्रुओं को दमन करनेवाले हैं और असुरों का संहार करनेवाले हैं।

हनु माने ठोडी है । इस में पाणिनीय व्याकरण सूत्र (५–२–६४) मतुप् प्रत्यय के जुडने से हनुमत् शब्द बनता है। इससे स्पष्ट होता है कि हनुमत् शब्द का अर्थ विलक्षण ठोडीवाला है। इस 'हनुमत् शब्द से संबंधित प्रसंग वेद पुराणों में कई जगहों पर वर्णित हैं –

हनुमत् चरित्र का प्रामणिक ग्रंथ "पराशरसंहिता" के अनुसार वैशाख मास, कृष्ण पक्ष, दशमी, शनिवार (शनीचर) वैधृती योग, कर्काटक लग्न में हनुमान का जन्म हुआ है ।

वालमीकि रामायण में 'श्रीहनुमान की कथा' इस प्रकार वर्णित है। हनुमान अंजनादेवी के कुमार हैं। एक दिन माता अंजना इन्हें पालने में लिटाकर, पूजा केलिय वनमें फल–फूल लेने गयी । केसरी भी कृछ काम से बाहर गये। इन्हें जोर से भूख लगी । अब क्या खायें, चारों ओर दृष्टि दौडाने लगे । खाने को कोई भी वस्तु दिखाई नहीं पड़ी । दैव योग से उसी समय मरीचिमाली सूर्य भगवान, अपनी बाल किरणों को प्रसारित करते हुए आकाश मण्डल में पूर्व दिशा की ओर उदित हुए । बालसूर्य को अंजना के बाल लाल ने देखा / वे बडे प्रसन्न हुए । उन्होंने समझा–यह कोई लाल–लाल चमकीला फल ही है। चलो, इसे ही खाकर अपनी भूखमिटा ले। वायु के पुत्र ठहरे, ये अनायास ही आकाश में अपने आप उड़ने लगे । उस समय न तो वहाँ कपिवर केसरी हीथे और न माता अंजना ही। सर्वत्र व्याप्त पिता पवन देव उनकी देख–रेख कर रहे थे / अपने पुत्र को आकाश में सूर्य भगवान की ओर उड़ते देखकर पवनदेव शीतल मंद सुगंध बिखेरते हुए उनके पीछे–पीछे चले / संयोग से उसदिन थी अमावास्या / सूर्यग्रहण लगनेवाला था । राहु सूर्य को ग्रसने आरहा था हनुमान सूर्यदेव के पास पहूँच गये । इन्होंने समझा यह कोई दूसरा बालक इस फल को खाने बढा आ रहा है। बस इन्होंने राहु को उपनी पूँछ में लपेट कर कसकर जो एक झापड मारा कि राहु की सिटिल्ली भूल गई । जिस किसी तरह पूँछ से छूट कर देवराज इंद्र के समीप गया और अपनी रक्षा की प्रार्थना की । देवराज इन्द्र ने सोंचा – ऐसा कौन--सा बली आगया । वे ऐरावत

पर चढकर सूर्य के पास गये । इंद्रने हनुमान को ललकारा। ये तो तैयार ही थे । दोनों में घमासान युद्ध हुआ । हनुमान जी ने अपनी पूँछ से लपेट कर जो मारा तो इन्द्र कहीं जा गिरे, ऐरावत कही जा गिरा और ऐरावत को निगलने चले । तभी इन्द्र ने इनकी ठोडी (हनु) में वज्र मारा जिससे इनकी बायीं हनु की हड्डी टूट गई। ये मूर्छित होकर भूमि पर गिर पड़े । इस प्रकार वज्र से इनकी हनु (ठोडी) टूटने से इनका नाम हनुमान होगया । यह नाम इस प्रकार विख्यात हुआ । (वा.रा.किष्किन्ध कांड, सर्ग ६६)

ऋग्वेद का एक मंत्र हनुमान के बारे में इस प्रकार बता रहा है –

"मम च्चनते मघवन् व्यं सो
निविविध्वां अप हनू जघान
अथा निविद्ध उत्तरो बभूवां छिरो
दासस्य संपिणग्वधेन "

– (ऋग्वेद ४–१८–९)

मघवन् = हेइंद्र ! ते = तुम्हे, चन = निश्चय ही, ममत् = बाधित, व्यंस्यः = (तुम्हारे ऐरावत को फल समझकर ग्रसने आ प्रयत्न करने वाले महावीर) वानरेन्द्र, निविविध्वां = पीडित तुझे (तब) अप = आंजनेय को) दूर भगाने को, वधेन = वज्रायुध से, हन् = ठोडीपर (हनू–यह प्रथमा विभक्ति का द्विवचन रूप है) अर्थ दो ठोडी हैं । लेकिन यहाँ वास्तव में हनौ = ठोडी पर सप्तमी विभक्ति का एक वचन रूप प्रयुक्त होना चाहिए । हनू पद, प्रयोग से विभक्ति और वचन बदल गये हैं । ठोडी पर सप्तमी एक वचन में प्रयोग ही सही है । ऐसे समय समीक्षक हनौ – विभक्ति वचनयोः व्यत्यय सूचित करते हैं । जघान = मारदिया, अथ = उसकेबाद दासस्य = दास के (यहाँ दास माने वानरेंद्र आंजनेय भविष्य में रामदास बनने जारहे हैं न) शिरः = सिरको (वास्तव में ठोडी के अर्थ में प्रयुक्त करना चाहिए) लेकिन अवयवे z वयविनः प्रयोगः अवयविनः अवयव है जिस में, इस प्रकार ठोडी के बदले 'शिर'कहा गया है। संपिणक् = जोर से चीरडाला – ऐसा मंत्रका अर्थ है । इस प्रकार वेद के अनुसार भग्नहनुवाला हनुमान है ।

"क्रोधो z पि देवस्य वरेण तुल्यः" भगवान का क्रोध भी वर के समान बताया गया है। हनुमान के लिए वज्रघात भी लाभदायक ही सिद्ध हुआ है । वज्रघात से मृततुल्य इस बालक को वायुदेव ने लेजा कर गुफा में रख दिये । इंद्र पर कुपित होकर प्रतिक्रिया के रूप में इन्होंने अपना वेग बहुत धीमा कर दिया । इससे त्रिभुवन के समस्त प्राणियों के प्राण–अपान की गति रूक गई । तीनों लोकों में घबराहट मच गयी । देवता दौडे–दौडे ब्रह्माजी के समीप आये । ब्रह्माजी, शिवजी, विष्णुजी तथा समस्त देवताओं के साथ आये, जहाँ हनुमान जी अचेत पडे थे और बालक का स्पर्शकर होश में ले आये । भग्न ठोडी जोड कर बालक को कई वर देकर आशीर्वाद दिया कि यह बालक आगे चलकर महावीर बनेगा ।

अमित्राणां भयंकरो मित्रणामभयंकरः ।
अजेयो भविता पुत्रस्तव मारूत मारूतिः ।।
कामरूपः कामचारी कामगः प्लवतां वरः ।
भवत्यव्याहतगतिः कीर्तिमांश्च भक्ष्यिति ।।

– वा.रा. ७–३६–२३/२४

"मारूत ! तुम्हारा यह पुत्र मारूति शत्रुओं के लिये भयंकर और मित्रों के लिए अभय दाता होगा । युद्ध में इसे कोई भी जीत न सकेगा । यह अपनी इच्छा के अनुसार रूप धारण कर सकेगा, जहाँ चाहेगा, जा सकेगा । इस की गति इसकी इच्छा के अनुसार तीव्र या मंद होगी तथा वह कहीं भी रूक नहीं सकेगी । यह कपिश्रेष्ठबडा यशस्वी होगा " ।

इस प्रकार हनुमान ब्रह्माजी से अष्ट सिद्धियों को प्राप्त कर पहले से भी अधिक बलवाले बनगये । पवन देव इससे प्रसन्न होकर पूर्ववत बहने लगे ।

वाल्मीकि रामायण के उत्तरकांड में यह बात इस प्रकार वर्णित है –

मत्करोत्सृष्ट वज्रेण हनुरस्य यथाहतः
नाम्रावै कपि शार्दूलो । भविता हनुमानिति

– (वा.रा.उत्तर – ३६–११)

"मेरे हाथ से छूटे हुए वज्र के द्वारा इस बालक की हनु (ठुड्डी) टूट गयी थी । इस लिए इस कपि श्रेष्ठ का नाम "हनुमान" होगा । ऐसा कहकर इन्द्र ने आशीर्वाद दिया कि इस हनुमान पर आगे चलकर मेरे वज्र का प्रभाव नहीं होगा। इसका शरीर वज्र से भी बलवान होगा ।

वाल्मीकि रामायण में जांबवान ने हनुमान से कहा –

" तदा शैलाग्र शिखरे । वामो हनुरभज्यत ।
ततोहि नाम्धेयंते । हनुमानिति कीर्तितम् ।।

– (किष्किन्ध ६६–२४)

– उस समय उदय गिरि के शिखर पर तुम्हारे हनु (ठोडी) का बायाँ भाग वज्रकी चोट से खंडित हो गया । तभी से तुम्हारा नाम हनुमान् पड़ गया ।

"जाकोबालबिनोद समुझि जिय डरत दिवाकर भोरको...
जाकी चिबुक चोट चूरन किय, रद–मद कुलिस कठोर को...

– विनय पत्रिका (३१–४)

हनुमान जी की बाल क्रीड़ का स्मरण करके (अब भी)प्रातः काल के समय भगवान सूर्य डरते हुए निकलते हैं और जिसकी ठोडी पर लगी–चोट ने कठोर वज्र के दाँतों का घमंड भी चूर–चूर कर डाला था ।

हर्षदेव महाक्षपणक पुरूषोत्तम देव के एकाक्षर कोश में (पृ.९८, हनुमत) हनुमत शब्द का अर्थ दूसरे ढंग से बताया गया है ।

ह = ब्रह्म, शिव, आनंद, आकाश, जल आदि, हकार के अर्थों को मेदिनी कोश नीचे लिखे अनुसार बता रहा है –

हश्शिवे सलिले शून्ये; धारणे मंगले z पिच ।
गगने नकुलीशेच रक्ते ना केच वर्ण्यते ।।

ह= शिव, जल, शून्य, धारण, मंगल, आकाश, नकुलीश, रक्त, स्वर्ग आदि ।

– मेदिनी कोश – एकाक्षर 33–1

नु = पूजा करना, प्रशंसा करना, 'ण' धातु के 'क्विप्' प्रत्यय जुडने से यह रूप बनता है ।

ब्रह्मवाचक 'ह'कार, पूजन वाचक 'नु' कार मिलकर हनु बनने पर उस में 'मतुप' (मत्) प्रत्यय जुडने से हनुमत शब्द बनता है। राम रूप ब्रह्म की सेवा करनेवाला – ऐसा अर्थ है। यही नहीं पुरूषोत्तम देव के कोश से –

ह = शिव, आनंद, आदि ।

नु = पूजा करना, प्रशंसा करना आदि ।

मा = लक्ष्मी, विष्णु आदि ।

न = बल, युद्ध, वीरता आदि अर्थ है ।

हनुमान कहने से मालूम होता है कि ये सभी अर्थ श्रीरामदूत मारुति के लिए ठीक बैठते हैं।

स्वामी दयानन्द विरचित 'संस्कृत वाक्य बोध' नामक ग्रंथ के ग्राम्य पशु प्रकरण (पृ.४५) में "अयं महा हनुत्वात् हनुमान् वर्तते" याने बहुत बड़ी ठोडी वाला होने से हनुमान् कहे जा रहे हैं ।

भोज से विरचित 'चंपू रामायण ' काव्य में हनुमान शब्द की विशेषता इस प्रकार है –

तपन पवन योर्यः प्राप्तवान् पुत्र भावं
शत मखकृत पालिं विद्यया जन्मना च
स तु दशमुखकीर्ति स्तोमसोमस्य पक्षः
चरम इव तनूमान् प्राप रामं हनूमान् ।।

– चं.पू.रा. ४–६

आंजनेय ने सूर्य भगवान के पास सभी विद्याओं को सीख लिया है । सूर्य के शिष्य हैं – यह बात वाल्मीकि रामायण के उत्तर कांड में इस प्रकार है –

मार्तण्डस्त्वब्रवीत्तत्र । भगवान् तिमिरापहः
तेजसो z स्य मदीयस्य । ददामि शतिकां कलाम् ।।
यदाच शास्त्राण्यध्येतुं शक्तिरस्य भविष्यति ।
तदा z स्य शास्त्रं दास्यामि । येन वाग्मी भविष्यति ।।
न चास्य भविताकश्चित् सदृशः शास्त्रदर्शने ।

– वा.रा.उ.कां. ३६–१३–१४

इसके बाद वहाँ अंधकार के नाशक सूर्य भगवान् ने कहा –जब इस में शास्त्राध्ययन करने की शक्ति आयेगी तब मैं ही इसे शास्त्रों का ज्ञान प्रदान करूँगा, जिस से यह अच्छा वक्ता होगा । शास्त्रज्ञान में कोई भी इसकी समता करने वाला न होगा ।

वालि से वार्तलाप करते हुए भगवान राम ने कहा–

ज्येष्ठो भ्राता पितावापि यश्च विद्यां प्रयच्छति ।
त्रयस्ते पितरो ज्ञेयाः धर्मे च पथि वर्तिनः ।।

– (वा.का.कि. १८–१३)

विद्या प्रदान करने से सूर्य के पुत्र आंजनेय हुए । बड़ा भाई, पिता तथा जो विद्यादेता है, वह गुरू– ये तीनों धर्म मार्ग पर स्थित रहनेवाले पुरूषों केलिए पिता के तुल्य माननीय हैं– ऐसा समझना चाहिए । अनुग्रहत्व से वायु के पुत्र हुए। इंद्रने इनकी ठोडी पर प्रहार किया है। कृष्ण पक्ष में कांति क्रम से क्षीण होकर आखिर पूर्णरूप से खतम हो ही जाती है । भाव यह है कि रावण की कांति को आंजनेय ने ऐसे ही किया है। ऐसे हनुमान् श्रीराम के पास आये।

पद्म पुराण में हनुमान के बारेमें इसप्रकार है –

पुरे हनुरूहे यस्मात् जात संस्कारमाप्तवान् ।
हनुमानिति तेनागात् । प्रसिद्धिं समहीतले ।।

हनुरूह नामक पुर में जन्म लेकर संस्कारवान होने से हनुमान के रूप में विख्यात हुए ।

ज्ञानगुण सागर : ज्ञान और गुणों के अगाध समुद्र जैसे हैं । मुक्तिकोपनिषत्, राम रहस्योपनिषत् आदि में इन की महिमा विशेष रूप से गाई गयी है। सनकादि महर्षि भी इन से ज्ञान पाये है । साक्षात् भगवन सूर्य इनके गुरू हैं । सूर्य की सेवा करके सभी वेदों का अध्ययन कर ये महान् ज्ञानी बने हैं ।

आंजनेय को ज्ञान सागर और प्रज्ञावान कहा जाता है। जब ये सब से पहले सुग्रीव की आज्ञा से श्रीराम के पास गये तो इन्हें देखकर, इनके प्रश्नों को सुनकर लक्ष्मण से श्रीराम ने जो बातें कही, वे इनके प्रज्ञावान होने के संबंध में सही हैं –

नानृग्वेद विनीतस्य ना यजुर्वेद धारिणः ।
ना सामवेदविदुषः शक्यमेवं विभाषितुम् ।
नूनं व्याकरणं कृत्स्नमनेन बहुधाश्रृतम् ।
बहु व्याहरताऽनेन न किंचिदपशब्दितम् ।।
नमुखे नेत्रयोश्चापि ललाटे च भ्रुवोस्तथा ।
अन्येष्वपिच सर्वेषु दोषः संविदितः क्वचित् ।।
अविस्तरमसंदिग्धमविलम्बितमव्ययम् ।
उरःस्थं कंठगं वाक्यं वर्तते मध्यमस्वरम् ।
संस्कार क्रम संपन्नमद्भुतामविलंबिताम् ।
उच्चारयति कल्याणीं वाचं हृदय हर्षिणीम्।।
अनया चित्रया वाचा त्रिस्थान व्यंजनस्थया ।
कस्य नाराध्यते चित्त मुद्यता सेररे रपि ।।
एवं विधो यस्य दूतो न भवेत् पार्थिवस्यतु ।
सिध्यन्ति हि कथं तस्य कार्याणां गत यो ऽ नघ ।
एवं गुणगणैर्युक्ता यस्य स्युः कार्य साधकाः ।
तस्य सिध्यन्ति सर्वे ऽ र्था दूत वाक्य प्रचोदिताः । ।।

– वा.रा. किष्कं. सर्ग – ३ श्लोक २८–३५)

जिसे ऋग्वेद की शिक्षा नहीं मिली, जिसने यजुर्वेद का अभ्यास नहीं किया, जो सामवेद का विद्वान नहीं है, वह इस प्रकार सुंदर भाषा में वार्तालाप नहीं कर

सकता । निश्चय ही इन्होंने समूचे व्याकरण का कई बार स्वाध्याय किया है क्योंकि बहुतसी बाते–बोले जाने पर भी इनके मुँह से कोई अशुद्धि नहीं निकली । संभाषण के समय इनके मुख, नेत्र, ललाट, भौंह तथा अन्य अंगों से भी कोई दोष प्रकट हुआ हो – ऐसा कहीं ज्ञात नहीं हुआ । इन्होंने थोडे में ही बडी स्पष्टता के साथ अपना अभिप्राय निवेदन किया है । उसे समझने में कोई संदेह नहीं हुआ है। रुक रुक कर अथवा शब्दों या अक्षरों को तोड – मरोडकर किसी ऐसे वाक्य का उच्चारण नहीं किया है, जो सुनने में कर्ण कटु हो । इनकी वाणी हृदय में मध्यम रुप से स्थित है और कंठ से वैखरी रुप में प्रकट होती है । अतः बोलते समय इनकी आवाज न बहुत धीमी रही है और बहुत ऊँची, मध्यम स्वर में ही इन्होने सब बातें कही है। ये संस्कार और क्रमसे संपन्न, अदभुत, अविलम्बित तथा हृदय को आनंद प्रदान करनेवाली कल्याण मयी वाणी का उच्चारण करते हैं । हृदय, कंठ और मूर्धा – इन तीनों स्थानों द्वारा स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त होनेवाली इनकी इस विचित्र वाणी को सुन कर किस का चित्तप्रसन्न न होगा । वध करने के लिए उठाये हुए शत्रुका हृदय भी इस अद्‌भुत वाणी से बदल सकता है । निष्पाप लक्ष्मण ! जिस राजा के पास इनके समान दूत न हो उन के कार्यों कीं सिद्धि कैसे हो सकती है ? जिस के कार्य साधक दूत ऐसे उत्तम गुणों से युक्त हो, उस राजा के सभी मनोरथ दूतों की बातचीत से ही सिद्ध हो जाते हैं ।

हनुमान आध्यात्मिक दृष्टि से भी प्रज्ञावान है । रामायण द्वारा मालूम हो रहा है कि महर्षियों की गोष्ठियों में ब्रह्म ज्ञान के बारे में वे प्रवचन दिया करते थे । वे केवल उपदेशक, व्याख्याता ही नहीं, क्रिया शील भी हैं पद्मपुराण बताता है कि हनुमान् बहुत बडे प्रभावशाली, विनय शील, महा बलवान, सकल शास्त्र पारंगत और परोपकार परायण है ।

"सिद्ध विद्यः प्रभावाढ्यो विनयज्ञो महाबलः ।
सर्वशास्त्रार्थ कुशलः परोपकृति दक्षिणः" ।।

रामरक्षा स्तोत्र (श्लोक – 33) में श्री बुधकौशिक मुनिने श्री हनुमान की स्तुति इसप्रकार की है –

"मनोजवं मारुत्त तुल्य वेगम् ।
जितेंद्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।।

वातात्मजं वानर यूथ मुख्यं ।
श्री राम दूतं शरणं प्रपद्ये ।।

"जो मन की भाँति बलवान है, जिन का वेग वायु के बराबर है, जो जितेंद्रिय है और बडे बुद्धिवाले हैं, जो वायु के पुत्र और वानरसेना के अग्रगण्य हैं, उन श्री राम के दूत हनुमान् जी को मैं बारंबार सिरसे प्रणाम करता हूँ।"

समुद्रोल्लंघन प्रसंग में जांबवान ने हनुमान् के बल और बुद्धि की प्रशंसा इस प्रकार की है

वीर वानरलोकस्य सर्व शास्त्र विदां वर ।
तूष्णीमेकांतमाश्रित्य हनूमन किं नजल्पसि ।।

– (वा. रा. किष्किंध 66–2)

वानर जगत् के वीर। संपूर्ण शास्त्र वेत्ताओं में श्रेष्ठ हनुमान्। तुम एकन्त में आकर चुपचाप क्यों बैठे हो ? कुछ बोलते क्यों नहीं ?

समुद्रोल्लंघन के समय हनुमान् जी की बुद्धि की परीक्षा लेने देवताओं ने सर्पोंकी माता सुरसा को भेज दिया। उसने अपने मुख को बढाते – बढाते सौ योजन चौडा बना लिया और हनुमान् को ग्रसने आते देखा तो ये तुरंत छोटा स्वरूप बनाकर उसके मुख में घुस गये, झट से बाहर आकर उस देवी को नमस्कार किया। तब सुरसाने हनुमान् की समय स्फूर्ति को, बुद्धि कौशल को, साहस को और निर्भयता को देखकर अवाक् रह गयी और प्रसन्न होकर

गच्छ साधय रामस्य कार्यं बुद्धिमतां वर ।

– (अध्यात्म रा. सुंदर १–२३)

बुद्धिमानों में श्रेष्ठ आंजनेय। जाओ, राम के कार्य को पूरा करो – कहकर आशीर्वाद दिया।

श्री राम चरित मानस के सुन्दर कांड के मंगला चरण श्लोक में श्री तुलसी ने श्री हनुमान् के बल, बद्धि, विद्या, सेवाभाव और कर्तव्य निष्ठा का इस प्रकार वर्णन किया।

अतुलित बलधामं, हेमशैलाभदेह्म् ।
दनुज वन कृशानुं, ज्ञानिना मग्रगण्यम् ।।
सकल गुण निधानं, वानराणामधीशम् ।
रघुपति प्रिय भक्तं, वात जातं नमामि ।।

"जिनकी देह में अथाह बल भरा है, जिनका शरीर सुवर्ण पर्वत (सुमेरु) के समान है, चमाचम सुनहला चमक रहा है । जो दैत्यों को उसीप्रकार नष्ट कर सकते हैं जैसे वन को अग्निदेव जला डालते हैं, जो ज्ञानियों में सबसे बढकर है और संपूर्ण गुणों से युक्त हैं, ऐसे वानरों के स्वामी तथा राम के प्रिय भक्त हनुमान् को मैं सादर प्रणाम करता हूँ । "

श्रीराम चरित मानस के प्रारंभ में ही (बाल कांड श्लो. ४) श्रीतुलसी ने आंजनेय जी की प्रार्थना इस प्रकार की है-

"सीता राम-गुण ग्राम पुण्यारण्य-विहारिणौ ।
वंदे विशुद्ध विज्ञानौ कवीश्वर कपीश्वरौ ।।

सीता और राम के गुणों के पवित्रवन में निरंतर विहार करने वाले (सीता और राम का पूरा चरित्र भली प्रकार जाननेवाले) विशुद्ध विज्ञान वाले (राम और सीता के वास्ताविक तत्व को ठीक-ठीक जानकर अपने रामायण में उसका विज्ञान या पूरा विवरण देनेवाले) कवीश्वर(श्री वाल्मीकि) और कपीश्वर (श्री हनुमान् जी) को मैं सादर प्रणाम करता हूँ इससे स्पष्ट है कि वे दोनों कवीश्वर और कपीश्वर हमारे लिये आराधनीय हैं ।

राम चरित मानस के अलावा विनय पत्रिका (२६-८, ३३-६) में भी श्री हनुमान की बुद्धिमत्ता, बल, सगुण भंडार, ज्ञान निष्ठा और सर्वज्ञता की तुलसी ने भूरि - भूरि प्रशंसा की है ।

मानस पीयूष (पाँचवें भाग किष्किं २३२ पृ) में बताया गया है श्री हनुमान विवेक, वैराग्यादि गुण संपन्न और उत्तम साधक है । आध्यात्मिक दृष्टि से देखेने से वे मानव शरीर में प्राण शक्ति रूप में विद्यमान है ।

महाभारत में (अरण्य पर्व १४७–११) भीमसेन ने आंजनेय की प्रशंसा इस प्रकार की है –

भ्राता मम गुण श्लाघ्यो बुद्धिसत्व बलान्वितः ।
रामायणेzति विख्यातः श्रीमान् वानर पुंगवः ।।

वानर श्रेष्ठ हनुमान मेरे भाई हैं । उनके गुण प्रशंसनीय हैं, बुद्धिमान, धैर्यवान, बलवान उत्साही है । श्री रामायण में बहुत विख्यात् हैं ही ।

श्रीमद भागवत (११–१६–२९) में श्री कृष्ण ने उद्धवजी से इसप्रकार कहा –

वासुदेवो भगवतां. त्वं तु भागवतेष्वहम् ।
किंपुरुषाणां हनुमान्ः विद्याध्राणां सुदर्शनः ।।

हे उद्धव ! षडैश्वर्य संपन्न महापुरूषों में मैं वासुदेव हूँ । भागवतों और भगवान के भक्तों में मैं तुम (याने उद्धव हूँ) किंपूरूषों (वानर) में हनुमान हूँ । विद्याधरों में सुदर्शन हूँ । (याने आंजनेय साक्षात् भगवान का स्वरूप ही है।)

श्री हनुमान को तुलसीदास जी ने "ज्ञानगुणसागर" कहा / उसके पीछे इतनी विशेषताएँ निहित हैं ।

जय कपीस : कपीश्वर की जय हो । हनुमान वानरों के प्रभु हैं – वानरों के प्राणों के रक्षक हैं । इसी से ये कपीश्वर है ।

नाथ काजु कीन्हेउ हनुमाना
राखे सकल कपिन्ह के प्राना

– (रा.च.मा. ५–२८–३)

सीतामाता के दर्शन कर वापस आये हनुमान के साथ मिलकर सभी वानरों ने सुग्रीव से कहा –

हे स्वामी ! श्री हनुमान जी ने ही श्री राम के कार्य को पूरा करके आकर हमारे प्राणों की रक्षा की है ।

'कपीस' शब्द का अर्थ दूसरे ढंग से भी समझ सकते हैं । 'कपि' याने कपिरूप में स्थित शिव हैं। वेदों में, उपनिषदों में रामायणादि ग्रंथों में और अनेक शास्त्रों में प्रतिपादित किया गया है कि हनुमान् साक्षात् रूद्र का ही रूप हैं –

सहस्र धारे वितते पवित्र आवाचं पुनंति
कवयो मनीषिणः रूद्रास एषामिषि रासो
अद्रुहः स्पशः स्वंचः सुदृशो नृचक्षसः

– (ऋग्वेद ९–७३–७)

इसका विवरण नीलकंठ भाष्य में इस प्रकार दिया गया है । सच्चिदानंद रूप, सर्वव्यापक रूप परम पवित्र रूप श्री महाविष्णु के (श्रीरामचन्द्र के) गुणों को गाकर वाल्मीकि आदि कवियों ने अपनी वाणी को सफल बना लिया है। इन में साक्षात् रूद्र रूप हनुमान भी विद्यमान है । वे स्वाभाविक द्रेषरहित है (अद्रहः), महावेगयुक है (इषीरः) गुप्तचर है या सीतान्वेषण किया है (स्पशः) सुन्दर गमन शील है (स्वंचः), अच्छ । परिशोधक है (सुदृशः), मानव रूप में स्थित सीता को प्रत्यक्ष रूप से देखा है (नृचक्षसः) ये सब गुण श्री हनुमान जी में विद्यमान है। वाल्मीकि की भाँति रूद्र ने (हनुमान ने) भी रामायण, हनुमन्नाटक आदि ग्रंथों की रचना की है।

ऋग्वेद में बताया गया है मंत्रद्रष्टा महर्षि ने कार्य सिद्धि के लिए रूद्ररूप हनुमान जी का आहवान किया है –

कृशानु मंत्रून तिष्यं सधस्थ आ
रूद्रंरूद्रेषु रूद्रियं हवामहे ।

– (ऋ. १०–६४–८)

नीलकंठ ने मंत्र रामायण भाष्यार्थ में (69) एकादश रूद्रों मे हनुमान जी को एकादश रूद्र के रूप में स्वीकार किया है और बताया है कि उन्होंने शत्रुओं का संहार किया है और वे परम कल्याण मूर्ति स्वरूप साक्षात् शिव ही है ।

पराशर संहिता के शतानन रावण वध वृत्तान्त में "रूपं तस्य बभौ यद्वत् रुद्रस्य पुरघातिनः" – शतकंठ के साथ युद्ध करते समय हनुमान जी त्रिपुर संहार करने वाले रुद्र की भांति बताये गये हैं ।

'रामोत्तरतापनी नामक उपनिषत् में (33) ब्रह्माजी ने श्रीराम को प्रणव स्वरूप में और एकादश रुद्र रूप में बताया है ।

"ओं हवै श्रीरामचन्द्रः स भगवान्
ये चैकादश रुद्राः भूर्भुवस्सुवस्तस्मै वै नमो नमः "

इससे स्पष्ट है कि श्रीराम और हनुमान जी रुद्र के रूप हैं, परब्रह्म के रूप हैं और परस्पर अभिन्न हैं ।

तारसारोपनिषद् में यह बात इसप्रकार स्पष्ट की गयी है –

ओं नमो नारायणाय ओमिति ब्रह्मा भवति
नकारो विष्णुर्भवति मकारो रुद्रो भवति

– ता. सा. उ १–५

याज्ञवल्क्य ने राजा जनक को ब्रह्मविद्या का उपदेश देते हुए बताया है कि ओंकार ब्रह्मबोधक, न कार विष्णु बोधक, मकार रुद्र बोधक मकारबोध्य रुद्र साक्षात् हनुमान् ही हैं ।

"मकाराक्षर संभूतः शिवस्तु हनुमान् स्मृतः

– ता.सा.उ. २–३

याज्ञवल्क्य के अनुसार मकाराक्षर संभूत शिव ही हनुमान है, यही नही, परब्रह्म स्वरूप नारायण साक्षात् शिव स्वरूप हनुमान् ही है ।

ओं योहवै श्री परमात्मा नारायणः
स भगवान् मकारवाच्यः शिवस्वरूपो
हनुमान भूर्भुवस्सुवस्तस्मै वै नमोनमः

– ता.सा.उ. ३–३

अन्यत्र

नादबिंदुकलातीतं उत्पत्ति स्थितिवर्जितम् ।
साक्षादीश्वर रूपंच हनूमंतं नमाम्यहम् ।।

बताया गया है ।

रूद्रयामिल में पार्वती से परमेश्वर ने कहा है –

हनुमान् स महादेवः काल कालस्सदाशिवः ।
भुक्तिदो मुक्तिदश्चैव सर्वद स्सर्व कामदः ।।

साक्षात् शिव काल रुप महादेव हैं और हनुमान भुक्ति – मुक्ति प्रदाता है ।

"आदित्यानां वासुदेवो हनुमान् वानरेषुच "

शिव पुराण (रूद्र संहिता – युद्ध खंड, २–५१) में त्रिपुर संहार के पहले रूद्र को साक्षात् हनुमान् ही कहकर देवताओं ने स्तुति की है ।

संप्राप्तः पवनात्मजः पटु महः ।
श्रीकंठ वैकुंठयोः ।।

हनुमन्नाटक (१३–३३) में हनुमान शिव केशव के तेज स्वरूप कहे गये हैं। इतना ही नहीं ,

देव ! रूद्रावतारोयं मारुतिः
रूद्र स्तुतिः क्रियताम्

उसी नाटक में (६ अंक) हनुमान की प्रशंसा रूद्र के अवतार के रुपमें की गई है ।

नारद पुराण (पूर्व खंड, तृतीय पाद – रामप्रोक्त कवच ७८–२४–२८) में हनुमान साक्षात् महेश्वर कहेगये हैं ।

स सर्व रूपस्सर्वज्ञः सृष्टि स्थिति करोऽवतु ।
स्वयं ब्रह्मा स्वयं विष्णुः साक्षाद्देओ महेश्वरः ।।

हनुमत्सहस्त्रनामों (१, ४, २१, ३८, १३४, ४७८, ४९६) में क्रम से हनुमान, रुद्र, शिव, विश्वनाथ, सदाशिव, महेश्वर, गिरिजाकांत आदि नामों का उल्लेख हुआ है । आनंद रामायण (सार – ११–२०) में

"रुद्रावतार स्संजज्ञे वायुपुत्रः प्रतापवान् "

हनुमान रुद्रावतार ही कहे गये हैं । उसी रामायण में अन्यत्र – त्रिपुर संहार के समय शिव को नारायण ने बाण के रूप में सहयोग दिया । इससे कृतज्ञ शिव ने – श्रीमन्नारायण जी श्रीराम के रूप में जब अवतरित हुए तब हनुमान के रूप में अवतरित होकर मदद की है और बताया गया है कि हनुमान जी हरिहरात्मक हैं और भोग – मोक्ष प्रदान करने में समर्थ हैं ।

पुरत्रिपुर संहारे स्वबाणत्वमुपेयुषे ।
विष्णवे रामरूपाय करिष्यन् प्रत्युपक्रियाम् ।।
अखिलैः प्रमथैः शंभुः हनूमद्रूपमाययौ ।
तथा प्रत्युपकारं सः विधायातिकृतज्ञताम्।।
शिव एव हरिस्साक्षात् हरिरेवशिवःस्मृतः।
उभयोरंतरंनास्ति भेदकृत्पापमश्नुते।।
विज्ञातमनयोर्यत्तु रूपं तदुभयात्मकम् ।
उपास्य हनुमत्संज्ञं भोगमोक्षप्रदं नृणाम् ।।

इंद्रजित ने जब श्रीराम आदि को नाग पाश से बांध दिया तो उसे छुडाने के लिए आये गरुड ने श्रीराम से कहा

साक्षात्वं भगवान् विष्णुः लक्ष्मीस्तु जनकात्मजा ।
सौमित्रिः फणि राजो z यं रुद्राश्च कपयः स्मृताः।।

– आनंद रा. मनोहर १६–१६

हे राम ! तुम साक्षात् विष्णु हो, सीता लक्ष्मी है, लक्ष्मण शेषावतार हैं । ये वानर रुद्र रूप ही हैं । वे रूद्ररूप कपि इस प्रकार हैं।

सुग्रीव = वीरभद्र, नल = शंभु ; नील – गिरीश ; सुषेण = महायश ; जांबवान = अजैकपाद; अंगद = अहिर्बुध्न्य; दधिमुख = पिनाकधारी ; तार = अयुताजि ; तरल = स्थाणु ; मैंद = भर्ग ; हनुमान = भगवान ।

इन एकादश रूद्रों में हनुमान् भगवान् याने साक्षात् शिव कहेगये हैं । हनुमन्नाटक (५–३३) में हनुमान रूद्रावतार की रौद्रमूर्ति के रूप में वर्णित है –

किष्किंधाद्रौ रौद्ररुद्रावतारम्।
दृष्ट्वा रामो मारुतिं वाचमूचे ।।

(किष्किंधाद्रि में रौद्र रूद्रावतार रूप मारूति को देख राम ने इस प्रकार कहा) उसीनाटक (अंक ६–२७) में, रावणः (स्वगतम्) यद्ययं रूद्रोमारुतिः तर्हिकिमिति रुद्र भक्तस्य मे नगरीं दहति ? अहह! ज्ञातम् –

तुष्टः पिनाकी दशभिः शिरोभिः
तुष्टौ नैकादश कोहि रुद्रः
अतो हनूमान् दहतीति कोपात्
पंक्तेहि भेदो नपुनश्शिवाय ।

रावण (अपने में) अगर यह मारूति रूद्र ही होता तो मुझ रूद्र भक्त के नगर को क्यों जलाता? आह! इस का कारण मालूम हुआ । मेरे दससिरों को काट कर समर्पित करने से दसों रूद्र संतुष्ट हुए हैं, एकादशवाँ रूद्र उसी तरह असंतुष्ट रहगया है । उसी एकादश रूद्र रूप इस हनुमान जी ने असंतुष्टि से यह काम किया होगा। इस रूद्र पंक्ति में मैं ने जो भेद भाव दिखाया वह अच्छा नहीं हुआ । इससे स्पष्ट है कि हनुमान साक्षात् एकादश रूद्र रूप ही हैं ।

शिवपुराण में नंदीश्वर सनत्कुमार से कहते हैं –

'अतः परं शृणु प्रीत्या हनुमच्चरितं मुने ।
यथा चकाराशु हरो लीला स्तद्रूपतोवराः ।।'

– (शि.पु.शतरुद्र संहिता . २०–११)

हे मुनि! और भी हनुमान जी के चरित्र को सुनो । हनुमान के रूप में हरने

कई लीलाएँ की हैं और विष्णुमूर्ति के मोहिनी रूप को जब शिव ने देखा तो उनका वीर्य पतन हुआ । सप्त महर्षियों ने उस वीर्य को अंजना देवी को उपलब्ध कराया तो बताया गया है, उन्हें बहुत बडे बलवान् तथा प्रतापवान् हनुमान् शिवात्म स्वरूप में पैदा हुए –

ततश्च समये तस्मात् हनुमानिति नामभाक् ।
शंभुर्जज्ञे कपितनुः महाबल पराक्रमः ।।

– (शि.पु.शत.सं. २०–७)

नारद पुराण (पूर्व तृ–तीय ७८–२० हनुमत कवच) में "लोकोत्तर गुणः श्रीमान् पातु त्र्यंबकसंभवः" बताया गया है कि हनुमान त्र्यंबक (शिव) संभव ही है ।

गिरिधर रामायण (बाल १२–२७) में वर्णित है –

"शंकर कहे धन्य अंजनी, तुज पुत्र धाशेनेट ।
रूद्र जे अगिया रमा, ते प्रगटाशे तुज पेट् ।।"

अंजना देवी की तपस्या से प्रसन्न होकर शिव ने उनको वर दिया कि वे एकादश रूद्र के रूप में उनके गर्भ से पैदा होंगे ।

मंत्रशास्त्र में हनुमान जी को रूद्र का अवतार कहकर इस प्रकार उनका ध्यान किया गया है –

ओं रूद्रमूर्तये शिरसे स्वाहा ।
ओं हनुमते रूद्रात्मकाय हुँ फट् ।

– (मन्त्र महार्णव. पू.खं. पृ १६८–१६९)

दूसरे मंत्र में कहा गया है –

ओं नमो भगवते रूद्राय सर्वभूतात्मने हनुमते
सर्वात्म संयोग पद्म पीठात्मने नमः ।।

– (मंत्र महा. उ. खं. तरंग ३ पृ. ६४२)

हनुमान जी के शिवत्व के संबंध में ब्रह्म कृत हनुमान स्तुति में ऐसा कहा गया है –

पार्वती गर्भ संभूते पार्वती पुत्र नामवान् ।
अग्निना धार्यमाणत्वात् अग्नि गर्भो भवान् भवेत् ।
वायु प्रसाद जननात् वायुपुत्रो निगद्यते ।
अंजना गर्भजननात् आंजनेयस्ततो भवान् ।।
केसरिक्षेत्र जन्यत्वात् पुत्रः केसरिणः कपेः ।
हनूवज्र प्रहाराद्धि हनुमानिति नामते ।।
ब्रह्म विष्णु शिवांशत्वात् त्रिमूर्तिरिति विशृतः ।

पार्वती देवी, अग्नि, वायु, अंजना, केसरी आदि ने हनुमान जी की परापरमूर्तियों को धारण किये हैं। पार्वती शिव की अर्धांगी है, अग्नि – वायु शिव की अष्टमूर्तियों में से हैं (पंच भूत + सूर्य–चंद्र + यजमान = ये, आठ शिव की अष्टमूर्ति हैं । इस से हनुमान जी का शिवत्व स्पष्ट हो रहा है । जगत् की सृष्टि के हेतु होने से अग्नि में ब्रह्मांश है । वायु में सर्वव्यापक होने से विष्णु का अंश है हनुमान जी में ब्रह्मा, शिव और विष्णु के अंश होने से वे त्रिमूर्त्यात्मक रूप में स्तुत्य हैं ।

शिलादिमहर्षि की तपस्या से प्रसन्न होकर शिवने वर दिया कि – "तव पुत्रो भविष्यामि नंदी नाम्नात्वयोनिजः।" नंदी के रूप में अयोनिज होकर तुम्हारे पुत्र के रूप में पैदा होऊँगा । – (शिव पु.शत रूद्र सं.६–३४) हनुमत् सहस्रनाम स्तोत्र में (श्लोक ८९) हनुमान जी नंदी के रूप में वर्णित हैं । एकादश रूद्रों में नंदी एक है, वह शिलादि महर्षि के पुत्र हनुमान है । (स्कंद पुराण) (माहेश्वर – केदार ; ८–९९,१००) के इस निम्नलिखित श्लोक से मालूम होता है –

शिलादतनयो नंदी, शिव स्यानुचरः प्रियः ।
यो वै चैकादशो रूद्रो हनुमान् स महात्रृषिः ।।
अवतीर्ण स्सहायार्थ विष्णो रमित तेजसः ।।

इस प्रकार अनेकानेक उद्धरणों से स्पष्ट हो रहा है कि हनुमान् साक्षात् रूद्र ही हैं ।

तिहुँलोक उजागर : श्री हनुमान जी की महिमा तीनों लोकों में याने सारे ब्रह्माण्ड में व्याप्त है । भक्तों की रक्षा के लिए भगवान ने इन को इस जगत में मनोनीत किया है। भागवत में कहा गया है कि ये कई रूप धारण कर भगवान की उपासना करनेवाले भक्तों की रक्षा करते रहते हैं । ये किंपुरूष लोक में श्री राम की आराधना करते हुए एक रूप से, साकेत में दूसरे रूप से कदलीवन में और एक रूप से, भारत देश के हर एक ग्राम में अन्य रूप से विभिन्न मंदिरों में विराज मान रहते हैं ।

खिल संहिता में ऐसा लिखित है –

मम पार्श्वगता वीरा, राक्षसाः पिशिताशनाः ।
याचंते जानकी नाथं नर भोजन मेवच ।।
इति श्रृत्वा रामचन्दः अब्रवीज्जानकी पतिः ।
आंजनेयं विना यत्र तत्र भक्षंतु मानवान् ।।

जब मांसाहारी राक्षसों ने श्रीरामचन्द्र से पूछा कि उन्हें नरमांस खाने को चाहिए तब श्री राम ने आज्ञा दी कि जिस गाँव में हनुमान की मूर्ति नहो, जिस गाँव में हनुमान जी का स्मरण न होता हो, और जिन घरों में हनुमान जी का संकीर्तन नहीं होता हो, वहाँ के लोगों को जाकर खाओ । तदनंतर तुरंत हनुमान जी से कहा –

गच्छ शीघ्रं महाभाग ! कुरु रक्षोविदारणम् ।
रक्ष विश्वं कपिश्रेष्ठ । रक्षो गण विदारण ।।

हनुमान! तुम शीघ्र ग्रामों से और घरों से राक्षसों का संहार करो और विश्व की रक्षा करो –

ऐसा आदेश देने पर –

इत्येवं तद्वचनं श्रुत्वा रामदूतस्सुबुद्धिमान् ।
तदारभ्य दिवारात्रं रक्षन् सर्वच राष्ट्रकम् ।।

श्रीरामचन्द्र के आदेश से बुद्धिमान हनुमान उस दिन से सभी समय सभी जगह सबकी रक्षा करते रहते हैं । जो उनका ध्यान करते रहते हैं, उनकी रक्षा करते हुए इस जगत में कई रूपों में व्याप्त रह रहे हैं ।

वानर होने के बावजूद तीनों लोकों में व्याप्त, इतनी महिमा और कीर्ति समुपार्जन करने के रहस्य को हनुमान ने ही हनुमान संहिता में इस प्रकार बताया है।

ब्रह्मादि देवतास्सर्वे सन्त्यन्ये चिरजीविनः ।

सर्वे z पि विभवासक्ताः ततो z हं विभवात्परः ।।

चिरंजीव ब्रह्मादि सभीदेवता वैभव के प्रति अनुरक्त हो रहे हैं। मैं इस वैभव की आसक्ति से परे हूँ । प्रभु श्रीरामचन्द्र जी की चरण सेवातत्परता से स्वामि भक्त बनकर रह रहा हूँ ।

वैभव के प्रति अनासक्त रहना, भगवान के ध्यान, सेवा के कारण ही श्री हनुमान तीनों लोकों को प्रकाशित करते हुए प्रकाशित हो रहे हैं और सर्वत्र पूजे जा रहे हैं ।

चौपाई – २

रामदूत अतुलित बलधामा ।
अंजनि पुत्र पवन सुतनामा ॥

अर्थ : रामदूत = राम के दूत ; अतुलित बलधामा = अद्वितीय बल के भंडार, अंजनिपुत्र = अंजनादेवी के पुत्र, पवनसुत = पवनपुत्र (वायुपुत्र) नामा = सुप्रसिद्ध ।

भाव : तुम श्रीराम के दूत हो ; अद्वितीय बलशाली हो; अंजनादेवी के पुत्र हो; वायुपुत्र हो, सुप्रसिद्ध हो ।

व्याख्या : श्रीरामचन्द्र के दूत के रूप में आंजनेय जब सीता माता को खोजने लंकानगर गये तब वहाँ पर सीता माता के लिये श्रीराम ने जो पहचान के रूप में मुद्रिका (अंगूठी) दी थी उसे सीता माता को देकर इस प्रकार बोले –

रामदूत मैं मातु जानकी
सत्य सपथ करुना निधान की ।

– रा.च.मा. ५–१२–५

हे माता जानकी! मै श्री राम चन्द्रजी का दूत हूँ । करुणा निधान श्री राम की कसम खाकर सत्य कह रहा हूँ।

प्राचीन भारतीय शासन व्यवस्था में "दूत" एक विशिष्ट व्याक्ति होता था । डॉ. वेणी प्रसाद लिखित "State in Ancient India" और "Theory of court in Ancient India नामक ग्रंथों को देखने से मालूम होता है कि ऋग्वेद काल में दूत केवल एक गुप्तचर ही न होकर राजा के प्रतिनिधि (Agent General) के रूप में भी रहते थे । महाभारत काल में एक सेनापति के रूप में रहा करते थे । सबकी रक्षा करना उनका कर्तव्य होता था । शासन व्यवस्था में भी वे मदद करते थे । सम्राट अशोक के समय में पर्यवेक्षक (Supervisor) वृत्तांत निवेदक (Reporter) गुप्तचर (Spy) के रूप में भी माने जाते थे । श्री रामराज्य नामक ग्रंथ में डॉ. साहब ने दूत के बारे में इस प्रकार लिखा है –

राजा अपने दूत के द्वारा न्यायविभाग (Judicial) कर्म विभाग (Executive) या आयविभाग (fiscal) आदि में कामकरनेवाले कर्मचारियों पर तथा जनता पर निरीक्षणकराया करते थे । दूत राजा के नेत्र माने जाते हैं (राजानो दूत चक्षुः) राजा के सभी प्रकार के व्यवहारों में दूत सलाहकार के रूप में भी रहते थे । इस प्रकार दूत बहु कार्यसाधक और राजा के भृत्य के रूप में प्रसिद्ध हैं ।

इन उद्धरणों को देखने से स्पष्ट होता है कि आंजनेय श्रीरामचन्द्र के कितने महान दूत हैं। आंजनेय रामदूत और रामदास के रूप में पुकारे जाने को बहुत पसंद करते थे।

शिवं स तनुतां रामो, यस्य दूतं महाबलम् ।
स्तौति वायुसुतं वीरं । अग्नि मित्यादि काश्रुतिः ॥

"अग्निम्" इत्यादि श्रृतियाँ महाबलवान, वायुपुत्र, महावीर और दूत कहकर आंजनेय की प्रशंसा कर रही हैं । ऐसे आंजनेय दूत के रूप में स्थित श्रीरामचन्द्रजी मंगल मय कार्यों का विस्तार करें ।"

गंगेश्वरानंद महाराज ने अपने "वेदोपदेश चन्द्रिका" नामक ग्रंथ में (पृ ८–९) में ऋग्वेद के प्रथम मंत्र को श्री हनुमत् – प्रतिपादक बताकर उसका विवरण इस प्रकार दिया है –

अग्निं दूतं वृणी महे, होतारं विश्ववेदसं ।
अस्य यज्ञस्य सुक्रतुम् ...

– (ऋवे १–१२–१)

अग्निम् = (दैत्यवन को जलाने वाले) अग्निको ; अस्य यज्ञस्यदूतं = इस यज्ञ के दूत को, शतपथब्राह्मण में वर्णित है (१–१–२) यज्ञ माने विष्णुः यज्ञो वै विष्णुः = (श्रृति वचन) श्रीराम श्री महा विष्णु ही है । वैसे श्री राम दूत को ; सुक्रतुं = शोभन कर्माणं = मंगलकर कार्यों को करने वाले को; अपने प्रभु श्री राम को प्रसन्न करने को आंजनेय सागर पार कर गये । सीता का अन्वेषणकर पता लगाया । संजीवनी औषधि लाकर (मूर्छित लक्ष्मण को फिर से जिलाया) ये सब अलौकिक और

अद्भुत शुभकार्य हैं । ऐसे कार्यों को करने वाले आंजनेय को, होतारं = युद्धाग्नि में अक्षयकुमार आदि को आहुति किये वाले को, विश्ववेदसं = सर्वज्ञ को, ऐसे हनुमान को, वृणीमहे = वरण कर रहे हैं । इस प्रकार "अग्निम्" नामक ऋग्वेद का मंत्र आंजनेय प्रतिपाद्य है।

भारतीय नीतिशास्त्र ग्रंथों में दूत के लक्षण इस प्रकार बताये गये हैं :-

मेधावी वाक्पटुः प्राज्ञः परचित्तोपलक्षकः ।
धीरो यथोक्त वादीच, एष दूतो विधीयते ।।
गुणी भक्तो शुचिर्दक्षः प्रगल्भो व्यसनी क्षमी ।
ब्राह्मणः परमर्मज्ञो, दूतःस्यात् प्रतिभानवान् ।।
साकारो निस्पृहो वाग्मी, नानाशास्त्र विचक्षणः ।
पर चित्तावगंता च राज्ञो दूतस्स इष्यते ।।

– मेधावी, बोलने में चतुर, प्राज्ञ, दूसरों के चित्त के मर्मज्ञ, धैर्यवान, स्पष्ट, दक्ष, दुर्व्यसनरहित, क्षमावान्, ब्रह्म विद्यावेत्ता, दूसरों के रहस्यों को जानने वाला, प्रतिभावान्, सुँदर, निःस्पृह, व्याख्याता, नानाशास्त्र विशारद, दूसरों के चितों को समझनेवाला, राजा के यहाँ दूत के रूप में रहने योग्य हैं । रामायण के विभिन्न प्रसंगों को देखने से स्पष्ट होता है कि इस प्रकार के सभी गुण आंजनेय में विद्यमान हैं ।

"अतुलितबलधामा" भगवत् गीता (७–११) में गीताचार्य ने कहा है = बलं बलवतां चाहम् = बलवानों में मैं बलवान हूँ । तब बँधन में फँसे हनुमानजी से रावण ने कहा –

कहलंकेस, कवन तै कीसा
केहि के बल घालेहि बन खीसा

–रा.च.मा. ५–२०–१

हे वानर ! तुमने किस बल को देखकर अशोक वन को उजाड दिया है – कहने पर हनुमान जी ने निर्भीक होकर अपने बल के बारे में इस प्रकार बताया है –

सुनु रावन ! ब्रह्मांड – निकाया
पाइ जासुबल विरचित माया
जाके बल विरंचि – हरि ईसा
पालत – सृजत – हरत दस सीसा
जा बल सीस धरत सहसानन
अंड कोस – संजुत गिरि – कानन
धरै जो विविध देह सुर–त्राता
तुमसे सठन्ह सिखावनदाता
हरकोदंड कठिन जेहिभंजा
तोहिसमेत नुप–दल–मदगंजा
खर–दूषण त्रिसिरा अरूबाली
बधे सकल बल – साली

– रा.च.मा. ५–२०–२–३–४–५

जाके बल लव लेस ते जितेहु चराचर झारि ।
तासु दूत मै जा कर, हरि आनेहु प्रिय नारि ॥

–रा.च.मा. ५–२१

"सुनरे रावण ! माया भी जिनके बल का सहारा पाकर ही इन ब्रह्मांडों की रचना कर पाती है, जिनके बल पर ही सहस्रों फणों वाले शेष भी पर्वतों और वनों से लदे हुए सारे ब्रह्माण्ड अपने सिर पर उठाये रहते हैं । जो देवाताओं की रक्षा केलिए अनेक प्रकार के शरीर धारण किया करते हैं, जो तेरे जैसे दुष्टों को आ–आकर ठीक करते रहते हैं। जिन्होने महादेव का कठोर धनुष भी दो कर डाला था और तेरे साथ–साथ वहाँ आये हुए सब राजाओं का मद झाड डाला था, जिन्होने खर, दूषण, त्रिशिरा और बाली आदि नजाने कितने बडे – बडे बलवान वीरों को पछाडा है जिनका तनिक–सा बल पाकर तुमने भी समस्त चर और अचर को जीतकर मुट्ठी में किये रखा है अैर जिन की प्रिय पत्नी को तुम चोर की भाँति चुराये लिये आये हो, मै उन्ही (राम) का दूत हूँ ।

तुलसीदास जी ने कहा है – ऐसे बलधाम श्री रामचद्रजी पवनपुत्र आंजनेय के हृदय मंदिर में धनुष धारण किये हुए सदा बसे रहते हैं –

" **जासुहृदय आगार, बसहिं राम सर चाप धर**

– रा.च.मा. बाल १७ सोरठा

इतना ही नहीं, तुलसी ने और भी कहा है

"हनुमंत प्रेम बापि मराला।" (विनयपत्रिका ६४–८) आंजनेय के प्रेम की बावली में हंस के समान श्रीराम सदा विहार करते रहते हैं ।

आंजनेय का हृदय पवित्र है और सुंदर है । वहाँ पर सर्वदा विहार करनेवाले अतुलितबलधाम श्री रामचन्द्र ही हैं तो आंजनेय अतुलित बलधाम श्री राम के लिये धाम हैं – नित्य निवास स्थान है – आंजनेय का बल – भरोसा – आशा – विश्वास और सब कुछ श्रीराम चन्द्र ही हैं । आंजनेय श्रीरामचन्द्र रूप अतुलितबल के लिये धाम मात्र ही हैं । इसी से अपने रामचरित मानस के सुंदरकांड में अतुलितबलधामं (श्लो ३) में कहकर तुलसीदासजी ने उनकी स्तुति की है ।

त्रेतायुग में अतुलित बलशाली कई थे । उनमें खर–दूषण, त्रिशिरा, मेधनाध, रावण आदि राक्षस वाली आदि वानर वीर प्रमुख हैं । उन सब में वाली और रावण विशेषतः उल्लेखनीय हैं । इन दोनों से आंजनेय कहीं अधिक बलशाली हैं । इस विषय को श्री रामचन्द्र ने महर्षि अगस्त्य से इस प्रकार कहा है –

अतुलं बलमेत द्वै बालिनो रावणस्य च ।
नत्वेताथ्यां हनुमता समंत्विति मतिर्मम ॥
शौर्य दाक्ष्यं बलं धैर्य प्राज्ञता नयसाधनम् ।
विक्रमश्च प्रभावश्च , हनूमति कृतालयाः ॥

– वा.रा.उत्तर ३५–२–३

महर्षे ! इस में संदेह नहीं कि बाली और रावण के इस बल की कहीं तुलना नहीं थी। परन्तु मेरा विचार है कि इन दोनों का बल भी हनुमान जी के बल की बराबरी नहीं कर सकता था । शूरता, दक्षता, बल, धैर्य, बुद्धिमत्ता, नीति, प्रराक्रम और प्रभाव – इन सभी सदगुणों ने हनुमान जीके भीतर घरकर रखा हैं इन गुणों के वर्णन करते हुए श्री राम ने और भी इस प्रकार कहा है –

न कालस्य नशक्रस्य, नविष्णोंर्वित्तपस्य च ।
कर्माणि तानि श्रूयन्ते यानि युद्धे हनूमतः ॥
एतस्य बाहुवीर्येण लंका सीता च लक्ष्मणः ।
प्राप्ता मया जयश्चैव राज्यं मित्राणि बांधवाः ॥
हनूमान् यदि मे न स्याद्वानराधिपतेः सखा ।
प्रवृत्तिमपि को वेत्तुं जानक्याः शक्तिमान् भवेत् ॥

– वा.रा. उ कां – ३५–८–१०

"युद्ध में हनुमानजी के जो पराक्रम देखे गये है वैसे वीरता पूर्ण कर्म न तो काल के, न इंद्र के, न भगवान विष्णु के और न कुबेर के ही सुने जाते हैं ।

मुनीश्वरों ! मैं ने तो इन्ही के बाहु–बल से विभीषण के लिये लंका, शत्रुओं प्रर विजय, अयोध्या का राज्य, तथा सीता, लक्ष्मण, मित्र और बंधुओं को प्राप्त किया है। यदि मुझे वानर राज सुग्रीव के सखा हनुमान न मिलते तो जानकी का पता लगाने में कौन समर्थ हो सकता था याने अन्य किसी से नहीं हो सकता था ।

रावण का वध करना हनुमान के लिये असाध्य नहीं था किंतु रावण के वध की कीर्ति श्रीराम चन्द्र को ही मिलनी चाहिये – ऐसा समझकर ही आंजनेय ने उपेक्षा की । इस बात को आंजनेय ने भीमसे इस प्रकार कहा है –

भीम सेन न पर्याप्तो ममासौ राक्षसाधमः ।
कीर्तिनश्येत् राघवस्य तत एतदुपेक्षितम् ॥

– महाभारत वनपर्व १५०/१८–१९

हे भैया भीम । राक्षासाधम रावण मेरे लिये पर्याप्त नहीं, मेरे समान बलवान भी नहीं लोककंटक रावण को अगर मै मार डालता तो रामचन्द्रजी की कीर्ति कलंकित होगी – समझकर ही मैं ने उनका काम तमाम नहीं किया ।

'हन्' धातु का गति–अर्थ भी है । व्याकरण के अनुसार गति याने ज्ञान, गमन और प्राप्ति है। मतुप् तदस्य अस्ति = वह इसे प्राप्त है – प्रत्यय के जुडने से हनुमान होता है। हनुमान –माने ज्ञानवान – गतिमान – प्राप्तिवान – गति माने

शक्ति या बल भी है । हनुमान को गति में, मति में और बल में असमान कहकर महर्षि अगस्त्य ने स्वयं श्रीराम से कहा—

सत्यमेतद् रघुश्रेष्ठ यद्ब्रवीषिहनूमति ।
न बले विद्यते तुल्यो न गतौ न मतौ परः।।

— वा.रा. ७–३५–१५

रघुकुल तिलक श्रीराम! हनुमान जी के विषय में आप जो कुछ कह रहे हैं वह सब सत्य ही है ! बल बुद्धि और गति में इनकी बराबर करने वाला आजतक दूसरा कोई नहीं ।

'हन्' धातु के गत्यर्थ मूलक "प्राप्ति" के बारे में सोचने पर राम पाद सेवा धुरंधर श्री आंजनेय के लिए किसी वस्तु की प्राप्ति दुर्लभ नहीं । प्राप्ति अष्टैश्वर्यों में से एक है।

इन्ही अनेक कारणों से आंजनेय "अतुलितबलधाम" कहेगये है ।

अंजनिपुत्र, पवनसुत : हनुमान को अंजनिपुत्र, आंजनेय पवनपुत्र आदिनामों के मूल में एक कथा यों प्रचलित है—

स्वर्ग में देवराज इंद्र के यहाँ " पुंजिकस्थला" नाम की अत्यंत ही सुंदर अप्सरा थी । वह जितनी ही सुंदरी थी उतनी ही चंचल स्वभाव की थी । हंसी तो उस के अधरों पर ही खेलती रहती थी । एक दिन अपने चंचल स्वभाव के कारण किसी ऋषि की उसने हँसी उडाई । इस पर कुपित होकर महर्षिने शाप दिया - तू वानरों की भाँति चंचलता करती है, अतः जा, तू भूमि पर वानरी हो जा ।

महर्षि का शाप सुन ते ही उस की सिटिल्ली गुम होगयी। वह परम विनीत भाव से महर्षि के पैरों पर पड गयी ।

महाराज ! मेरे अपराध को क्षमा कर दो । महार्षि ने प्रसन्न होकर कहा – मैं ने आज तक हँसी में भी असत्य भाषण नहीं किया। अतः वानरी तो तुझे होना ही पडेगा । किंतु इच्छा रूपधारण कर सकेगी। जब चाहेगी तब सहज अप्सरा रूप धारण करलेगी । बाद में वही अप्सरा वानर राजा कुंजर की पुत्री के रूप में पैदा हो गयी। उस समय उस का नाम अंजना हुआ । (वा.रा. कि. ६६/८–१०) महर्षि का शाप सत्य साबित हुआ। "पुंजिकास्थला" सुमेरू की गुफा में एक वानरी

बनगयी। वास्तव में पृथ्वी पर जो वानर होता है वैसे वानर नहीं । यह एक उपदेवों की जाति है। यह जाति किंपुरुषों में से एक है । ये इच्छरूपधारी होते हैं । इनकी आकृति मनुष्यों जैसी होती हैं। किन्तु इन की पूँछ होती हैं । केसरी एक ऐसे ही वानर राजा थे। कुंजर नें अंजना का विवाह केसरी के साथ करदिया । दोनों बडे ही सुख से दांपत्य जीवन बिता रहे थे । कई दिन बीतगये पर संतान नहीं थी । अंजना ने पुत्र प्राप्ति हेतु कई व्रत–जप आदि किया पर सफलता नहीं मिली तो दुःखी हुई । उस के दुःख को देखकर द्रवित होकर महामुनि मतंग ने कहा कि अगर वह भक्ति मुक्तिदायक तिरुमलेश की सेवा कर वहाँ की आकाश गंगा में स्नान कर, पवित्र गंगाजल पीकर, वायुदेव की आराधना करेगी तो उन की कृपा से देव–दानवों के लिए अजेय, अस्त्र शस्त्रों के लिए अवध्य माहवीर पुत्र उत्पन्न होगा ।

तब अंजना देवी ने भक्ति भाव से उस मुनि को नमस्कार कर उन से आज्ञा लेकर वेंकटाचल पहुँचकर वहाँ पर श्री वेंकटेश्वर की पूजा कर के आकाश गंगा में प्रतिदिन स्नान करती हुई परम पवित्र उस जल का पान करती हुई वायु देव के लिऐ तीव्र तप करने लगी । उस के पास वायुदेव की कृपा से लुढकता हुआ एक फल आता था तो मात्र उस फल को खाकर निष्ठा से तप करती रही ।

अंजना देवी के तप करते समय एक विलक्षण घटना घटित हुई । तारक नामक असुर घोरतप करके शिववीर्य के अतिरिक्त अन्य किसी के हाथ से मृत्यु न हो – ऐसा वर ब्रह्मा जी से पाकर सभी लोको में उपद्रव मचाने लगा। तारकासुर ने सोच कर वर पाया होगा कि दाक्षायणी के अग्नि प्रवेश से शिव विधुर हैं – उनका विवाह नहीं होगा – उस से उनके संतान नहीं होगी । लेकिन देवताओं और कामदेव के प्रयत्न से शिवने पार्वती के साथ विवाह करलिया । बाद में शिव–पार्वती विहार करने वेंकटाचल आये । वह वसंत का समय था । काम क्रीडा में वे संलन्न थे । उस समय वहाँ पर उन्होंने एक मर्कट दंपती को कामक्रीडा करते देखा और स्वयं मर्कट रूपधारण करके सुरत क्रीडा देखकर सुख भोगा । तब पार्वती के गर्भ में शिवजी ने वीर्य का संधान किया । समस्त देव शक्ति से संपन्न उस महातेज को पार्वती धारण न कर पाई । शिवजी ने उस वीर्य को भूमि पर रखा तो भूमि भी धारण न कर पाई। तब अग्नि में रखा गया तो अग्नि भी धारण करने में असमर्थ हुआ, तब वायुदेव में रखा गया तो वे हज़ार साल धारण करके

अंत में उन्होंने अपने प्रति संतान कामनासे तप करने वाली अंजना देवी को उस वीर्य को फल के रूप में प्रदान किया । अंजना देवी उस फल को खा कर गर्भवती हुई।

वैशाखमास, कृष्णपक्ष के दशमी शनीचर, वैधृतियोग मध्याह्न कर्काटक लग्न में अंजना देवी के पुत्र पैदा हुए । वे और कोई नहीं महावीर हनुमान ही है । अंजना के गर्भ से पैदा होने से अंजनी पुत्र और वायु देव के कारण से पवन सुत हनुमान जी के रूप में विख्यात हुए।

नामा = नामा माने प्रशंसित या प्रसिद्धि पाप्त है। आंजनेय के सारे शरीर में यहाँ तक कि रोम–रोम में राम का नाम विद्यमान है । पंडित चिलुकूरि श्रीराम शास्त्री से तेलुगु भाषा में अनूदित समर्थ रामदास कृत आनंद रामायण (२१०–२११ पृष्ठ) में इस प्रकार है –

अपने राज्याभिषेक के समय प्रेम से श्रीराम से प्रदत्त रत्नहार को सीता माता ने हनुमान को भेंट किया । हनुमान जी उस हार में से एक–एक रत्न को देखकर फोंड़ते और फेंक देते थे । सीता माता ने पूछा कि इस प्रकार फोड़कर क्यों फेंक ते हो "आंजनेय ने बताया कि जिस हार में राम के नाम का रस नहीं है वह हार मेरे किस काम का है । तब सीता माता ने कहा– आंजनेय तुम्हारा यह पंचतत्व शरीर क्या राम के नाम के रस से पूर्ण है ? तुम अपने शरीर को क्यों नहीं फेंकते ? बस, तुरंत पवन सुत ने अपने वक्ष स्थल को चीरकर सीता–राम-लक्ष्मण के रूपों को दिखाया । उन के नस–नस में, रोम–रोम में हड्डियों में शरीर के सभी अंगों से राम के नाम की ध्वनि निकल रही थी ।

इस प्रकार शरीर का रोम–रोम राम नाम से अंकित होने से आंजनेय को तुलसीदास जीने "नामा" कहकर संबोधित किया ।

अंगफारिदिखरायेऊ, रोम–रोम में राम ।
तब ते पायेऊ पवन सुत सुंदर नामा नाम ।।

– हनुमान् चालीसा भाष्य हिन्दी – स्वामी जयदेवजी महाराज पृ – १४

शरीर को फाडकर रोम–रोम में राम नाम को प्रदर्शित करने से – हे पवन सुत! तुम्हे सर्वदा सुंदर " नामा" नामक नाम सार्थक हुआ ।

चौपाई – ३

महाबीर बिक्रम बजरंगी ।
कुमति निवार सुमति के संगी ।।

अर्थ : महाबीर = महान, बिक्रम = पराक्रम वाले, बजरंगी = बज्रजैसे सुदृढ़ शरीरवाले, कुमति निवार = दुर्बद्धि को दूर करने वाले, सुमति के संगी = सुबुद्धि वालों के साथ रहनेवाले । (सत्–बुद्धि के लोगों को मदद करनेवाले)

भाव : हे हनुमान जी! तुम महान वीर हो, विशेष पराक्रमवाले हो, तुम्हारा शरीर वज्र जैसे सुदृढ़ और कठोर है । दुर्बुद्धि को दूर कर सद्‌बुद्धि को प्रदान करते हो। सदा सज्जनों के समीप रहते हो ।

व्याख्या : बीर शब्द का शुद्धरूप वीर है। श्रृंगारादि नवरसों में वीर एक रस है । पंडितराज जगन्नाथ ने अपने रस गंगाधर नामक अलंकार शास्त्र ग्रन्थ में – वीरश्चतुर्थाः दान–दया–युद्ध धर्मैस्तदुपाधेरूत्साहस्य चतुर्विधत्वात्", दान–दया–युद्ध–धर्म के नाम से वीररस के चार भेद हैं । वीररस का स्थायी भाव उत्साह है । इन चार के अलावा पांडित्यवीर नाम से और एक भेद किया गया है। "एवं पांडित्यवीरोपि प्रतीयते" इससे स्पष्ट है कि वीर के कई भेद हो सकते हैं। एक–एक विषय से सम्बन्धित तीव्र उत्साह – उन विषयों से संबन्धित – वीर–दानवीर, दयावीर, युद्धवीर आदि के रूप में रहेगा ।

साधारणतया लोक में एक–एक महावीर में एक – एक प्रकार का वीर रस प्रकट होता है । किसी किसी में दो–तीन प्रकार के वीर के लक्षण रह सकते हैं । एक भगवान में ही सर्व विध वीररस के लक्षण होते हैं । आंजनेय भगवान के स्वरूप ही है । उनके विषय में साहित्य शास्त्रियों के द्वारा बताये गये वीर रस के लक्षणों का होना उनके चरित्र में सुप्रसिद्ध ही है । उन्होने लक्ष्मण जी आदि को प्राणदान दिया । अपने भक्तों पर–कृपा करने में और दिखाने में अत्यंत उत्साही रहे हैं। धार्मिक कार्यक्रमों को सुसंपन्न करने में उनका उत्साह अद्‌भुत रहा है। युद्ध में अक्षय कुमार आदि को मार ने में उनका उत्साह द्विगुणित हुआ था । आंजनेय

के पांडित्य की प्रशंसा भगवान श्री राम ने स्वयं की है। यहाँ पर प्रतिपादित वीर लक्षणों के अतिरिक्त एक विशिष्ट वीर का लक्षण आंजनेय जी में जो है वह उनकी ब्रह्मचर्य निष्ठा है ।

आंजनेय आजन्म ब्रह्मचारी रहे हैं । वानर जाति में बहु पत्नीत्व का होना सामान्य बात है । वे कपीन्द्र सुग्रीव के सचिव होते हुए भी, बल पराक्रमी होते हुए भी कई प्रकार की योग्यताओं के होते हुए भी विलासमय जीवन बिताना पसन्द नहीं करते । समस्त भोग और ऐश्वर्य उनके अधीन होने पर भी उन्हें नहीं चाहा । ऐसे ही व्यक्ति को धीर कहते हैं ।

विकारहेतौ सति विक्रियन्ते
येषां न चेतांसि त एव धीराः।।

– कुमारसंभवम् 1–59

महाकवि कालिदास ने उन्ही को धीर कहा है जिन का मन किसी भी स्थिति में विकारों से विकृत नहीं होता ।

मत्तेभकुम्भदलने भुवि संति धीरा :
केचित् प्रचंड मृगराज वधे z पि दक्षाः
किन्तु ब्रवीमि बलिनां पुरतः प्रसह्य
कन्दर्प दर्प दलने विरला मनुष्याः

– भतृहरि (सुभाषित त्रिशती श्रृंगार शतक – श्लोक ७३)

मतवाले मतंगों के कुम्भस्थल को फोड सकने वाले वीर इस लोक में कई एक है। चंडप्रचंड सिंहों को मारने वाले वीर भी कई एक हैं । लेकिन इन सब बलवालों के आगे मैं एक बात निस्संकोच कहूँगा । वह यह कि कंदर्प के दर्प को दलन करने वाले ही महावीर कहलाते हैं । ऐसे मन्मथ के विकारों से विकृत न होने वाले विरले ही होते हैं । श्री आंजनेय ऐसे विरले महावीरों में अग्रगण्य ही है ।

"येन स्वयमक्षतस्सन् परान् जयति, तद्वीर्य" खुद घायल न होकर शत्रुओं को जीतलेने की स्थिति में जो रहता है वह वीर्यवान् – महावीर कहने के योग्य है ।

श्रुति के अनुसार –'परास्य शक्ति र्विविधैव श्रूयते' विभिन्न शक्तियों से सम्पन्नवाला ही महावीर होता है । आंजनेय को महावीर कहने में ये सभी लक्षण चरितार्थ होते हैं ।

महावीर शब्द अन्यलोगों के लिए विशेषण है । पर हनुमान जी के अनेक नामों में से यह एक है । वैसे वीरता के अनेक मानदंड हैं पर उन समस्त मानदंडों पर यदि कोई व्यक्ति खराउतरता है तो वह एक मात्र हनुमानजी ही है ।

बिक्रम : पराक्रम, अधिक बल, शक्ति, प्रताप साहस जिस में हो। रामपाद सेवा धुरंधर आंजनेय ने अनेकानेकाद्भुत साहसपूर्ण कार्यों को करके दिखाया है । उन में अहिरावण वध मुख्य है। कथा इस प्रकार है –

श्रीराम–रावण संग्राम में प्रतिदिन हजारों राक्षस मर जाते थे, आखिर लक्ष्मण के हाथ में अपने प्रिय पुत्र मेघनाद भी मरगये तो रावण बहुत दुखी हुए । बदला लेने को सोचने लगे तो अपने मित्र पाताललोक के राजा अहिरावण याद आये । अहिरावण बहुत बडे देवी भक्त हैं। रावण ने देवी की आराधना की, कारण देवी की आराधना करने से अहिरावण उसके पास आयेगा । आखिर अहिरावण आगया तो रावण ने अपनी दयनीय दशा बता दी और राम–लक्ष्मण को पाताललोक ले जाकर वध करने का आदेश दिया । रावण के कहे अनुसार अहिरावण ने अपनी मोहिनी विद्या से विभीषण का रूप धारण कर श्रीराम के शिबिर में गया और वहाँ पर पहरा देनेवाले आंजनेय को अपने विभीषण रूप से धोखा देकर अंदर गया । वहाँ पर सोते श्री राम – लक्ष्मण को अपनी माया विद्या के बल से पाताललोक लेगया । बाद को जब राम–लक्ष्मण नहीं दिखायी दिये तो सभी वानर दुःखी होने लगे, अपने पहरे के समय राम और लक्ष्मण इस प्रकार अदृश्य होने से आंजनेय ने प्रतिज्ञा कीकि चौदह भुवनों में जहाँ कहीं भी राम–लक्ष्मण होंगे खोजकर ले आऊँगा, विभीषण ने ध्यान लगाकर सोचा और बोला – यदि मेरे वेष में आया है तो वह निश्चय ही अहिरावण होगा। वह बडा बलवान है; पाताललोक का राजा है । उस ने कहीं दोनों को छिपा रखा होगा। श्री हनुमान जी तुरंत पाताललोक चलेगये । वहाँ उन्हों ने द्वार पर मकरध्वज को देखा । जब वे भीतर जानेलगे तो मकरध्वज ने रोक दिया, तुम कौन हो, चोरी–चोरी जा रहा है, मुझ से छिपकर

नहीं जा सकता। मेरा नाम मकरध्वज है, मैं श्री हनुमान जी का पुत्र हूँ। मैं किसी को भी भीतर नहीं जाने दूँगा। श्री हनुमान जी ने पूछाकि तुम मेरे पुत्र कैसे हुए? तब उसने कहा – जब आप लंका जलाकर समुद्र में स्नान करने लगे थे तब आपके शरीर से बहुत पसीना निकला था, उसे एक मछली पी गई, वह मछली संयोग से अहिरावण के रसोईघर में पहुँची। उसे काटने से उसके गर्भ से एक युवक महावीर का प्रादुर्भाव हुआ, वही मैं हूँ, मेरी शक्ति और बुद्धि की परीक्षा करके अहिरावण ने मुझे इसलोक के रक्षक के रूप में नियुक्त किया।

आंजनेय ने उस के जन्म की कथा सुनकर अपना निजा रूप दिखा कर उसे पितृ दर्शन का सुख प्राप्त कराया है और अपने आगमन का कारण बताया, पर मकरध्वज ने कहा – मैं आपको भीतर नहीं जाने दूँगा। पिता के नाते मैं आपके साथ पक्षपात करूँगा तो धर्म से च्युतहोऊँगा। विश्वास घात का मुझे पाप लगेगा। युद्ध करके मुझे पराजित करने पर भीतर जासकते हैं।

हनुमान जी को शीघ्रता थी। उसी की पूँछ से उसे द्वार पर कसकर बान्ध कर आप भीतर चलेगये। भीतर जाकर देवी को पैर से दबाकर स्वयं देवीके रूप में भयंकर रूप में मुख फाडकर खडे हो गये। राक्षसों ने सोचा – आजदेवी प्रत्यक्ष हो गई। सब लोगों ने देवी की विधिवत पूजा की। आज देवी के समक्ष जो भी भोग आता उसे खा लेती। अहिरावण प्रसन्न हुआ। तब बलिदान के लिए राम–लक्ष्मण देवी के समक्ष लाये गये। तब उसने कहा – तुम्हारा बलिदान होने जा रहा है, तुम अपने इष्टदेव को स्मरण करलो। श्रीराम ने लक्ष्मण से कहा – भैया! विपत्ति पडने पर सभी लोग मेरा स्मरण करते हैं। जब –जब हमपर विपत्ति आ पडी है, हनुमान जी ने ही टाली है। अतः हनुमानजी का स्मरण करले। लक्ष्मण विस्मय से बोले यहाँ कहाँ हनुमान जी है? तब श्री राम बोले – हनुमानजी तो सर्वत्र हैं, मुझे तो देवी के रूप में श्री हनुमान जी दिखाई पडरहे हैं। भगवान का इतना कहना था कि हनुमान जी तुरंत अपने विशाल रूप में प्रकट हो गये। श्री राम–लक्ष्मण जी को उठाकर अपने कन्धों पर बिठा लिया। अहिरावण तथा उसके परिवार वालों को मारकर मकर ध्वज को पाताल लोक का राजा बना कर वानर सैन्य के पास आये। श्री राम और लक्ष्मण को देख सबप्रसन्न हुए। सुग्रीव विभीषण, जांबवान आदि हनुमान के साहस और पराक्रम की प्रशंसा करने लगे। श्रीराम–लक्ष्मण को

सुरक्षित ले आने तथा अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण करने के उपलक्ष्य में सब ने आंजनेय का अभिनंदन किया ।

इस प्रकार श्री राम–लक्ष्मण जी की रक्षा ही नहीं; समुद्रोल्लंघन, सीतान्वेषण, लंका दहन, संजीवनी ओषधि को ले आना आदि सभीकार्य आंजनेय के पराक्रम के दृष्टांत हैं।

त्रेतायुग में ही नहीं, द्वापर युग में भी आंजनेय के विक्रम याने पराक्रम को सूचित करने वाली कई घटनायें प्रसिद्ध हैं। महर्षि गर्ग लिखित गर्ग संहिता के विश्वजित खंड के ३० अध्याय में आंजनेय के पराक्रम का वर्णन इस प्रकार है –

बहुत बडे बलवान कलंक नामक राक्षसराज भीमनादिनी नगर को निवासस्थान बनाकर रहता था । उसने अपने दस हजार राक्षस सेना को लेकर याद वों पर चढाई की। यादवसेना को पराजित करते देख श्री कृष्ण के ज्येष्ठ पुत्र ने उसे रोका । युद्ध में अपने हारजाने की स्थिति देख श्री कृष्ण ने आंजनेय का स्मरण कर "कपीन्द्रास्त्र का प्रयोग किया । तुरन्त आंजनेय प्रकट होकर कलंक पर टूट पडे । अपने तीव्र मुष्टि घात से उस राक्षस को धराशायी कर वैदूर्य पर्वत को फेंककर कलंक का वध कर दिया । श्री कृष्ण के पुत्र और उसकी सेना की रक्षा की ।

अर्जुन महान् पराक्रम शाली थे । महाभारत युद्ध में आंजनेय ने अर्जुन के रथ के ध्वज पर रहकर उनकी मदद की । अर्जुन कपिध्वज वाले हैं । आंजनेय के कारण अर्जुन उस युद्ध में कई बार विजय प्राप्त कर "विजय" के नाम से विख्यात हुए । इस प्रकार आश्रित रक्षक तथा शत्रु विनाशक के रूप में सर्वदा हनुमान जी प्रसिद्ध रहे। बजरंगी, वज्रांगी – संस्कृत शब्द बदलकर बजरंगी हो गया । वज्र जैसे कठिन, सुदृढ, शक्ति संपन्न शरीर वाले से मतलब है ।

इन्द्र का वज्रायुध सभी आयुधों में श्रेष्ठ है । शैशव में उस वज्रायुध की मार ठोडी को लगने से आंजनेय मूर्छित हुए । उनकी ठोडी को जो चोट लगी वह तो अल्प ही थी पर वज्रायुध की पैनीधार सदा के लिए चलीगई ।

जाकी चिबुक चोट चूरन किय

रसमद कुलिद कठोरको

– विनय पत्रिका ३१–4

तुलसी नें कहा है कि आंजनेय की ठोडी में लंगी चोट से वज्रायुध का गर्व चूर-चूर हो गया । स्पष्ट है कि आंजनेय का शरीर वज्रसे भी कठोर है ।

आंजनेय के अंगबल प्रदर्शन में तीन विधान मुख्य हैं । 1) पादाघात (लातमारना) 2) लंगूलाघात(पूँछ से मारना) 3) मुष्टिघात (मुठ्ठी से मारना) ये तीनों विधान अद्वितीय और अमोघ हैं। इन में मुष्टिघात का बहुत ही विशिष्टस्थान है । महानयोद्धा रावण, कुम्भकर्ण, मेघनाद आदि आंजनेय के एक–एक मुष्टिघात को सह न पाकर मूर्छित हो जाते थे । होश में आने पर रावण जैसे शूरवीर ने आंजनेय के बल की प्रशंसा इन शब्दों में की है।

मुरछागै बहोरि सोजागा । कपिबल बिपुल सराहन लागा ।

– रा.च.मा. ६–८३–२

वाल्मीकि रामायण में भी यह बात इस प्रकार कही गई है ।

अथाश्वस्य महातेजा, रावणो वाक्यमब्रवीत्

साधु वानर ! वीर्येण ! श्लाघनीयो z सि मे रिपुः

–वा.रा.युद्ध ५९–६४

साधु ! साधु वानरवीर श्रेष्ठ ! मूर्छित स्थिति से होश में आने पर रावण ने कहा कि – मेरे शत्रु होते हुए भी तुम मेरी प्रशंसा के पात्र बन गये हो । इस से आंजनेय के शरीर की कठोर वज्रशक्ति प्रकट हो रही है ।

सभी अस्त्रों में अत्यंत प्रबल ब्रह्मास्त्र भी आंजनेय के समक्ष व्यर्थ हो गया । अशोक वाटिका को ध्वंसकर अनेक राक्षस वीरों का, आखिर रावण के पुत्र अक्षय कुमार का वध करने पर आंजनेय के साथ युद्ध करने मेघनाद आये और अनेक अस्त्र–शस्त्रों का प्रयोग किया पर कोई लाभ न रहा; आखिर –

अवध्योयमिति ज्ञात्वा, तमस्त्रेणास्त्रतत्ववित्

निजग्राह महाबाहुं मारुतात्मजमिन्द्रजित्

– वाल्मीकी रामायण सुंदरकांड ४८–३७

जब किसी भी अस्त्र से काम न चला तो मेघनाद ने ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया। वास्तव में ब्रह्मास्त्र के समक्ष आंजनेय के नतमस्तक होने की जरूरत नहीं. जब आंजनेय सूर्य बिंब को फल मानकर–लीलने के लिए जाने के प्रसंग में ब्रह्माजी से वर मिला कि – किसी भी अस्त्र शस्त्र का प्रभाव उनपर नहीं पडेगा। फिर भी रावण को देख उससे बात करने की इच्छा से ही अपने इष्टदेव के अनुसार ब्रह्मास्त्र के समक्ष नतमस्तक हुए । उस अस्त्र के सामने भी थोडी ही देर के लिए आंजनेय झुक जाते हैं ; और बन्धन में बन्ध जाते हैं । यही नहीं , रूद्र का काल दंड भी और सुदर्शन अस्त्र भी आंजनेय को कुछ नहीं कर पाये । यही आंजनेय के विक्रम का दृष्टांत है। पराशर संहिता के छठवे पटल में आंजनेय की जन्म कथा इस प्रकार है –

कौपीनकटि सूत्राभ्यां विराजंतं महाभुजम्।

आश्चर्यभूतं लोकानां वज्र संहननं कपिम् ।

– कौपीन कटिसूत्रों से प्रकाशित रहने वाले, भुजपारक्रम वाले, लोगों को विस्मित कराने वाले कार्यों को करने वाले और वज्र शरीर वाले के रूप में पैदा हुए ।

कुमतिनिवार : कुमति को, बुरेविचारों को दूर करने वाले हैं । वालि वध के अनंतर श्री रामचन्द्र जी की कृपा से राज्य प्राप्त सुग्रीव, राज्य के भोग विलास में निमग्न होकर राम के काम को भूलगये । तब आंजनेय ने सुग्रीव को सचेत कर उन्हें अपने कर्तव्य का बोध कराया । उनकी कुमति का निवारण कर सन्मार्ग पर ले आये । यह प्रसंग राम चरित मानस में (किष्किंध कांड 18, १,२,३) यों वर्णित है –

इहाँ पवनसुत हृदय बिचारा

रामकाजु सुग्रीव बिसारा

निकट जाई चरनन्हि सिरूनावा

चारिहु बिधि तेहि कहि समुझावा

सुनि सुग्रीव परम भयमाना
विषय मोर हरि लीन्हेउ ग्याना

इधर पवन के पुत्र हनुमान जी हृदय में विचार किये जारहे थे कि राम का काम (सीता को खोजना) सुग्रीव भुला बैठे हैं । अतः हनुमान जीने ने सुग्रीव के पास जाकर उन के चरणों में सिर नवाकर उन्हें चारों प्रकार से (साम, दान, दंड, भेद) (समझाया कि आपको चलकर राम की सहायता करनी चाहिए नहीं तो नजाने वे क्या कर बैठें ।) हनुमानजी की बात सुनते ही सुग्रीव की सिट्टी–पिट्टी गुम हो गई। आंजनेय की कृपा से सचेत होकर राम के काम के लिए तैयार हुए । इस प्रकार आंजनेय कुमति निवारक हैं ।

सुमति के संगी : सद्बुद्धिवालों के साथ सदा रहने वाले हैं। यह बात विभीषण शरणागति के प्रसंग में स्पष्ट हो जाती है । विभीषण रावण से अपमानित हो कर सीधे श्री राम के पास आये और शरण माँगी । तब वहाँ पर यह प्रश्न उठा कि उनको आश्रयदेना है या नहीं । श्री राम ने सुग्रीव को बुलाया और कहा कि इस विषय में आप लोग अपना – अपना अभिमत प्रकट करें । तब सुग्रीव एवं अंगद आदिने अपने –अपने अभिमत इस प्रकार प्रकट किये –ये विभीषण शत्रु पक्ष की ओर से आये हैं । इन्हें शरण नहीं देना चाहिए और उनका वध करना चाहिए । अंत में –

अथ संस्कार संपन्नोः हनूमान् सचिवोत्तमः ।
उवाच वचनं श्लक्ष्णमर्थवन्मधुरं लघु ।
न त्वस्य ब्रुवतो जातु लक्ष्यते दुष्ट भावता ।
प्रसन्नं वदनं चापि तस्मान्मे नास्ति संशय :
एतावत्सु पुरस्कृत्य युज्यते तस्य संग्रहः ।

– वा.रा. युद्ध १७–५०,६२,६७

उसके बाद सचिवों में श्रेष्ठ, संपूर्ण शास्त्रों के ज्ञाता और संस्कार से युक्त हनुमान जी ने, श्रवण– मधुर सार्थक, सुन्दर और संक्षिप्त में वचन कहे । उनकी बातचीत से भी कभी किसी प्रकार का दुर्भाव नहीं प्रतीत होता । उनका मुख भी प्रसन्न है। इसलिए मेरे मन में इन के प्रति कोई शंका नहीं । (इनके मन में यह विश्वास

है कि शरणागत वत्सल दयालु श्रीराम अवश्य ही मेरी रक्षा करेंगे और राज्य भी देदेंगे) इन्हीं सब बातों को दृष्टि में रखकर विभीषण को शरण देना उनको अपना लेना उचित जान पडता है ।

आंजनेय को विभीषण का उत्तम स्वभाव तभी मालूम हुआ जब रावण की सभा में उन्होंने रावण को हितोपदेश किया था । इसीलिए लंका दहन के समय गुणवान विभीषण के घर को छोड कर लंका के शेष सभी घरों को जलाया था ।

वर्जयित्वा महातेजाः विभीषण गृहं प्रति ।
क्रम माणः क्रमेणैव ददाह हरिपुंगवः ॥

– वा.रा.सुन्दर ५४–१६

इस प्रकार आंजनेय ने विभीषण के साथ रहकर उनको श्रीराम का कृपापात्र बनाया। इसीसे कहते हैं – आंजनेय सदा सुमति के संगी है।

सदा रामनामहि जपै करै राम को ध्यान ।
तिनकी रक्षा करत नित गदा धरे हनुमान ॥

जो लोग सदा राम नाम का जप करते – राम के ध्यान में निमग्न रहते हैं ऐसे सुबुद्धिवालों की रक्षा सदा हनुमान जी हाथ में गदा लेकर करते रहते हैं ।

चौपाई – ४

कंचन बरन बिराज सुबेसा ।

कानन कुंडल कुंचित केसा ॥

अर्थ : कंचन = सोने का, बरन = वर्ण से, सोने की कांति से, बिराज = प्रकाशित होने वाले, सुबेसा = सुन्दर वेष से सुशोभित रहने वाले , कानन = कानों में, कुंडल = कुंडलों को धारण करने वाले, कुंचित = घुंघुराले । केसा = केशवाले ।

भाव : हे आंजनेय! तुम्हारा शरीर सोने की कांति से सुशोभित है । तुम बहुत ही सुन्दर वेष से विराजमान हो, तुम्हारे कानों में कुडंल सुशोभित हैं, तुम्हारे सिर के बाल घुंघुराले हैं ।

व्याख्या : आंजनेय की शरीर कांति सोने के वर्ण की है पर तुलसी ने संकट मोचन हनुमानाष्टक के अंत में लालिमापूर्ण कहा है ।

लाल देह लालीलसै, अरू धरि लाल लंगूर ।

वज्रदेह दानव दलन, जय जय जय कपि शूर ॥

अरुण कांति से प्रकाशित देहवाले, लाल लंगूर धारण करने वाले, वज्र जैसे कठोर शरीर वाले, राक्षसों का संहार करनेवाले, हे शूरवीर कपिवीर! तुम्हारी जय जय जय हो । लेकिन तुलसी ने राम चरितमानस में हनुमानजी के शरीर को सोने की कांति जैसा बताया है ।

कनक बरन तन तेज बिराजा ।

मानहुँ अपर गिरिन्ह कहराजा ॥

– रा. च.मा. किष्किंधा कांड२९–४

जाम्बवान ने हनुमानजी के बारे में कहा है – उनका शरीर सोने के वर्ण का है। तेज से सुशोभित है, वे ऐसे है जैसे दूसरे सुवर्ण गिरि हों । यहाँ हनुमान जी की तुलना सुमेरूपर्वत से की गई है । हनुमान जी का शरीर सुवर्ण वर्ण का है । सुमेरू

पर्वत सुवर्ण का है । उनके शरीर का परिमाण विशाल है । सुमेरू पर्वत भी वैसाही है। वह पर्वतों का राजा है तो आंजनेय वानरों में अग्रगण्य है, श्रेष्ठ है ।

"अतुलित बलधामं स्वर्ण शैलाभ देहम्"

वे अतुलित बल के धाम हैं और स्वर्णशैल सुमेरू पवर्त जैसे कांतिमय देह वाले हैं ऐसा राम चरितमानस के सुन्दर कांड के मंगलाचरण श्लोक में हनुमानजी के बारे में कहागया है, यही नहीं –

कनक भूधराकार सरीरा ।
समर भयंकर अति बलबीरा ।।

– रा.च.मा.सुन्दर १५–4

सीता ने हनुमान जी को देखकर इस प्रकार कहा है –

स्वर्ण पर्वताकार शरीर वाले हैं । युद्ध में शत्रुओं को डराने वाले बहुत बडे बलवान वीर हैं । विनय पत्रिका (२८) में – जातरूपा चलाकर विग्रह – आंजनेय का शरीर सुमेरू पर्वताकार के समान है।

आंजनेय जैसे अतुलित बलधाम हैं वैसेही अतुलित शरीर वाले हैं । जैसे सोना आग में नहीं जलता, विकृत नहीं होता, वैसे ही आंजनेय का स्वर्णशैलाभ शरीर भी आग में नहीं जलता ।

कनकहु पुनि पाहनते होई ।
जारेहु सहज न परिहरि सोई ।।
कनकहु बानचढइ जिमिदाहे

लंका को जलाने पर भी आग ने उन्हें नहीं जलाया । उस आग से उनके शरीर की कांति व्दिगुणित हो गई । सीता देवी ने भी उन्हें वर दिया है –

"अजर अमर गुणनिधि सुत होई " – रा.च.मा.सुन्दर १६–२

हे पुत्र! तुम अजर अमर होजाओं और तुम में संसार के सारे गुण भी आ जाय, अजर माने जो नहीं जलता । सुवर्ण अग्नि के तेज का लक्षणवाला है । अग्नि वन

को जलाता है । अग्नि के तेज के लक्षण से महिमान्वित स्वर्ण वर्ण शरीर वाले आंजनेय राक्षस सैन्यरूप जंगलों को जलायेंगे ।

"स्वर्ण संकाश कोटि रवि तरूण तेज धन"

(हनुमान बाहुक) स्वर्ण पर्वत के समान है । कोटि सूर्यसम प्रकाशवान आंजनेय हैं। कहीं–कहीं आंजनेय को अरूण वर्ण वाले कहने के पीछे यह अग्निलक्षण ही कारण रहा होगा । अरूणवर्णवाला वर्णित हनुमान बाहुक में उनको स्वर्ण शैल समान कहा गया है ।

श्री हनुमानजी का सिन्दूर लेपन सुप्रसिद्ध है । इस सिन्दूर लेपन से वे अरूण वर्ण के हो जाते हैं । आंजनेय के सिन्दूर लेपन को पसंद करने के संबन्ध में कथा इस प्रकार है –

एकबार जयवार के दिन सीतामाता ने तैलाभ्यंग स्नान किया और तिलक धारण करके सीमंत में सिन्दूर लगाते देख आंजनेय ने पूछा कि इस प्रकार सिन्दूर लगाने का कारण क्या है? तब सीता माता ने कहा कि सीमंत में सिन्दूर लगाने से (पतिदेव) श्रीरामजी की आयु की वृद्धि होगी, इसबात को सुनते ही आंजनेय ने अयोध्या के बाजार में जाकर सिन्दूर लेकर सारे शरीर में लगा कर दरबार में आये तो उनके उस विचित्र वेष को देखकर दरबार के सब लोग हँस पडे । तब आंजनेय ने सीता माता के सीमंत में सिन्दूर लगाने की बात बताकर उन से कई गुना अपने प्रभु श्री रामचन्द्र जी की आयु बढजाने के लिए ऐसा किया है। इसबात को सुनते ही दरबार के सब लोग विस्मय से अवाक् रह गये। श्रीराम ने आंजनेय की अनन्य स्वामि भक्ति से प्रसन्न होकर ऐसा वरदान दिया कि जयवार के दिन जो लोग आंजनेय को तैल मिश्रित सिंदूर का लेपन करते हैं, उनकी सभी कामनाओं को वे पूरा करेंगे । तब से मंगलवार के दिन आंजनेय को भक्त लोग अलंकार के रूपमें सारे शरीर में तैल मिश्रित सिन्दूर लगाना प्रचार में आया है । वैसा करने से हनुमान जी की सेवा हो जाती है और वे प्रसन्न होजाते हैं ।

सुबेसा : अच्छे वेष से तात्पर्य, राजा ओं के कीमती वेष से है ।

"सुग्रीवो हनुमांश्चैव, महेन्द्र सदृश द्युती ।
स्नातौ दिव्य निभैः वस्त्रैः जग्मतुः शुभ कुंडलौ ॥

– वा.रा.युद्ध १२८–२९

सुग्रीव और हनुमान महेंद्र के समान कांति वाले स्नानकर देवतायोग्य वस्त्रों को पहन कर शुभ कुडंलों को धारण कर आगे बढ़े ।

कानन कुंडल : कई जगहों पर वर्णन आया है कि श्री आंजनेय के कानों में दिव्य कुंडल हैं । पराशर संहिता में (छठे पटल–हनुमज्जन्म कथा)

"सर्व ब्रह्म विदां श्रेष्ठं सर्वदर्शन सम्मतम् ।
माणिक्य कुंडल धरं, दिव्य पट्टाम्बरान्वितम्॥

सब ब्रह्मवेत्ताओ में श्रेष्ठ समस्त दर्शन शास्त्रों से सम्मत माणिक्य कुंडलों को, दिव्य पट्टाम्बरों को धारण किये हुए श्री आंजनेय हैं । इसी प्रकार ब्रह्मांड पुराण में कहागया है –

पद्मराग कृतमंडलत्विषा
पाटलीकृत कपोलमंडलम्
दिव्यगेहकदली वनांतरे भावयामिपवमान नंदनम्
वज्रांगपिंगकेशाढ्यं, स्वर्णकुंडल मंडितम्
नियुद्ध कर्म कुशलं पारावार पराक्रमम् ।

पद्मराग मणियुक्त कुंडलों की कांति से अरुणवर्ण से सुशोभित कपोलवाले, दिव्य गेह कदली वन में बसनेवाले पवन नंदन की हृदय में भावना करता हूँ । वज्रशरीर, पिंगलवर्ण (अरुण–पीतवर्ण मिश्रित) के केश, कानों में सुवर्ण कुंडलवाले, नियुद्ध निपुण, समुद्र जैसे पराक्रमी हनुमान जी की भावना करता हूं ।

नारद पुराण में –

"तप्त चामीकर निभं, भीघ्नं संविहितांजलिम् ।
चलत्कुंडल दीप्तास्यं, पद्माक्षं मारुतिं स्मरेत् ॥

आंजनेय के वेष का वर्णन इस प्रकार है– वे अग्नि तप्त स्वर्णवाले, भय को भगानेवाले, अंजलिबद्ध, चलत्कुंडलों से प्रकाशित मुखमंडलवाले,पद्मों के जैसे नेत्रवाले मारुति का स्मरण करना चाहिए । इस में कुंडल की प्रस्तावना विशेषरूप से दिखायी देती है।

कुंचित केसा : कुंचित माने संकुचित है। श्री हनुमान जी के केश घुंघुराले हैं गोलाकार में संकुचित हैं । ऐसे केशपाश से और घुंघुराले अलकों से श्री आंजनेय का मुख शोभायमान है ।

चौपाई – ५

हाथ बज्र औ –ध्वजा बिराजै ।

काँधे मूँज जनेऊ साजै ।।

अर्थ : हाथ = हाथ ; बज्र = वज्र जैसे अस्त्र को ; औ = और ; ध्वजा = झंडे को (धारणकर) ; बिराजै = विराजमान (प्रकाशमान) ; काँधे = भुजापर ; मूँज = मूँज घास से निर्मित ; जनेऊ = यज्ञोपवीत ; साजै = शोभित होनेवाले ।

भाव : आंजनेय के हाथ में वज्रायुध, झंडा, भुजापर लटकते मुँजाघास से निर्मित यज्ञोपवीत सुशोभित है ।

व्याख्या : आंजनेय का हर एक अंग (अवयव) दिव्य सौंदर्य से शोभायमान है । वे जन्मतः दिव्य भूषणों से भूषित रहे । गिरिधर रामायण (बाल १३/३–५) में इस प्रकार वर्णित है ।

उदयाचल उपरजेम उगे काँति अंग दिनेश
विद्युत् जेवा कुंडल झलके मणी जडित शिरटोपी
वज्री कछोटी कोपीन कंचन कटिये मुँजी ओपी
महावीर रणधीरने शोभे यज्ञोपवित्तज सार
सुख पुच्छाग्र प्रवाल जेऊँ रक्त वरण सुकुमार

उनके अवयवोंकी कांति उदयाचल पर उदित होनेवाले सूर्य की कांति के समान है । सिर पर मणि जडित किरीट, कानों में देदीप्यमान कुंडल विद्युल्लता की भाँति चमक रहे है । इनके वज्रायुध, छोटा सा कौपीन, स्वर्ण जैसी कटि (कमर) पर मूँज घास की रस्सी, वक्षस्थल पर यज्ञोपवीत सुशोभित हैं । पूँछ का अगलाभाग प्रवाल की भाँति अरूण वर्ण और कोमल है ।

नमः श्रीराम भक्ताय, अक्षविध्वंसनाय च ।
नमो रक्षः पुरीदाह कारिणे वज्र धारिणे ।।

श्रीराम भक्त, अक्षयकुमार को मारनेवाले, राक्षस नगर को जलानेवाले, वज्रायुध को धारण करनेवाले आंजनेय को नमस्कार है । (स्कंन्द पु. ब्रह्मखंड धर्मारण्य ३७–३) में आंजनेय को वज्रधारी कहागया है ।

रघुराजसिंह महाराज विरचित रामस्वयंवर (२३ वे प्रबन्ध) में वर्णित है कि आंजनेय के हाथ में वज्र है । लंका से लौट आनेपर अयोध्या नगर में श्रीरामचन्द्र जी के भ्रमण करने का ढंग इस प्रकार वर्णित है ।

भेसवार स्यंदन रघुनंदन
फहरि रहे पताक बहु बृन्दन
बाजिन बाग भरत करलीनो
रिपुहन छत्र लियो मुद भीनो
लखन चमर चालत सुखछाई
द्वितीय चमर किय निसिचर राई
रथ ध्वज लिये खडो हनुमाना
कियो राम इमि अवध पयाना ।

रथ पर जब श्रीरामचन्द्र जी अयोध्या की वीथियों में घूमते थे, भरत घोडों की लगाम पकड कर रथ चलाते थे । शत्रुघ्न छत्र पकडते थे । लक्ष्मण और विभीषण चामर चलाते थे । आंजनेय झंडे को धारण कर रहे थे ।

आंजनेय के वज्र और झंडे को धारण करने के विषय को वैसे छोडदे। ये वज्र और केतन (झंडे) को हस्तसामुद्रिक रेखाओंके रूप में पहचान ले सकते है। श्रीरामचन्द्र जी के चरणों में जो रेखायें है, वे ही श्रीरामदास श्री आंजनेय के करतलों में है । श्रीरामचन्द्र जी के चरणों में वज्र – ध्वज अंकुश रेखाओं के होने का उल्लेख रामचरित मानस में हुआ कि (बाल १९८/२, **रेख कुलिस ध्वज अंकुस सोंहे**) अध्यात्म रामायण (अरण्य ५–२) में

एकदा गौतमी तीरे पंचवट्याः समीपतः ।
पद्म वज्रांकुशांकानि पदानि जगती पतेः ।।

ऐसा कहागया है कि एक समय शूर्पणखा पंचवटी के समीप गोदावरी तटपर पद्म–वज्र–अंकुश रेखा से शोभित श्रीरामचन्द्रजी के चरण चिह्नों को देखकर मोहित हुई ।

वज्रांकुशध्वज सरोरूह लक्षणाढ्यम् ।
वन्दे महापुरूष ते चरणारविंदम् ।।

हे महापुरूष रामचंद्र ! वज्र – अंकुश–ध्वज–पद्म से सुशोभित तुम्हारे चरण कमलों को प्रणाम है ।

सामुद्रिक शास्त्र के अनुसार जिसके करतलों में वज्ररेखा है वह वज्र समान शरीर वाला होकर – महा बलवान होकर – महान युद्धवीर होगा ।

जिसके करतल में ध्वज रेखा है – वह सर्वत्र विजयी होगा । ऐसा रेखा वाला जिसके पक्ष में होगा उसे सर्वत्र कीर्ति और विजय मिलेगी । (पराशर संहिता (छठे पटल हनुमान जन्म प्रसंग) में –

ध्वजवज्रांकुश = छत्र पद्म रेखांघ्रि संयुतम् ।
दीर्घ लांगूल सहितं दीर्घ कायं महाहनुम् ।।

जिनके चरणों में ध्वज वज्रांकुश छत्र पद्म रेखाएं है , दीर्घ शरीर है और बहुत बड़ी ठोडी है वे हनुमान हैं ।

"**कांधे मूंज जनेऊ साजै** : सूत के घास से बने यज्ञोपवीत के अलावा मूंजा की घास से बने यज्ञोपवीत भी धारण करतै हैं। "**मौंजी यज्ञोपवीता = भरण रूचि शिखा शोभितम्**" कहकर हनुमान की प्रार्थना करते हैं । मौजी को मेखला बंधन कहते हैं । मेखला बंधन के समय यह मंत्र पढा जाता है –

श्रद्धयाः दुहिता – तपसोधि जाता स्वस
ऋषीणां भूतकृतौ बभूव ।
– –सानोमेखले मतिमा धेहि मेधामधोनोधेहि तप इंद्रियंच

– अथर्व वेद ६–१३३–४

ब्रह्माजी के तप से वेद प्रति पादित कर्मों में आस्तिक बुद्धि रूपी श्रद्धा के पुत्री

के रूप में मेखला पैदा हुई । महर्षियों की भगिनी बनी । मूंजा से निर्मित हे मेखला! तुम श्रुत धारण सामर्थ्य रूप बुद्धि हमें प्रदान करो ।

वशिष्ठ गृह्य सुत्रों में (पांचवे प्रकारण में) इस प्रकार कीर्तित है कि यह मूंजा की रस्सी नैतिक मूल्यों की रक्षा करने वाली, समस्त पापों को दूर करने वाली और तपो नियमों को सुहढ बनाने वाली है। वैद्य शास्त्र में कहा गया है कि, मूंजा की घास विशिष्ट फल देने वाली है ।

राज निघंटु में –

मुंजस्तु मधुरश्शीत : कफ पित्तज दोषजित् ।
ग्रहरक्षासु दीक्षासु पावनो भूतनाशनः ।।

कहा गया है कि मुंज की घासमधुर, शीतल, कफप्ति से संबंधित दोषों को दूर करने वाली, ग्रहों से रक्षा करने वाली ओर भूतों को नाश करने वाली है ।

भाव प्रकाश में भी ऐसा ही कहा गया है –

मुंजद्वयंतु मधुरं तुवरं शिशिरं तथा ।
दाहतृष्णा विसर्पास्र मूत्र कृच्छादि रोग हरत् ।।
दोषत्रय हरं वृष्यं मेखला सूपयुज्यते ।

श्रेष्ठ मुंज की घास मधुर, कटु, शीतल है। दाह को– तुष्णा को–विसर्प–अस्र–मूत्र–कृच्छादि रोगों को – वात पित्त–कफ आदि दोषों को दूर करने वाली है और वीर्य की वृद्धि करने वाली है।

मुंजो z नुष्णो विसर्पास्र त्रबस्त्यक्षि रोगनुत् –
बाणाह्वो मधुरश्शीतः प्ति दाहतृषापहः ।।

बाणनामांतर मुंजमधुर है, ज्यादा गरम करने वाली नहीं, ठंडा करने वाला, प्ति–दाह–तृष्णा को, विसर्प–अस्र–मूत्र–बस्ति–अक्षिरोगों को दूर करने वाला है। इस प्रकार आरोग्य लक्षणों वाला मुंज ब्रह्मचर्य की रक्षा करता है। इस घास से बने तीन धागों वाले यज्ञोपवीत को धारण करने वाला ब्रह्मचारी –तीन वेदें में निष्णात हो जाने को सूचित करता है। इस प्रकार हनुमान के पास मूंज रस्सी के यज्ञोपवीत का होना उनके अस्खालितब्रह्मचर्य का और "**मरणं बिंदुपातेन जीवनं बिंदु धारणात्**" भूत प्रेत पिशाचादि को भगाने की शक्ति का प्रतीक है ।

चौपाई – ६

संकर सुवन केसरी नंदन ।

तेज प्रताप महाजग बंदन ।।

अर्थ : संकर = शंकर के, सुवन = सुत; केसरी = केसरी नामक वानर राजा के ; नंदन = कुमार ; महा = महान । तेज = तेज ; प्रताप = प्रतापवान; जगबंदन = जग में पूजित होने वाले ।

भाव : हे आंजनेय ! तुम शंकर के पुत्र हो, केसरी के कुमार हो, महान् तेजस्वी हो, प्रताप वान हो, सारे जगत में वंदनीय हो ।

व्यख्या : आंजनेय के शंकर जी के पुत्र होने के बारे में कई पौराणिक कथाएं प्रसिद्ध हैं। उन में से कुछ को देखेंगे ।

ब्रह्माजी से प्राप्त वरों के कारण दुरहंकारी रावण तीनों लोकों को सताने लगे, तो देवता लोग शंकर जी और ब्रह्माजी को लेकर वैकुंठ गए और श्रीमन्नारायण की शरणली । उनकी प्रार्थना सुनकर श्री महाविष्णु ने देवताओं के तेज में अपने तेज को जोड़कर गोला बनाकर शंकर जी को देकर खाने को कहा और यह भी कहा कि उससे शंकर के रूद्रांश से पुत्र पैदा होगा । देवता लोग विभिन्न रूपों में भूलोक में पैदा होंगे । वे खुददशरथ के पुत्र के रूप में अवतरित होंगे और सब को साथ लेकर रावण का संहार करेंगे । देवता उनके आदेश का पालन करने गये। भगवान विष्णु से मिले गोले को शंकर जी ने निगल लिया । पार्वती के साथ रति की क्रीडा की । पार्वती सर्व तेजोमय शंकर वीर्य रूप उस गोले के भार को वहन न कर पाई तो उसे अग्नि को देदिया । अग्नि ने उसे वायु को दिया । वायु भी उसे वहन न कर पाये । सोचने लगे कि उसे किसे दिया जाय। उसी समय वेंकटाचल पर आकाश गंगातीर्थ में संतान हेतु शिवजी के बारे में तीव्र तप करनेवाली अंजना देवी सर्वथा योग्या के रूप में प्रतीत हुई । तुरंत अंजना देवी के समक्ष प्रकट होकर प्रसाद के रूप में उस गोले को दिया और खाने को कहा। वायु देव के कहे अनुसार

अंजना देवी ने खाली तो वैशाख बदी दशमी शनीचर वैधृति योग कर्काटक लग्न में आंजनेय पैदा हुए । इस प्रकार त्रिमूर्तियों के और समस्त देवतओं के तेज से विशेषतः शिवजी के वीर्य के कारण पैदा हुए । इस प्रकार सर्व देवता के स्वरूप में और शिवजी के रूप में कीर्तित हो रहे हैं ।

शिवपुराण – रूद्र संहिता (अध्याय –२0) में यही कथा परिवर्तित रूप में दिखाई देती है। एक बार शिव–केशव विनोद करते समय – पहले समुद्र मंथन के समय अंत में बाहर निकले अमृत को देव दानवों को वितरित करने के बहाने श्री महाविष्णु ने जिस मोहिनी स्वरूप को धारण किया, उस रूप को फिर से देखने की इच्छा शिवजी ने विष्णु से प्रकट की। "तथास्तु" कहकर भगवान विष्णु चले गये । वह वसंत का काल था । सारी प्रकृति प्रफुल्लित और शोभायमान रही । सब प्राणी काम के वशीभूत हो रहे थे । उस समय शिवजी को थोड़ी दूर पर अद्भुत सौंदर्य से आंखो को चकाचौंध करने वाली एक दिव्यांगना दिखाई पड़ी। शिवजी ने उन्हे देख मोहित होकर उनसे रति क्रीडा की। तब भविष्य में रामकार्य में सहयोगार्थ शिवजी का वीर्य स्खलित हुआ । उस मोहिनी दिव्यांगना ने विष्णु और शिवजी को मोहित कर शिवजी के वीर्य स्खलन के बाद स्वस्वरूप को दिखाया। शिवजी को मालूम हुआ कि अपनी कामातुरता का कारण विष्णु की माया है। उसके बाद वे दोनों मुनिरूप धारण कर उस शिवजी के वीर्य को एक दोने में रख कर सोचनेलगे कि उसे क्या करना है, किसे देना है। जंगल में घूमते समय उन्हें घोर तप करने वाली एक स्त्री दिखाई पड़ी । वे उनके पास गये और बोले – माता! तुम तप तो कर रही हो, किसी योग्य मृनि से मंत्र की दीक्षा लेकर तप करोगी तो सफलता मिलेगी । ऐसा कहने पर उन्हों ने थोड़ी देर सोचकर – आपजैसे तेजस्वी मुनियों के रहते किसी अन्य से दीक्षा लेने की क्या जरूरत हैं? प्रार्थना कीकि आप ही मुझे मंत्र की दीक्षा दें। तब उन्होंने शिवजी के वीर्य को अभिमंत्रित कर उनके कान के जरिये उसे उनके गर्भ में निक्षिप्त कर दिया । वे और कोई नहीं, संतान के लिए तप करने वाली अंजना देवी ही हैं। कुछ दिनों के बाद अंजना देवी के गर्भ से शंकर जी के वीर्य से पुत्र पैदा हुए । वे ही शंकर के सुत आंजनेय हैं।

आंजनेय साक्षात् शंकर होने के संबंध में कई पौराणिक काथाएं प्रचार में हें – कुछ इस प्रकार है ।

१. एक बार पार्वती देवी ने शिवजी से पूछा – आप सदा रामनाम का जप करते ही हैं । वैसे राम के सेवक के रूप में और दास के रूप में अवतरित होने की बात आपने कही थी । अपने दस सिरों को काटकर आप को समर्पित कर आपके अनन्य भक्त के रूप में प्रसिद्ध रावण के वध के लिये भगवान राम के रूप में अवतरित होंगे। आपके पियतम भक्त के वध के लिये अवतरित होने वाले राम की मदद करना कहाँ तक उचित है ?

तब शिव ने बताया – देवी ! रावण ने मेरी पूजा अवश्य की पर मेरे एक अंश का अपमान किया । रावण ने अपने दस सिरों को काटकर मात्र अपने दस अंशो से पूजा कर एकादश अंश का तिरस्कार किया । एकादश रूद्र शिवांश है । इस के कारण उस एकादश रूद्र के अंश से मैं अंजना देवी के गर्भ से पैदा होकर रावण वधके समय मैं अपने प्रभु श्री राम चंन्द्र जी की मदद करूँगा ।

2. पराशर संहिता में दूसरी कथा इस प्रकार है – मंदाकिनी तट पर वशिष्ठ के पौत्र, शक्ति अदृइयंति दंपति के पुत्र व्यास के पिता पराशर ने जब अपने शिष्यों के साथ बैठे थे, तब मैत्रेय नामक शिष्य की प्रार्थना के अनुसार हनुमान के जन्म के बारे में इस प्रकार कहा –

शिवजी के वरों से घमंडी बने गार्दभ निस्वन नामक राक्षस देवताओं और ऋषियों को सताने लगा तो देवता लोग वैकुंठ गये और विष्णु से प्रार्थना की । तब विष्णु ने उन सब को सविनय सारा समाचार सुनाया । तब शिवजी ने कहा –गार्दभ निस्वन मेरा भक्त है, उसे मैं नहीं मारूंगा। तब विष्णु ने कहा – शिवजी ! मैं भी तो आपका भक्त हूं । मैं आपका स्मरण कर उसे मारूंगा । इस बात को लेकर शिव केशव में काफी विवाद हुआ । आखिर शिवजी ने कहा – आप गार्दभ निस्वन को मारेंगे तो मैं आपका दास बन कर आपकी सेवा करूंगा । विष्णु ने कहा – अगर मैं उस राक्षस को नहीं मारूंगा तो तुम्हारे और तुम्हारे प्रमथ गणों का सेवक

बनूंगा। बाद को भगवान विष्णु शिवजी को प्रणाम कर जिस वन में गार्दभ निस्वन रहता था – जगन् मोहिनी के रूप में वहां जाकर मृदु मधुर गीत गाने लगे । उन्हें देखकर गीत सुनकर काममोहित गार्दभ को नूतन वधू के रूपं में मोहिनी ने मधुपान करायी । मधु पीकर बेहोश हुए गार्दभ को भगवान विष्णु ने भेडिया के रूप में उस का गला काटकर मार दिया । देवताओं ने विष्णु की स्तुति की ।

३ आनंद रामायण में जो कथा है वह इस प्रकार है – दशरथ ने संतानार्थ पुत्रकामेष्टि की तो अग्निदेव ने प्रसन्न होकर हविष्यान्न – पायस को राजा को देकर कहा – उसे रानियों को बांट दें । दशरथ ने उस पायस को तीन भाग करके तीनों रानियों को बांट दिया । इतने में एक पक्षी आकर कैकेयी के हाथ के पायस को चोंच में लेकर उडगया ।

यह पक्षी वास्तव में ब्रह्म लोक की सुवर्चसा नामक अप्सरा थी । जब वह नृत्य कर रही थी तो काम वासना से प्रेरित हुई तो ब्रह्माजी ने शाप दिया कि – तुम मर्त्य लोक में जाकर रहो । तब वह गिड गिडाने लगी तो द्रवित होकर ब्रह्माजी ने कहा – यज्ञ पायस संपर्क से शाप विमोचन होगा ।

अपने पायस को जब पक्षी लेगया तो कैकेयी दुखी हुई । तब कौशल्या और सुमित्रा से दशरथ ने कहा कि – वे अपने –अपने हिस्से में से पायस कैकेयी को दे दें । उन दोनों ने वैसा ही किया । कुछ दिनों के बाद तीनों रानियों को राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न पैदा हुए ।

सुमेरु पर्वत पर वानरराज केसरी की पत्नी अंजना देवी पुत्र की प्राप्ति के लिये सात हजार वर्ष से शिवजी को प्रसन्न करने के लिए तप कररही थी । आखिर तप से प्रसन्न होकर शिवजी ने प्रकट होकर वर मांगने को कहा – तब अंजना ने इच्छा प्रकट की कि उसे सकल सद्गुण संपन्न योग्य पुत्र प्रदान करें । तब शिवजी ने कहा – अपने एकादश अंश से एक पुत्र पैदा होगा । बाद को एक मंत्र की दीक्षा देकर कहा – इस मंत्र को जपते रहो । वायुदेव तुम्हे प्रसाद दे देंगे । उस प्रसाद के भक्षण से तुम्हारी कामना पूरी होगी । तब अंजना देवी हाथ को फैला कर मंत्र का जप कर रही थी । ठीक उसी समय आकाश मार्ग से चोंच में पायस लेकर पक्षी जाने लगा तो जोर की हवा के कारण पायस फिसल कर अंजना की अंजली

में गिर पडा । उस पायस को अंजना देवी ने भक्षण कर गर्भधारण कर रुद्रांश रूप हनुमान जी को पैदा किया । (पक्षी शाप मुक्त हो कर अप्सरा होकर फिर से ब्रह्मलोक में पहुंची)

४. भगवान विष्णु ने जब ब्रह्मादि देवताओं से कहा – रावण के वध के लिये दशरथ के बेटे के रूप वे अवतरित होंगे तब ब्रह्माजी ने देवताओं से कहा–

"वानर तनु धरि–धरियहि पद सेवहु जाइ"

– रा.चा.मा.१–१८७

वानर शरीरों से तुम लोग श्री रामजी की सेवा करो। तब शंकरजी भी वानर रूप को पाने का निश्चय कर हनुमानजी के रूपमें अवतरित हुए –

जेहि सरीर रति सो सोई आदर हि सुजान् ।
रुद्र देह तजि नेहबस बानर भे हनुमान् ।।
जानि राम सेवा सरस समुझि करब अनुमान् ।
पुरुखाते सेवक भए हरते भए हनुमान् ।।

– दोहा वली १४२–१४३

सज्जन लोग उसी का आदर करते हें जिसे राम से प्रेम हो। देखो हनुमान जी ने रामकी भक्ति के ही कारण शिवजी का शरीर छोड़कर वानर का शरीर धारण कर लिया । रूद्र के अवतार हैं हनुमान । श्री रामजी की सेवा से प्राप्त होने वाले आनंद के लिये ब्रह्माजी जांबवान के रूप में और शंकर जी हनुमानजी के रूप में अवतरित हुए ।

५. बृहद्धर्म पुराण (अध्याय १८–२०)में दूसरे प्रकार की कथा है।

रावण के रक्षक के रूपमें लंका नगर में पार्वती परमेश्वर रह रहे थे । प्रमथ गणों से पार्वती को मालूम हुआ कि सीता देवी को रावण से भय और संदेह हो रहा है तब मनमें दुखी होकर लंका छोंड़ देने को तैयार हुई। उस समय श्री शिवजी ने भी राम कार्य निर्वाह के लिये हनुमान बन जाने का निश्चय किया और

पार्वती का अनुगमन किया। ब्रह्माजी जांबवान के रूप में और धर्म विभीषण के रूपमें पैदा हुए।

इसी प्रकार कई पुराणों में आंजनेय को श्री शंकर जी का अवतार बताया गया है। विविध पुराणों में हनुमान को शिवावतार कहा गया। है

1. अंजनी गर्भ संभूतः हनुमान् पवनात्मज :।
यथा जातो महादेवो हनुमान् सत्य विक्रमः ।।

– वायुपुरण पूर्वार्द्ध ६०–७३

2. यो वै चैकादशो रूद्रो हनुमान् स महाकपिः।
अवतीर्ण स्सहाय्यार्थ विष्णोरमित तेजसः।

– स्कंद, माहेश्वर केदार ८–९९–100

अमित शक्ति शाली विष्णु को (राम को) सहयोग देने हेतु एकादश रूद्रों में से एकादशवें रूद्र महाकपि हनुमान जी के रूप में अवतरित हुए।

3. ऊर्जे कृष्ण चतुर्दश्यां भौमें स्वात्यां कपीश्वरः।
मेषलग्नेंजना गर्भात् प्रादुर्भूतः स्वयं शिवः ।।

– अगस्त्य संहिता

कातिर्क कृष्ण चतुर्दशी भौमवार स्वाती नक्षत्र युक्त मेषलग्न में अंजना गर्भ से स्वयं शिवजी ही कपीश्वर हनुमान जी के रूप में पैदा हुए।

4. यशोवितान धवलीकृत जगत्रितयायच।
वज्र देहीति चोक्ता हि रूद्रावतार पदं तथा ।।

– अगस्त्य ३२–१२

अपने यश से तीनों लोकों को धवलकांति से चमकाने वाले वज्रदेही के रूप में वर्णित हनुमान स्वयं रूद्रके अवतार हैं।

तुलसीदास जी ने भी आंजनेय को शिवजी का अवतार बताया है।

"रामकोदुलारो दास बामदेवकोनिवास"

हनुमान बाहुक – ९

"बामदेवरूप भूप रामके स्नेही"

हनुमान बाहुक – १४

बामदेव माने शिवजी है। आंजनेय शिव के स्वरूप है और श्री राम के मित्र हैं।

जयति रणधीर रघुवीर हित
देवमणि रुद्र अवतार संसार पाता

विनय पत्रिका २५–३

रणधीर रधुवीर के हितैषी है, देवताओं में श्रेष्ठ रुद्र का अवतार ही आंजनेय हैं।

केसरीनंदन : तेज प्रताप : केसरी नंदन आंजनेय कीबात दूसरी चौपाई में देख सकते हैं। आंजनेय बहुत बड़े तेजस्वी हैं। आंजनेय की तेजस्विता चौथी चौपाई में विस्तार से वर्णित है। आंजनेय जितने तेजस्वी है उतने ही महान प्रतापी हैं। अशोक वाटिका के विध्वंस के बाद जब आंजनेय रावण की सभा में गये तब इंद्रादि देवता, राक्षसरसवीर विनम्र होकर हाथबांधे खड़े हैं और सभी सहमे हुए पर आंजनेय रावण की प्रभुता और प्रताप को देखकर जरा भी भयभीत नहीं हुए। वे सर्पों के बीच गरूड़ की भांति रहे। इस भाव को रामचरित मानस (सुंदर १९–४) में यों कहा गया है।

करजोरे सुरदिसिप बिनीता
भृकुटि बिलोकत सकल सभीता
देखि प्रतापन कपि मन संका।
जिमि अहिगन महु गरुड असंका ॥

इंद्रादि देवता भयभीत होने पर भी, आंजनेय रावण से जरा भी नहीं डरे। इससे स्पष्ट हो रहा है कि वे इंद्रादि देवताओं से तथा रावण से भी प्रतापी धैर्यवान है।

रावण का प्रताप तामसगुण प्रधान है जबकि आंजनेय का प्रताप सत्वगुण प्रधान है। देवता लोग रावण से डरकर उनकी सेवा करते हैं जब कि आंजनेय की भक्ति से सेवा करते हैं। आंजनेय के न डरने का कारण शायद यह भी हो सकता है – उनके हृदय में रावण से कई गुना अधिक प्रतापवान श्री रामचन्द्रजी का प्रताप विराज मान है ।

जग बंदन : सभी लोग आंजनेय के समक्ष सिर झुकाते हैं। महर्षि, देवता आदि सब कोई आंजनेय की महिमा भक्ति, तेज, सरलता, दयालुता आदि सभी सद्गुणों से मुग्ध हुए हैं । महाभारत युद्ध के प्रसंग में अर्जुन के केतन पर गरजते आंजनेय को देखकर भीष्म द्रोणादि वीर अपने को कृतार्थ मान बैठें –

भारत में पारथ के रथ केतु कपिराज
गज्यो सुनि कुरूराजदल हलभलभो
कहयौ द्रोण भीष्म समीर सुत महावीर
वीर वारिनिधि जाको बल जलभो
बानर सुभाय बालकेलि भूमिभानु लगी
फलंग फलांग हूते घाटि नभतलभो
ना इ ना इ माथ जोरि, जोरि हाथ जोधा जोहै
हनुमान देखे जग जीवन को फल भो ।।

महाभारत युद्ध में पार्थ केतन पर स्थित कपिराज को देखकर, उनके सिंह गर्जन सुनकर कुरूराज व्याकुल हुए । भीष्म द्रोणादि से युक्त महासेना समुद्की भांति विचलित हुई । वानर वीर आंजनेय की बालकेलि भूमंडल से सूर्य मंडल तक पहुंच गई। तब जगत को जीवन दान करने वाले आंजनेय को सभी ने भक्तिभाव से अभिवंदन किया ।

चौपाई – ७

बिद्यावान गुनी अति चातुर ।
राम काज करिबेको आतुर ॥

अर्थ : बिद्यावान = विद्यावान ; गुनी = गुणवान; अति चातुर = अत्यंत चतुर ; श्री राम काज = श्री राम के कार्य, करिबेको = पूराकरने को, आतुर = उत्साह रखने वाले हैं ।

भाव : आंजनेय सभी विद्याओं में पंडित, समस्त गुणों से विभूषित, राम कार्य को पूरा करने में बहुत शीघ्रता करने वाले और उत्साह रखने वाले हैं ।

व्याख्या : बिद्यावान – आंजनेय सभी विद्याओं में पारंगत हैं। महर्षियों की आज्ञा से आंजनेय ज्ञानी भगवान सूर्य के पास गये और विद्या दान देने की प्रार्थना की । किंतु भगवान सूर्य ने कहा भैया! मैं तो एक जगह एक क्षण भी टिका नहीं रहता, सर्वदा भ्रमण करता रहता हूं । मेरे पास तुम विद्या कैसे सीख सकते हो? तब आंजनेय ने बताया कि मैं उदयाचल पर एक पैर और अस्ताचल पर दूसरा पैर रखकर खड़े होकर सभी विद्याओं को सीख लूंगा । भगवान सूर्य ने उनके उत्साह से प्रसन्न होकर उन्हें वेद वेदांगादिसभी शास्त्रों को और विभिन्न विद्याओं को सिखाया। इस प्रकार आंजनेय विद्यावान – सर्व कला शास्त्र पारंगत बने ।

गुनी : आंजनेय सर्व गुण संपन्न हैं । श्री राम ने एक समय महर्षि अगस्त्य से इस प्रकार कहा – वे शौर्य, धैर्य–बल–बुद्धि में दक्ष हैं। राजनीति, युद्धनीति आदि में प्रवीण हैं और महान पराक्रमी हैं । यही भाव इस श्लोक में है –

शौर्यं दाक्ष्यं बलं धैर्य, प्राज्ञता नय साधनम् ।
विक्रमश्च प्रभावश्च, हनूमति कृतालयाः ॥

– वा.रा. उत्तर ३५–३

और

तेजोधृतिर्यशो दाक्ष्यं. सामर्थ्यं विनयो नयः ।
पौरूषं विक्रमो बुद्धिः यस्मिन्नेतानि नित्यदा ।।

– वा.रा.युद्ध १२८–८२

तेज, धैर्य, यश, दक्षता, सामर्थ्य, विनय, नीति, पौरूष विक्रम, बुद्धि आदि गुणों से आंजनेय सदा सुशोभित रहते हैं ।

वाल्मीकी रामायण में कहा गया है कि ऐसा गुणी होने के कारण ही श्री रामचन्द्र के राज्याभिषेक के समय सीता माता ने आंजनेय को बहुमूल्य मुक्ता हार भेटं के रूपमें प्रदान किया ।

तुलसीदासजी ने अपने रामचरित मानस के आरंभ में आदि काव्य के प्रणेता महर्षि वाल्मीकि को और आंजनेय को समान स्थान देकर यों स्मरण किया है।

सीता राम गुण ग्राम पुण्यारण्य विहारिणौ ।
वंदे विशुद्ध विज्ञानौ कवीश्वर कपीश्वरौ ।।

कवीश्वर माने महर्षि वाल्मीकि है, कपीश्वर माने आंजनेय है । ये दोनों श्री सीता रामचन्द्रजी के गुण समूह रूपी पुण्यारण्यों में विहार करते हैं। विशुद्ध विज्ञान संपन्न हैं। ऐसे इन दोनों को नमस्कार करता हूं । फिर सुंदर कांड के आरंभ में –

सकलगुण निधानं वानराणामधीशम् ।
रघुपति प्रियभक्तंवातजातं नमामि ।।

सकल गुण संपन्न, वानरों के अधीश, रघुपति के प्रिय भक्त, पवनकुमार को नमस्कार करता हूं । तुलसी दासजी ने इसी से आंजनेय के गुणनिधित्व का स्मरण किया ।

आंजनेय साक्षात् शंकर जी के अवतार होने सें उन्हे समस्त सद्गुण संपन्न कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं । उनके सभी गुणों का वर्णनतो किया नहीं जा

सकता । फिर भी मानवजाति के लिये अनिवार्य रूप से अनुकरणीय और आचरणीय आंजनेय के गुणों में पांचगुण उल्लेखनीय हैं – वे इस प्रकार हैं –

1. स्वामि भक्ति या भगवद् भक्ति
2. अपूर्व त्याग
3. ज्ञान की परिपूर्णता
4. अहंभाव का त्याग
5. अद्भुत चातुर्य

1. स्वामि भक्ति या भगवत्भक्ति :

नव विध भक्ति पद्धतियों में दास्य भक्ति सातवीं है। उसके आचार्य श्री आंजनेय ही है। श्री राम जी की आज्ञा का पालन सर्वथासर्वदा करते रहना, सेवा करते रहना आंजनेय ने अपना परम धर्म समझा है। शैशव से ही उनमें श्री राम के प्रति अनन्य भक्ति है पर श्री रामचन्द्र जी के साथ उनका प्रत्यक्ष परिचय तब हुआ जब ॠष्यमूक पर्वत के समीप श्री रामजी सीता के विरह में व्याकुल थे । स्वामी और सेवक के प्रत्यक्ष मिलन का यही उपक्रम है। सुग्रीव मैत्री, बालिवध के बाद, सीतान्वेषण के लिए आंजनेय प्रधान व्यक्ति के रूप में चुने गये । आंजनेय ने समुद्र पारकर, लंका में सीता माता के दर्शन कर उन्हें श्री रामजी द्वारा दी गई मुद्रिका देकर, सीतामाता द्वारा दी गई चूडा मणि लेआकर श्री रामजी को समर्पित किया। श्री आंजनेय के बिना श्री रामजी का कोई भी कार्य नहीं हुआ । स्र्वत्र श्री रामचन्द्र जी के प्रति श्री आंजनेय की अनन्य भक्ति दिखाई दे रही है । इसी कारण श्री रामपंचायतन में श्री आंजनेय को विशिष्ट स्थानमिला है ।

2. **अपूर्व त्याग :** कोई भी लेखक अपने सर्वस्व को त्याग करने को तैयार होता है, पर अपनी रचनाओं में से एक अक्षर को भी त्यागने को तैयार नहीं होता । अक्षर ही उनकी आत्मा है । कितने ही महा पुरूष ज्ञानी, महर्षि इस त्याग को नहीं कर पाये पर श्री रामायण के एक प्रसंग में स्पष्ट किया गया है । आंजनेय ने इसे बडी आसानी से करके लोक में महान आदर्श को प्रस्तुत किया। सीता पहरण के अंनतर उदासीन एकांत में स्थित श्री राम को देखकर परितप्त

आंजनेय अपने स्वामी को सांत्वनादेने के बहाने समीपस्थ एक पर्वत पर बैठकर श्री राम कथा का संकीर्तन करने लगे। बाद को श्री राम के जन्म और शैशव की लीलाओं से लेकर सीतापहरण तक सभी घटनाओं को स्फटिक शिला फलकों पर अपने बज्रनखों से देववाणी में हनुमान ने लिखा । इस बात को समकालीन महर्षि वाल्मीकि अपनी दिव्य दृष्टि से मालूम करके श्री हनुमानजी के पास आये। आंजनेय ने महर्षि को अभिवादन कर अपनी रचनाको उनके समक्ष रखा । महर्षि देखकर उदासीन रहे । उनकी उदासीनता का कारण पूछने पर महर्षि इस प्रकार बोले, हे आंजनेय! तुम ने जो श्रेष्ठ रामचरित्र लिखा है उसका प्रचार जब इस लोक में होगा तब मेरी रामायण को कौन पढेगा । यही मेरी उदासीनता का कारण है । श्री आंजनेय ने मंदहास से महर्षि को देखकर – मुनिश्रेष्ठ! इतनी छोटी सी बात के लिए क्यों दुखी ही रहे हैं । आइये, कहकर अपने भुजस्कंधो पर एक तरफ महर्षि को बिठाकर और दूसरी तरफ श्री रामचरित के शिला फलको कों ढोते हुए समुद्रतट पर पहुंचे और बीच समुद्र में जाकर "श्रीरामार्पणमस्तु" कहते हुए सभी शिला फलकों को फेंक दिया । पश्चात्तापतप्त महर्षि को देख कर मुनिवर! यह सब मैने समय काटनेकेहेतु और श्री रामजी को प्रसन्न करने के हेतु लिखा है। इसमें मेरा अपना कोई उद्देश्य नहीं । आप निश्चिंत रहें ।

"येन केन प्रकारेण रामे बुद्धि निवेशयेत्" जिस किसी भी तरह से राम के प्रति मन लगाने की कामना के अतिरिक्त मेरा कोई प्रयोजन नहीं। महर्षि बहुत ही प्रसन्न होकर गद्‌गद् स्वर में आंजनेय से बोले – महावीर! श्री राम सेवा धुरंधर! तुम्हारा त्याग अमोघ है । तुम्हारी तृप्ति के लिए अपनी कृतज्ञता ज्ञापन हेतु मैं दूसरा जन्म लेकर तुलसी के नाम से तुम्हारे उपासक होकर इस महान नाटक रामायण के सहारे बहुजन हिताय स्वांतः सुखाय "रामचरितमानस" नामक अद्वितीय ग्रंथ की रचना करूंगा और आजीवन तुम्हारा आराधक बनकर रहूंगा । इस प्रकार बोलकर महर्षि अपने आश्रम को चले गये । यह श्री आंजनेय के अपूर्व त्याग की कहानी है ।

३. ज्ञान की परिपूर्णता :

आंजनेय जैसे अतुलितबल के धाम हैं वैसे ही ज्ञान के निधान हैं । सब से पहले श्री राम से जब परिचय हुआ तब श्रीराम ने लक्ष्मण से इनके ज्ञान के बार

में जो वर्णन किया है वह पहली चौपाई में वर्णित है । ये अध्यात्म शास्त्र के बहुत बड़े ज्ञानी है । कई रामायणों में ऐसा वर्णन आया है कि इन्हौंने महर्षियों को ब्रह्मज्ञान का उपदेश दिया था । उपदेश देने के अतिरिक्त उसे आचरण करके दिखाना इनका एक मात्र लक्ष्य रहा है ।

एक बार राजभवन में श्री रामजी आरामकर रहे थे तब उनके पास जाकर हनुमानजी ने अभिवादन किया तो विनोद के लिए श्री राम जी ने इस प्रकार प्रश्न किया –

"कस्त्वं! तुम कौन हो? झट से आंजनेय ने हाथ जोड़कर जवाब दिया –

देहबुध्यातु दासोहं
जीव बुध्यातु त्वदंशकः
आत्म बुध्या त्वमेवाहं
इतिमें निश्चिता मतिः

प्रभु! देह की दृष्टि से मैं आपका दास हूं । जीव की दृष्टि से मैं आप का अंश हूं । तत्व की दृष्टि से देखने पर आप ही मैं हूं मैं ही आप हैं । यही मेरा भाव है । ब्रह्मविद्या स्वरूपिणी श्री जानकी माता के कृपापात्र और ज्ञान स्वरूप सदाशिव के अवतार श्री आंजनेय ज्ञानिनां अग्रगण्य ही हैं ।

4. अहंभावरहित :

"**अभिमानं सुरापानं**" – महर्षियों ने गर्व को सुरापान से तुलना करके सर्वस्व को छोड़ देने को कहा । आंजनेय में नाममात्र के लिए भी गर्व नहीं । अहंकार रहित होना भक्तिमार्ग का भूषण है ।

"**भक्तानां दैन्य मेवोक्तं हरितोषणकारणम्**" भक्तों का दैन्य ही भगवान के संतोष का कारण है ।

लंका जलाकर लौट आये हनुमानजी की कई प्रकार से प्रशंसा कर श्री राम यों बोले–

"कहु कपि रावन पालित लंका ।
केहिबिधि दहेउ दुर्ग अति बंका ।।

– राम. च.मा. ५–३२–३३

हे कपिवर! रावण से रक्षित लंका और अत्यंत सुंदर दुर्ग को तुमने कैसे जलाया। तब हनुमानजी ने समझा कि उनके प्रभु श्री राम उनके द्वारा किये गये काम से प्रसन्न हुए हैं । वे अपने प्रताप की प्रशंसा कभी पसंद नहीं करते। इसी से इस प्रकार जवाब दिया –

सोसब तव प्रताप रघुराई ।
नाथ न कछू मोरि प्रभुता ई ।।

– रा.च.मा. ५–३२–५

हे रघुवीर ! तुम्हारे ही प्रताप से यह सब हुआ है । इस में मेरा बड़प्पन जरा भी नहीं ।

इससे श्री हनुमानजी की निरभिमानता, विनम्रता एवं एक सच्चे सेवक का लक्षण स्पष्ट हो रहा है ।

"इंद्रो z पि लघुतां याति स्वयं प्रख्यापितोर्गुणैः "

अपनी बड़ाई खुद अपने मुंह से कहने वाला चाहे भले ही इंद्र हो पर अत्यंत लघु हो जाता है। इस रहस्य से परिचित आंजनेय भले ही कितने ही महान हो पर अपनी महानता का कारण अपने आराध्य देव श्री राम की करूणा ही मानते हैं। इस बात को लोक को बताने वाले निगर्वी हैं, विनम्र हैं, कर्म योगी हैं । बिना फल की अपेक्षा के अपना कर्तव्य मानकर जो कार्य आरंभ किया, उसके अंत होने तक विश्राम न लेने वाले महावीर हैं। स्थित प्रज्ञ है। मन की सभी कामनाओं को छोड़कर निर्मल चित्त से निरंतर तारक मंत्र को अपने जीवन ज्योति के रूप में ग्रहण करने वाले और संतुष्टि पाने वाले स्वामी हैं । ऐसे कल्याणगुण शील श्री हनुमान जी को "गुनी" कहना सर्वथा सार्थक है ।

५ अद्भुत चातुर्य

श्री हनुमान जी के गुणों में यह अंतिम है । एक बार सीता देवी से हनुमान

की प्रशंसा करते हुए श्री राम ने इस प्रकार कहा– हे देवी ! अगर श्री मारुति की मदद न रहती तो मैं लंका को नहीं जीत पाता । मुझे सीता का वियोग सदा के लिये रह गया होता । तब देवी सीता ने कहा आर्यपुत्र ! आप श्री हनुमान जी की इतनी प्रशंसा कर रहे है, उनकी चतुरता के बारे में कोई एक प्रसंग बताइये – कहने पर श्री राम ने यह कहानी सुनाई –

जब युद्ध में रावण के अनुज, पुत्र, अन्य सभी योद्धा मरगये तब उसने चिंतित होकर विजय प्राप्ति के लिये चंडी माहायज्ञ करने का निश्चय किया । यज्ञ जैसे आरंभ हुआ वैसे ही श्री मारुति ब्राह्मण का वेष धारण करके यज्ञ में दीक्षित ब्राह्मणों की सेवा करने लगे । आंजनेय की सेवा से संतुष्ट ब्राह्मणों ने पूछा कि कोई वर मांग लो । किसी तरह उस यज्ञ को भंग करना है । इस कारण बडी चतुरता से वर मांगा कि ब्राह्मण जिस मंत्रके संपुट से हवन कर रहे थे उस मंत्र के एक अक्षर का रूपांतर करदे । साधु ब्राह्मणों ने " तथास्तु " कहा । इससे मंत्र के अर्थ में अंतर हुआ और उससे रावण को बहुत बडी हानि हुई । वह मंत्र –

जय त्वं देवि चामुंडे जय भूतार्ति हारिणि ।
जय सर्वगते देवि काल रात्रि नमोस्तुते ।।

इस श्लोक के "भूतार्ति हारिणी में जो "ह" उसके बदले "का" का उच्चारण मांगा गया । इस रूपांतर से " भूतार्ति हारिणी " प्राणियों के दुख दूर करने वाली है "भूतार्ति कारिणी " प्राणियों को पीडित करने वाली हुई ।

इस प्रकार वर्ण विपर्यय से रावण का सर्वनाश हुआ । यज्ञ की पूर्णाहुति के बाद रावण को जब यह समाचार मालूम हुआ तो उसने हनुमान जी की चतुरता की अपने दसों मुखों से प्रशंसा की । ऐसे चतुर शिरोमणि हनुमानजी की प्रशंसा सुनकर श्री सीता माता बहुत प्रसन्न हुई ।

रामकाज करिबेको आतुर – राम कार्य माने रामजी की सेवा करना है राम को सुख पहुंचाने का प्रयत्न करना । इस काम में बिना विलंब के मनसा – वाचा – कर्मणा, बल बुद्धि, विवेक योग्यता आदि सब को अपने इष्ट देव का ही

समझना, उनका उपयोग श्री राम की सेवा में लगाना ही अपना एक मात्र लक्ष्य मानने वाला विश्वास पात्र सेवक श्री हनुमानजी है । आत्म निवेदन के द्वारा " तत्सुखे सुखित्वं " याने भगवान के सुख को ही अपना सुख मानने वाले परम भागवतोत्तम आंजनेय स्वामी है ।

भगवान को श्रद्धापूर्वक सुख पहुंचाने वाले भाव को रति कहते हैं । यह चार प्रकार की है – १. दास्यरति, २. सख्यरति, ३. वात्सल्यरति, ४. माधुर्यरति। इन में आंजनेय की रति दास्य की है । वैष्णव संप्रदाय में दास्य रति भगवान की भक्ति का पहला सोपान है । इस में भक्त अपने शरीर, मन, बुद्धि, कार्य आदि सब कुछ भगवान की ही शक्ति से या प्रेरणा से हो रहे हैं – ऐसी भावना से निरभिमान होकर सेवा करता है। वह यह समझता है कि अपने स्वामी की सेवा करना अपना परम सौभाग्य है और अपनी सेवा को यदि प्रभु स्वीकार करेंगे तो जैसे वह कृतकृत्य हो गया है । ऐसे सच्चे भक्त –

सालोक्य सार्ष्टि सामीप्य सारूप्येकत्वमप्युत ।
दीयमानं नगृह्णंति विनामत्सेवनं जना : ।।

(श्रीमत्भागवत ३–२९–१३)

ऐसे भक्तों की एकमात्र यही अभिलाषा रहती है कि किस तरह से भगवान को संतुष्ट करना है । श्री हनुमानजी तो श्री रामजी के मनो भावों को शीघ्र ही समझकर संकल्प मात्र में ही उन्हे क्रियान्वित करने में दक्षथे ही । उदाः– श्री रामजी के लंका प्रवेश के पहले ही उनकी और उनकी सेना के रहने के सुरक्षित प्रदेश का प्रबंध कर दिया था ।

जब लक्ष्मण मूर्छित होगये तब हिमालय के समीप चंद्रगिरि और द्रोणगिरि के बीच में स्थित महोदयाद्रि से इंद्र से छिपाई गई ओषधि ले आने के लिए आंजनेय निकले । वहां के लोगों ने उस ओषधि को देने से इनकार किया । उनसे लडते रहने से व्यर्थ ही समय बीत जायगा – समझकर उस पर्वत को ही उखाड ले आये। इस प्रकार हिमालय से लंका तक पर्वत को ले आने में जो श्रम हो रह था, उसकी परवाह न करके अपने स्वामी के कार्य सुसंपन्न करने में आतुरता दिखाने वाले आंजनेय सच्चेअर्थ में रामदास हैं ।

चार प्रकार की इन रतियों में माधुर्य रति बहुत ही श्रेष्ठ मानी गयी है । माधुर्य रति स्त्री पुरूष या पतिपत्नी के संबंध को सूचित करती है । इन में स्वकीया माधुर्य रति याने पति पत्नी के भाव वाली है । माता पिता भाइयों और परिवार के सदस्यों को छोड़कर अपने पति को ही सर्वस्व समझना है। परकीया माधुर्य रति में विवाहित पत्नी के अलावा अन्य स्त्री के साथ संपर्क रखना यह तो लौकिक दृष्टि से दुराचार ही है पर आध्यात्मिक और भगवत् विषयक दृष्टि से इस की विशिष्टता है । इसमें अपने मनके लिये (अपनत्व) भाव नहीं। अपने इष्ट देव को सुख पहंचाने की कामना के सिवा अन्य कोई कामना नहीं रहती । इसी को परा भक्ति भी कहते हैं। हनुमान जी की दास्य रति उदात्त परकीया माधुर्य रति किसी भी स्थिति में कम नहीं। श्री हनुमान जी श्री राम की सेवा के लिये क्षुधार्त और तृषार्त की भांति जल्दबाजी करते रहते है । परकीया माधुर्य रति में "मैं" निज सुखेच्छा आंशिक रूप में यत्किंचित रहती है। कारण अपने प्रभु श्रीराम की सेवा करना और उन्हें सुख पहुंचाने के अलावा अन्य कामना रहित दास आंजनेय हैं।

– परकीया माधुर्य रति में नायिका को भोजन बास–वस्त्र और अन्य सुविधाओं को प्रदान करने की चिंता कहीं न कहीं अवश्य रहती है । लेकिन इन सब से उन्हे कोई संबंध नरहें । ऐसे विचार सेही हनुमान जी ने वानर रूप धारण किया । वानर को घर, वस्त्र, आहार, कीर्ति मान अपमान आदि से कोई मतलब नहीं। वह तो मात्र फल खाकर जीवन बिताने वाला जीव हैं। हनुमानजी की दास्य रति माधुर्य रति से कई गुना बढकर है । श्री हनुमानजी अपने प्रभु श्री राम जी की सेवा में सदा दत्तचित्त और सावधान रहते हैं । यहाँ तक कि श्री राम जी की जमुहाई का ख्याल रखते जागरूक रहते हैं। अपने प्रभु के मन के सूक्ष्माति सूक्ष्म भावों को भी समझते हुए तदनुरूप सेवा करने वाले धीशाली है। निरंतर भगवान का भजन करना भी एक प्रकार की सेवा ही है। भजन का अर्थ सेवा ही है। भगवान के भजन करने में विलंब करना किसी भी हालत में ठीक नहीं।

चौपाई–८

प्रभु चरित्र सुनिबे को रसिया ।
राम लषन सीता मन बसिया ।।

अर्थ : प्रभु चरित्र = श्रीराम चन्द्र की कथा ; सुनिबे को = सुनने में ; रसिया = अनुरागी हो; राम लषन सीता = सीता राम लक्ष्मण के ; मन = मन में ; बसिया = बसने वाले हो।

भाव : प्रभु श्रीराम के चरित्र को सुनने में तुम विशेष अनुरक्त हो और श्री सीताराम लक्ष्मण के मन में सदा तुम बसते हो।

व्याख्या : प्रभु चरित्र सुनिबे को रसिया :

श्रीराम के चरित्र को महर्षि वाल्मीकि, तुलसीदास जैसे महापुरुषों ने तप में, ध्यान में निमग्न होकर लोक कल्याण निमित्त लिखा है, अपने भारतीयों का यह पक्का विश्वास है कि पुण्य श्लोक का चरित्र कलिकल्मष को दूर करने वाला है।

चरितं रघुनाथस्य शतकोटि प्रविस्तरम् ।
एकैकमक्षरं प्रोक्तं महापातक नाशनम् ।।

श्रीरघुनाथ जी का चरित्र सौ करोड विस्तारवाला है और उसका एक –एक अक्षर भी मनुष्यों के महान पापों को नष्ट करने में समर्थ है । शाश्वतानंद चाहने वालों को श्रीराघुनाथजी के पावन चरित्र का अनुशीलन करना चाहिए। इस परम पुनीत श्रीराम के चरित्र का जहाँ – जहाँ संकीर्तन होता है वहाँ – वहाँ अव्यक्त रूप में, गुप्त रूप में श्रीपवन नंदन सिर पर अजंलि बांधकर आनंद बाष्प से भरे नेत्रों से विराजमान रहते हैं – ऐसे मारुति हनुमान का नमन करते हैं ।

यत्र यत्र रघुनाथ कीर्तनं । तत्र तत्र कृतमस्तकांजलिम् ।
बाष्पवारि परिपूर्ण लोचनं । मारुतिं नमत राक्षसांतकम् ।।

श्रीतुलसीदास जी को श्रीहनुमानजी के दर्शन श्रीराम की कथा सुनते समय हुए । वे रोज गंगा के उस पार निपटने के लिए जाया करते थे । लौटते समय लोटे मे बचेजल को एक पेड पर डाल दिया करते थे । उस पेड पर एक प्रेत रहता था । वह उस जल से तृप्त होकर एक दिन तुलसी दास के सामने प्रकट

होकर वर मांगने को कहा। तब तुलसीदास ने श्रीराम के दर्शन कराने की अभिलाषा प्रकट की । वह बोला – यहाँ से थोडी दूर पर जो राम मंदिर है वहाँ पर शाम को नित्य राम की कथा होती है । वहाँ कोढी के रूप में श्री हनुमान जी रोज कथा सुनने आते हैं । सबसे पहले आते हैं और सब के चले जाने के बाद जाते हैं । तुम उनको पकडो तो तुम्हारी कामना पूरी होगी । तुलसी ने वैसे ही करके श्रीपवननदंन की कृपा से श्रीराम के दर्शन कर लिए । इसी तरह अगर हम भी पवन नंदन को अपने घर बुलाना चाहते हैं तो श्रीराम की कथा का संकीर्तन करना चाहिए । वे गुप्त रूप में श्रोता के रूप में अवश्य आयेंगे ।

राम लषन सीता मन बसिया : सभी लोकों में देवता, ऋषि, मुनि आदि सब कोई श्रीसीताराम का ध्यान करते हुए उनको अपने–अपने हृदय मंदिर में बसाना चाहते हैं । वनवास के समय जब श्रीराम ने मुनि सुतीक्ष्ण का दर्शन किया और वर मांगने को कहने पर ऐसा ही वर मांगा – हे रघुनाथ! मुझे मालूम नहीं है कि क्या चाहिए। मेरी यही कामना है कि प्रभो राम! आप अपने छोटे भाई लक्ष्मण और जानकी के साथ हाथ में धनुष बाण लिए हुए मेरे हृदय में उसी प्रकार चमकते रहिए जैसे चन्द्रमा चमकता है ।

अनुज –जानकी –सहित प्रभु चाप –बान –धर राम ।
ममहिय – गगनइंदुइव, बसहु सदा निहकाम ॥

– रा.म.मा (अर.कांड – दो ११)

महर्षि शरभंगने भी यही प्रार्थनाकी –

सीता–अनुज–समेत प्रभु,नील –जलद–तनु–स्याम ।
ममहिय बसहु निरंतर, सगुन रूप श्रीराम ॥

– रा.म.मा (अर.कांड – दो ८)

– नीले बादल के समान श्याम शरीर वाले राम! सीता और भाई लक्ष्मण के साथ आप मेरे हृदय में इसी सगुण रूप से सदा निवास करते रहियेगा ।

इसी प्रकार योगी जन, महेश्वरादि देवता गण, श्रीराम को अपने हृदय में ध्यान करते रहते हैं । लेकिन यहाँ पर विशेषता यह है कि सीता एवं लक्ष्मण के हृदय में पवन नंदन सदा विराजमान रहते हैं । इस से बढकर श्री हनुमान जी के महत्व के बारे में क्या कहा जाय ।

चौपाई – ९

सूक्ष्म –रूप धरि सियहिं दिखावा ।

बिकट रूप धरि लंक जरावा ।।

अर्थ : सूक्ष्मरूप = सूक्ष्म शरीर को ; धरि = धारण करके ; सियहिं = सीता माता को, दिखावा = दिखलाई पडे हो; बिकट रूप धरि = भयंकर रूप धारण करके ; लंका = लंका नगर को ; जरावा = जला दिये हो ।

भाव : सूक्ष्म शरीर को धारण कर सीतामाता को दिखलाई पडे हो, बाद को भंयकर रूप धारण कर लंका नगर को जला दिये हो ।

व्याख्या : सूक्ष्म रूप धरि सियहि दिखावा; श्री हनुमान जी छोटे से छोटा और बडा से बडा रूप धारण करने में दक्ष हैं – सूक्ष्म रूप से लंका में घूमते हुए, अशोक वन में शिंशुपा वृक्ष के नीचे सूख कर काँटा बने शरीर से, मरने के लिए तैयार जानकी माता को देख कर पेड पर से ही – रामकथा का गान करने पर जानकी बोली – भाई! जो मेरे कानों को यह अमृत के समान सुहावनी प्यारी रामकथा सुना रहा है, वह सामने आजाय । सीता माता की ये बातें सुनकर पीले रंग वाले, लाल मुँह वाले हनुमान ने सूक्ष्म रूप से ही पेडपर से नीचे आकर सीता माता के चरण कमलों में अभिवादन किया । तब माताजी ने पवन सुत से श्रीराम और लक्ष्मण के कुशल समाचार सुन कर इस तरह प्रश्न किया कि राम और लक्ष्मण वानरों के साथ आकर रावण को कैसे जीतेंगे ?

हैं सुतकपि सब तुम्हहि समाना ।

जातुधान अति भट बल वाना । मोरे हृदय परम संदेहा ।

–रा.च.मा. ५–१५–३/४

हे पुत्र! सब वानर तुम्हारे ही समान छोटे –छोटे से होंगे और यहाँ पर लंका के राक्षस एक से एक बडे बलवान योद्धा हैं । यही देख कर मेरे मन में बडा संदेह हुआ जा रहा है ।

सुनि कपि प्रकट कीन्ह निज देहा ।
कनक भूधराकार सरीरा । समर भयंकर, अतिबल बीरा ।
सीता–मन भरोस तब भयऊ
पुनि लघु रूप पवन सुतलयऊ ॥

– रा.च.मा.५–१५–४/5

देवी के वचन सुनते ही हनुमान जी बढते–बढते ऐसे लंबे चौडे होकर खडे हो गये कि सुमेरू पर्वत के समान विशाल, बलशाली और वीर शरीर को यदि युद्ध क्षेत्र में शत्रु देख लें तो उनके हृदय भी भय से दहल उठे–ऐसे भंयकर रूप को दिखाया । उस रूप को देखने पर सीता माता को विश्वास हुआ कि श्रीरामचन्द्र जी बलवान वानरों की सहायता से राक्षसों से युद्ध कर सकेंगे । तब हनुमानजी नन्हें से बन बैठे ।

बिकट रूप धरि–जरावा : जब मेघनाद ब्रह्मास्त्र से हनुमान को बांध कर रावण के दरबार में ले गये तो वे उन्हें मारने को तैयार हुए तो विभीषण ने कहा – राजनीति के अनुसार दूत को नहीं मारना चाहिए । तब रावण ने कहा – बंदरों को पूँछ प्यारी होती है, इस कारण बंदर की पूँछ में आग लगा कर सारी लंका में घुमा दे। राक्षसों ने ऐसा ही किया । तुरंत हनुमान बहुत नन्हें से वन गये और सिकुड कर बंधन से मुक्त हुए । फिर से विशाल भयंकर रूप वाले बन गये।

देह बिशाल, परम हरूआई ।
मंदिर ते मंदिर चढ़धाई ॥

– रा.च.मा ५–२५–१

हनुमानजी की देह तो बहुत विशाल थी पर वे इतने हल्के हो गये कि आसानी से एक भवन से दूसरे भवन पर उछलते और कूदते चले जा रहे हैं । विकट, विकराल और भयंकर रूप धारण करके पवन पुत्र ने एक विभीषण घर के बिना सारी लंका जला डाली । सीता माता की प्रार्थना सुनकर अग्निदेवने अपने प्रिय मित्र वायु देव के पुत्र आंजनेय की पूँछ को जलने नहीं दिया । हनुमानजी के उस भयंकर रूप को देख राक्षस भयभीत होकर इधर–उधर भागने लगे ।

चौपाई–१०

भीम रूप धरि असुर सँहारे ।
रामचन्द्र के काज सँवारे ॥

अर्थ : भीमरूप = भयंकर रूप ; धरि = धारण करके; असुर = राक्षसों को; सँहारे = मार डाले हो; रामचन्द्र के = श्रीरामचन्द्र के ; काज सवाँरे = काम संभाले हो ।

भाव : भयंकर रूप धारण करके लंका नगर के राक्षसों को मार करके श्रीरामचन्द्रजी के कामों को सुसंपन्न किये हो ।

व्याख्याः भीम रूप धरि असुर सँहारे : सत्व गुण से और शांत स्वभाव से राक्षसों का विनाश असंभव समझ कर आंजनेय ने अपने साथ लडने आये सभी राक्षसों का वध कर डाला है। युद्ध के समय जब वे रावण से लडते थे तब उनके रौद्र रूप का वर्णन इस प्रकार किया गया है –

महाशैलं समुत्पाट्य – धावंतं रावणं प्रति ।
लाक्षारसारूणं रौद्रं कालान्तक यमोपमम्
ज्वलदग्नि समं रूपं – कोटि सूर्य समप्रभम् ।
तिष्ठ तिष्ठ रणे दुष्ट – गर्जतं मेघ निस्वनम् ।
क्लेशदं घोर रूपेण – राक्षसान् मारूतिं स्मरेत् ॥

– (नारद पुराण)

बडे–बडे पर्वतों को उखाड कर रावण को मारने दौडते हुए लाख के रस के सदृश अरूण वर्ण वाले, कालांतक यम के सदृश रौद्र रूप वाले तथा अग्नि के सदृश जिन के जाज्वल्यमान नेत्र हैं, करोडों सूर्यों के सदृश प्रभावाले रूद्ररूपी हनुमान जी अगंद आदि अनेक वीरों से घेरे हुए हैं । ऐसे मारूती का स्मरण करने मात्र से सभी उपद्रव शांत हो जाते हैं ।

यह रौद्र रूप मात्र दुष्टों के विनाश के लिए ही है । अपने भक्तों के लिए आंजनेय बहुत ही कोमल, हृदय से उदार और स्वरूप से शांत ही रहते हैं ।

रामचन्द्र के काज सँवारे :– समस्त जगत के आधारभूत श्रीरामचन्द्र ही हैं। सब लोगों के कामों को संभालनेवाले वेहीं। ऐसे श्री रामचन्द्र जी के कामों को भी महात्मा आंजनेय ने सुसंपन्न किया है । रावण का वध एक मात्र मानव के हाथ से निश्चित होने के कारण राम ने अपने ईश्वरत्व को कहीं भी प्रकट नहीं होने दिया और एक साधारण मानव के समान ही आचरण किया ।

रावण मरन मनुजकर यांचा ।
प्रभु विधि वचन कीन्हि चह साँचा ।।

रावण ने अपनी मृत्यु मानव के हाथ से होने का वर ब्रह्माजी से माँगा तो ब्रह्माजी ने "तथास्तु" कह दिया । श्री राम ने ब्रह्माजी के वचन को मान कर मानव रूप में रावण का वध किया । यह सत्य ही है । इस प्रकार नागपाश से बंधा जाना, लक्ष्मण मूर्छित होने पर विलाप करना, समुद्र पर सेतु का निर्माण और युद्ध के समय दूसरों की मदद लेना जैसे मानव सदृश कार्य श्री राम करते रहे । आंजनेय ने ही श्रीराम से किये जाने वाले हर एक काम में आगे रहकर अपनी वीरता दिखाई । असंभव को संभव और असाध्य को सुसाध्य बना कर दिखाया । समुद्र को लांघ जाना, राक्षस सेना को मारना, लंका दहन, संजीवनी ओषधिस्थित पर्वत को उखाड लेआना इत्यादि् अद्भुत कार्यों को सुसंपन्न करके श्री राम के कामों को सुगम बनाया । आज राम भक्तों को संकट आने पर वे ही खुद दौडे आते हैं और भक्तों की हर तरह से रक्षा करते हैं । जिस से अपने प्रभु को जरा भी श्रम न होने पाये। इस प्रकार राम के भक्तों की कामनाओं को पूरा करना भी अपने प्रभु के कामों को संभालने का दृष्टांत है ।

चौपाई–११

लाय सजीवन लखन जियाये ।
श्रीरघुवीर हरषि उर लाये ॥

अर्थ : सजीवन या संजीवन = जिला ने वाली ओषधि संजीवनी; लाय = लेआकर, लखन = श्रीलक्ष्मण को; जियाये = जिलाये है ; (तब) श्री रघुवीर = श्री रामचन्द्र जी; हरषि = संतुष्ट होकर (तुझे) उरलाये = छाती से लगा लिये ।

भाव : प्राण–शक्ति देने वाली, संजीवनी ओषधि ले आकर, श्रीलक्ष्मण को जिलाने से श्री रामचन्द्रजी संतुष्ट होकर तुम्हें अपनी छाती से लगा लिये ।

व्याख्या : लाय सजीवन लखन–जियाये : लक्ष्मण जी साक्षात् आदिशेष के अवतार ही हैं, उन्हें कोई नहीं मार सकता, किन्तु ब्रह्माजी के वरादान का आदर करने हेतु वे ब्रह्माजी की शक्ति के सामने झुक गये । ब्रह्मा जी का वर यह है कि शक्ति नामक अस्त्र का प्रयोग जिस पर किया जायेगा वह जरूर मर जायेगा । इस कारण राम –रावण के युद्ध में श्री लक्ष्मण उस अस्त्र के वशमें होकर मूर्छित हुए, आंजनेय के द्वारा लेआई गयी संजीवनी से फिर से जी उठने से = मृत व्यक्ति को जिलाने वाली उस संजीवनी का वरदान भी लोक को विदित कराया गया। इस प्रकार दोनों वर सत्य साबित हुए। लक्ष्मण को जिलाने से आंजनेय लक्ष्मण प्राणदाता के रूप में प्रशंसित हो रहे हैं । यह नाम श्री आंजनेय के द्वादश नामों में ग्यारहवाँ है । वे द्वादश नाम इस प्रकार है–

हनुमान् अजंनीसूनुः वायुपुत्रो महाबल :
रामेष्टः फाल्गुन सखः पिंगाक्षो z मित विक्रमः
उदधि क्रमणश्चैव सीता शोक विनाशनः
लक्ष्मण प्राणदाताच दशग्रीवस्य दर्पहा ।
एवंद्वादश नामानि कपींद्रस्य महात्मनः
स्वापकाले प्रबोधेच यात्राकाले च यः पठेत्

तस्य सर्व भयंनास्ति रणेचविजयी भवेत्

राजद्वारे गह्वरेच भयं नास्ति कदाचन ।।

– आनंद रामायण–मनो–कांड–सर्ग १३–२–११

हनुमानजी के इन बारह नामों को सोते समय, यात्रा के समय पढ़ने से मृत्यु का भय नहीं होता । सर्वत्र विजय मिलती है । राजद्वार में , गुफ़ा के द्वार में , (जहाँ जंगल की गुफ़ाओं में सिंह रहते हैं) कभी भय नहीं होगा ।

दसवीं चौपाई में जो रामचन्द्र के काज सँवारे "आया है उसका प्रमाण लाय संजीवन लखन जियाये है । लक्ष्मण जी को जिलाने से राम का काम सुलभ हुआ है । अन्यथा राम का काम निर्विघ्न रूप से संपन्न नहीं हुआ होता । आखिर यह राम का कार्य क्या है? तुलसीदासजी ने राम के कार्य के बारे में रामचरित मानस में इस प्रकार कहा है –

1. विप्र धेनु सुर संतहित लीन्हि मनुज अवतार ।
2. पालन सुर धरनी अद्भुत करनी मरम न जानै कोई ।
3. जय विप्र धेनु हित कारी ।
4. भगत भूमि भूसुर सुरभि सुरहित लागि कृपाल ।
5. नरतन धरेउ संत सुर काज ।

विप्र, गौ, देवता, साधु, पृथ्वी, भक्तों आदि के कष्टों को दूर करना ही राम का कार्य है । अगर यह काम होना है तो रावण का संहार होना ही चाहिए । रावण का संहार श्रीराम से ही होगा। इस कारण राम के सुरक्षित रहने की आवश्यकता हैष उनको सुरक्षित रहना है तो लक्ष्मण को जीवित रहना होगा । लक्ष्मण के प्रति राम का प्रेम अनुपम है । वाल्मीकि रामायण में कई स्थलों पर यह दिखाई देता है। मेहनाद से प्रयुक्त नाग बाण से जब लक्ष्मण मूर्छित हुए तो उनको मरा हुआ समझकर दुखी होकर श्रीराम इस प्रकार बोले –

किंनु मे सीतया कार्यं किंकार्यं जीविते न वा ।

शयानं यो z द्य पश्यामि भ्रातरं युधि निर्जितम् ।।

हाय ! यदि सीता मिल भी गई तो मैं उन्हें लेकर क्या करूँगा ? अथवा इस जीवन को रखकर क्या करना है ? जब कि आज मैं अपने पराजित हुए भाई को युद्ध स्थल में पडा हुआ देख रहा हूँ ।

शक्या सीता समा नारी मर्त्य लोके विचिन्वता ।
न लक्ष्मण समो भ्राता सचिवः सांपरायिकः ।।

– वाल्मीकि रामायण ६–४९–६

"मर्त्य लोक में ढूंढने पर मुझे सीता जैसी दूसरी स्त्री मिल सकती है पर लक्ष्मण के समान सहायक और युद्ध कुशल भाई नहीं मिल सकता ।

परित्यज्याम्यहं प्राणान् वानराणांतु पश्यताम् ।
यदिपंचत्वमापन्न : सुमित्रानंद वर्धनः ।।

– वा. रा. ६–४९–७

सुमित्रा के आनंद को बढाने वाले लक्ष्मण यादि जीवित न रहे तो मैं वानरों के देखते–देखते अपने प्राणों का परित्याग कर दूँगा।

यथैवमां वनं यान्तमनुयातो महाद्द्युति : ।
अहमप्यनुयास्यामि तथैवेनं यमक्षयम् ।।

– वा.रा. ६–४९–१७

जिस तरह वन की यात्रा करते समय महा तेजस्वी लक्ष्मण मेरे पीछे–पीछे चले आये थे उसी प्रकार मैं भी परलोक में उनका अनुसरण करूँगा ।

नहिमें जीवितेनार्थ : सीतया चापि लक्ष्मण ।
को हि मे विजयेनार्थ : त्वयि पंचत्वमागते ।।

– वा.रा.६–१०१–४९

हे लक्ष्मण ! तुम्हारे बिना मुझे जीवन की रक्षा से, सीता से या विजय से भी कोई मतलब नहीं है । जब तुम्ही न रहोगे, तब मैं इस जीवन को रखकर क्या करूँगा?

राम और लक्ष्मण के न रहने पर भरत आदि परिवार के लोग नहीं जियेंगे। बिना राम के रावण का वध संभव नहीं । बिना रावण वध के राम का काम नहीं होगा । हनुमान जी के द्वारा संजीवनी को ले आने से सुषेण के द्वारा उस ओषधि से लक्ष्मण को जिलाने से जो काम बिगड़ा जा रहा था वह बन गया है । रामकार्य के निर्विघ्न रूप से सँपन्न होने में आंजनेय प्रधान पात्र बन गये । तदर्थ कृतज्ञता ज्ञापन करते हैं।

श्रीरघुवीर हरषि उरलाये – श्री राम ने आंजनेय को सहर्ष छाती से लगा लिया ।

प्रभु प्रलाप सुनिकान बिकल भए बानर निकर ।
आइ गयउ हनुमान, जिमि करुना महँ बीर रस ।।

– रा.च.मा. ६/६१

(लीला के रूप में) विलाप करते हुए श्री राम को देख कर वानर भी व्याकुल हुए। (इतने में) आंजनेय संजीवनी पर्वत को लेकर (करुण रस में वीररस अंतर्भूत) आकर लक्ष्मण को पुनर्जीवित किया ।

हरषि राम भेंटेउ हनुमाना ।
अतिकृतज्ञ प्रभु परम सुजाना ।।

– रा.च.मा. ६/६१/१

स्वयं ही चतुर और महावीर श्रीराम ने हनुमान की वीरता से प्रसन्न होकर कृतज्ञता पूर्वक उनको छाती से लगा लिया ।

चौपाई–१ २

रघुपति कीन्ही बहुत बड़ाई ।
तुम मम प्रिय भरतहि सम भाई ॥

अर्थ : रघुपति = रघुवंश के राजा रामचंद्र ने (तुम्हे) बहुत = बहुत ही, बडाई कीन्ही = प्रशंसा की । भाई– हे भाई । तुम = तुम (मुझे) भरत = भरत के; समान = समान, प्रिय=प्रिय हो (बोले)

भाव : श्री रामचन्द्र जी बोले = तुम्हारी बहुत बड़ी प्रशंसा सुनकर भाई । तुम मुझे भरत के समान प्रिय हो।

व्याख्या : रघुपति कीन्ही बहुत बड़ाई = भाव यह है कि श्री रामचंद्र जी ने आंजनेय की अपने से बहुत बड़ा कहकर प्रशंसा की और कहा – वे सदा श्री हनुमान के ऋणी बने रहेंगे । अगर ऋणी बनकर न रहते तो हनुमान का प्रत्युपकार करना चाहने का अर्थ होगा, उनके लिये विपत्ति का मांगना ही है । कारण संकट के समय जिसने सहायता की हो उसका प्रत्युपकार करने के लिये सोचना, विपत्ति चाहने के समान ही होगा । ऐसा सोचना ठीक नहीं।

"यस्तु प्रत्युपकारर्थी विपत्ति मभिकांक्षति"

उपकारी को प्रत्युपकार करना चाहनेवाला यही सोचता है कि उपकारी को संकट आने पर, दुःख आने पर मदद करे । इसी प्रकार रामने सोचा कि आंजनेय का प्रत्युपकार करना चाहना शाप ही देना होगा । इसी से आंजनेय के सदा ऋणी बनकर, रहने और उन्हे कभी किसी संकट का सामना करना न पड़े – ऐसा सोचकर उन्हे अपने से बड़ा मानकर प्रशंसा की।

तुम मम प्रिय भरत हि सम भाई – अब श्रीराम यह कह रहे हैं कि आंजनेय के प्रति उन्हें कितना प्रेम है। उनके प्रिय जनों मे भरत सबसे बढ़कर है। इसी से श्री राम सदा भरत का स्मरण करते रहते हैं।

भरत सरिस को रामसनेहि जग जपु राम राम जपु जेह्नी ।
देखि सराहत सिद्ध सुर हनुमान की प्रीति
जिनहि राम सुमिरन सतत धन्य प्रभुकी नीति ।
(हनुमान चालीसा भाष्य पृ ३४) श्री जयराम देव महाराज...)

जैसे भरत को गलेलगाये वैसे ही आंजनेय को गले लगा कर यह प्रमाणित किया कि आंजनेय के प्रति भी भरत के समान ही उन्हें घनिष्ट प्रेम है ।

रामायण में भरत का चरित्र बहुत ही महत्व पूर्ण है । रामायण में तीन राज्यों के शासक अपना शासन खो जाते हैं । वे हैं अयोध्या, किष्किंधा, लंका। विस्मय की बात यह है कि अग्रज के राज्य खो लेने पर अनुज को राज्य मिलजाता है। अयोध्या के संदर्भ में वह अनुज को मिलने पर उसे स्वीकार न करके भाई की पादुकाओ को सिंहासन पर रखकर शासन करते हैं । रावण के वध के अनंतर श्रीराम के अयोध्या आते ही राज्य के भार को उन्हें सौंपकर भरत इस प्रकार बोले –

"अद्य जन्म कृतार्थं मे संवृतश्च मनोरथः ।।
वा. रा. ६–१२७–५६

आज मेरा जन्म सफल हुआ है । इस समय मेरा मनोरथ पूरा हुआ है । विभीषण और सुग्रीव दोनों को श्रीराम के प्रति अत्यंत भक्ति भाव है फिर भी वे अपने राज्य की आकांक्षा छोड़ नहीं पाये । लेकिन भरत अपने लिये प्राप्त राज्य को त्याग देते है । प्रश्न यह उठता है कि भरत लक्ष्मण से कैसे श्रेष्ठ है ! सचमुच भरत श्रेष्ठ ही है । भरत की जगह लक्ष्मण रहते, श्री राम लक्ष्मण से अयोध्या का राज्य भार स्वीकार करने का आदेश देते तो चुपचाप उनके आदेश का पालन करते। लेकिन भरत ऐसे नहीं । अपने को जो अच्छा लगता उसे भाई से कहकर मनवाते है– और भाई के प्रति जो अनुराग है उसे प्रकट किया ।

भरत बहुत बड़े धीर है और लगन वाले हैं । राम के प्रति उन्हें अत्यंत स्नेह है । इसी से आंजनेय के प्रति अपने प्रेम को प्रकट करते समय श्रीराम ने

भरत के समान बताया है । इससे स्पष्ट होता है कि श्री राम के हृदय में भरत के लिए सबसे श्रेष्ठ स्थान है ।

यहाँ एक शंका है – श्री राम मानव जाति के हैं और हनुमान वानर जाति के हैं। श्री राम के भाई भरत के समान हनुमान को स्थान देना कहां तक समीचीन है।

इस का समाधान श्री गिरधर रामायण (गुजराती भाषा) में एक कथा के रूप में है । इस कथा से स्पष्ट होता है कि "भरत हि समभाई" यह उक्ति सचमुच हनुमान के प्रति सही बैठती है । इसका सारांश इस प्रकार है जिस यज्ञ की खीर के हिस्से से भरत का जन्म हुआ । उसके शेष हिस्से से हनुमान का जन्म हुआ।

महर्षि वशिष्ठ के आदेश से महाराज दशरथ ने पुत्रकामेष्टि यज्ञ किया । उस यज्ञ में से साक्षात् अग्निदेव चरूक्षीरका पात्र लेकर प्रकट होकर रानियों को बांटने को कहा । उसके तीन भाग किये गये। एक सबसे बड़ा भाग, और दो छोटे भाग किये । उन तीनों 'भागो' को क्रम से कौशल्या, कैकेयी और सुमित्रा में वितरित किया गया । अपने को छोटा भाग मिला समझ कर कैकेयी कुपित हुई और रोने लगी । उसी समय आकाश में से उड़ती हुई चील आगयी और कैकयी के हाथ पर रखे उस चरूको चोंच में लेकर उड़ गयी । तब महर्षि वशिष्ठ और महाराज दशरथ के संकेत से कौशल्या और सुमित्रा ने अपने चरू का चौथा भाग कैकयी को दिया तो तीनों नारियों ने चरु का भक्षण किया।

अब जो चील कैकेयी के हाथसे जिस चरूको लेगयो थी , उस की कथा भी सुनिये । वानर राज केसरी अपनी पत्नी अंजना के साथ किन्नरों के लोक में सुमेरू पर्वत पर आश्रम बनाकर रहा करते थे । अंजना ने पुत्र प्राप्ति केलिये सात हजार साल तक शिवजी की आराधना की । शिवजी ने प्रसन्न होकर उससे वर मांगने को कहा । अंजना ने कहा –प्रभो ! मुझे एक सर्वगुण संपन्न पुत्र दीजिए । शिव जी ने एकादश रूद्रों में से जो मेरा अंश ग्यारहवाँ रूद्र है वही तुम्हारे यहाँ पुत्र रूप में उत्पन्न होगा । तुम इस मंत्र को जपो। वायुदेव तुम्हें प्रसाद देंगे । उस प्रसाद सेही तुम्हारा पुत्र होगा । इतना कह शिवजी चलेगये। अंजना हाथ पसारे मंत्र का जप करने लगी । उधर वह चील कैकेयी के हाथ से चरु लेकर आकाश में उड़ी । बड़े

जोर की आंधी आयी । बहुत बीभत्स वायु चलने लगी । चील सिकुड़ ने लगा उसकी चोंच से वह चरूगिर पड़ा । वायुदेव तो पहले से ही अंजना पर मुग्ध थे। उन्हों ने वह चरू अंजना के हाथ में गिरा दिया। शिवजी पहले ही कह गये थे । जप के प्रभाव से वह चरूवायु के द्वारा प्राप्त होते ही भगवती अंजना उसे खा गयी। उसी के द्वारा श्री हनुमान जी का जन्म हुआ । इस प्रकार आंजनेय श्रीराम और भरत के यज्ञ प्रसाद के भाग से जन्म लेने से "भरत हि सम भाई" कहना युक्ति संगत ही दीखता है । कैकेयी के हाथ से यज्ञ प्रसाद उड़ा कर लेआने वाली चील पूर्व जन्म में सुवर्चला नाम की अप्सरा थी । ब्रह्म लोक में नृत्य करते समय चंचलता के कारण उसके मन में कामवासना जागृत हो गयी । ब्रह्माजी ने शाप दिया – जा मर्त्य लोक में तूचील हो जा । प्रार्थना करने पर ब्रह्माजी ने कहा– दशरथ के यज्ञ चरूके स्पर्श से चील का शरीर छूट जायेगा । फिर से देवांगना होगी, उसी प्रकार वह पुनः ब्रह्मलोक में सुवर्चला नामक देवांगना होकर पहुंच गयी ।

छप्पय

एकादश जो रुद्र राम कारज अवतारा ।
मातु अज्जना रहीं केशरी कपि की दारा ॥
चील शंभु वर खीर कैकेयी कर ते लाई ।
वायु अंजना दई मुदित मन तिनने खाई ॥
पवन केशरी शम्भु, सुत अज्जनि नन्दन वीर वर ।
बन्दौं तिनि युग पद पदम, जो भव–भय–दुख शोक हर ॥

(संत श्रीप्रभुदत्त ब्रह्मचारी कृत महावीर हनुमान से उद्धृत)

चौपाई-१ ३

सहस बदन तुम्हरो जस गावै ।

अस कहि श्रीपति कंठ लगावै ॥

अर्थ : सहस = हजारों ; बदन = मुंहसे, तुम्हरों =तुम्हारी ; जस = कीर्ति (आगे सबलोग) गावै = गाकर (तर जायेंगे) अस कहि = इस प्रकार कहकर, श्रीपिति= श्री राम ने , कंठ लगावै = गले लगाये ।

दूसरे प्रकार से

सहस्त्रबदन या सहस्त्रवदन का अर्थ हजार मुंह वाले विराट पुरूष से भी हो सकता है।

भाव : संजीवनी ओषधि ले आकर मूर्छित लक्ष्मण को जब हनुमानजी ने बचाया तब श्री राम ने आशीर्वाद दिया कि भविष्य में तुम्हारी कीर्ति हजारों मुंह से गाकर लोग तर जायंगे । ऐसा कहकर उन्हे गले लगाये ।

व्याख्याः सहस वदन-गावैः सहस्र शीर्ष, सहस्त्राक्ष, सहस्र मुख, सहस्त्र पाद आदि नाम विराट पुरूष के पर्याय शब्द है। संजीवनी लेआकर लक्ष्मण जी को बचा कर श्री राम के कार्य को जिस आंजनेय ने सुसंपन्न किया, उनके असाधारण और अलौकिक कार्य को विराट पुरुष अपने हजारों मुंहों से भले ही प्रशंसा करें, तब भी पूर्ण रूप से नहीं करसके थे । भाव यह है कि अनवरत उस प्रशंसा का संकीर्तन होता रहेगा। उस गुणगान का अंत ही नहीं होगा । वह काम उतना महत्वपूर्ण है।

अस कहिश्रीपति कंठ लगावै : - भाव यह है कि इस प्रकार बोलकर श्री राम ने उस कीर्ति चरित्र को कंठस्थ कर लिये । जैसे किसीश्लोक, किसी गीत को पाठ करके हम कंठस्थ कर लेते हैं वैसी ही श्री राम ने आंजनेय के इस विलक्षण और अलौकिक चरित्र को कंठ में धारण कर लिये और स्वयं उनका गान सदा करते रहेंगे ।

चौपाई–१४

सनकादिक ब्रह्मादि मुनीसा ।
नारद सारद सहित अहीसा ।।

अर्थ : सनकादिक = सनक सनंदन आदि चारों महर्षि, ब्रह्मादि = ब्रह्मादि देवता, मुनीसा = मुनीश्वर, नारद = महर्षि नारद, सारद = सरस्वती, सहित = केसाथ अहीसा = आदिशेष, (अहि = सांपको, ईसा = ईश या पति)

भाव : सनकादिक महर्षि, ब्रह्मादि देवता, मुनीश्वर, नारद, सरस्वती और आदिशेष आदि भी आंजनेय की महिमा का वर्णन नहीं कर सकते। राम रहस्योपनिषद में इस प्रकार कहा गया है

सनकाद्या योगिवर्या अन्ये च ऋृषयस्तथा ।
प्रह्लादाद्या विष्णु भक्ता हनुमन्त मथाब्रुवन् ।।

एक समय सनक सनंदादि योगीवृंद, अन्य महर्षि गण, प्रह्लादादि विष्णु भक्त हनुमान जी के समीप जाकर तत्वज्ञान के बारे में प्रश्न किया ।

वायु पुत्र महा बाहो ! किंतत्वं ब्रह्म–वादिनाम्

– हे वायुपुत्र, महाबाहू, ब्रह्मादि देवताओं के लिये कौन सा तत्व (ज्ञान) श्रेष्ठ है।

इस से स्पष्ट होता है कि हनुमानजी का महत्व और ज्ञान इनसबसे बढ़कर है।

सनकादिक ब्रह्मादि मुनीसा – ब्रह्मादि देवता और मुनीश्वर आंजनेय का यशोगान करते रहते हैं । अगस्त्य संहिता में यह बात लिखी है कि ब्रह्माजी ने एकादश हनुमत्त्कवच को अगत्स्य को सुनाया है । आदि महर्षि लोमश ने लोमश सहिंता में और वेदब्यास ने हनुमान जी के यश को गाया । वैसे ब्रह्माजी समस्त चराचर के सृष्टिकर्ता हैं। त्रिमूर्त्यांश से उत्पन्न श्री हनुमान जी की सृष्टि ब्रह्माजी की सृष्टि से बढ़कर है। ब्रह्माजी भी हनुमानजी के यश को नहीं गासकते ।

चौपाई–१ ३

सहस बदन तुम्हरो जस गावै ।
अस कहि श्रीपति कंठ लगावै ॥

अर्थ : सहस = हजारों ; बदन = मुंहसे, तुम्हरों =तुम्हारी ; जस = कीर्ति (आगे सबलोग) गावै = गाकर (तर जायेंगे) अस कहि = इस प्रकार कहकर, श्रीपिति= श्री राम ने , कंठ लगावै = गले लगाये ।

दूसरे प्रकार से

सहस्त्रबदन या सहस्त्रवदन का अर्थ हजार मुंह वाले विराट पुरूष से भी हो सकता है।

भाव : संजीवनी ओषधि ले आकर मूर्छित लक्ष्मण को जब हनुमानजी ने बचाया तब श्री राम ने आशीर्वाद दिया कि भविष्य में तुम्हारी कीर्ति हजारों मुंह से गाकर लोग तर जायंगे । ऐसा कहकर उन्हे गले लगाये ।

व्याख्याः सहस वदन–गावैः सहस्र शीर्ष, सहस्त्राक्ष, सहस्र मुख, सहस्त्र पाद आदि नाम विराट पुरूष के पर्याय शब्द है। संजीवनी लेआकर लक्ष्मण जी को बचा कर श्री राम के कार्य को जिस आंजनेय ने सुसंपन्न किया, उनके असाधारण और अलौकिक कार्य को विराट पुरूष अपने हजारों मुंहों से भले ही प्रशंसा करें, तब भी पूर्ण रूप से नहीं करसके थे । भाव यह है कि अनवरत उस प्रशंसा का संकीर्तन होता रहेगा। उस गुणगान का अंत ही नहीं होगा । वह काम उतना महत्वपूर्ण है।

अस कहिश्रीपति कंठ लगावै : – भाव यह है कि इस प्रकार बोलकर श्री राम ने उस कीर्ति चरित्र को कंठस्थ कर लिये । जैसे किसीश्लोक, किसी गीत को पाठ करके हम कंठस्थ कर लेते हैं वैसी ही श्री राम ने आंजनेय के इस विलक्षण और अलौकिक चरित्र को कंठ में धारण कर लिये और स्वयं उनका गान सदा करते रहेंगे ।

चौपाई – १४

सनकादिक ब्रह्मादि मुनीसा ।

नारद सारद सहित अहीसा ॥

अर्थ : सनकादिक = सनक सनंदन आदि चारों महर्षि, ब्रह्मादि = ब्रह्मादि देवता, मुनीसा = मुनीश्वर, नारद = महर्षि नारद, सारद = सरस्वती, सहित = केसाथ अहीसा = आदिशेष, (अहि = सांपको, ईसा = ईश या पति)

भाव : सनकादिक महर्षि, ब्रह्मादि देवता, मुनीश्वर, नारद, सरस्वती और आदिशेष आदि भी आंजनेय की महिमा का वर्णन नहीं कर सकते। राम रहस्योपनिषद में इस प्रकार कहा गया है

सनकाद्या योगिवर्या अन्ये च ऋृषयस्तथा ।

प्रह्लादाद्या विष्णु भक्ता हनुमन्त मथाब्रुवन् ॥

एक समय सनक सनंदादि योगीवृंद, अन्य महर्षि गण, प्रह्लादादि विष्णु भक्त हनुमान जी के समीप जाकर तत्वज्ञान के बारे में प्रश्न किया ।

वायु पुत्र महा बाहो ! किंतत्वं ब्रह्म–वादिनाम्

– हे वायुपुत्र, महाबाहू, ब्रह्मादि देवताओं के लिये कौन सा तत्व (ज्ञान) श्रेष्ठ है।

इस से स्पष्ट होता है कि हनुमानजी का महत्व और ज्ञान इनसबसे बढ़कर है।

सनकादिक ब्रह्मादि मुनीसा – ब्रह्मादि देवता और मुनीश्वर आंजनेय का यशोगान करते रहते हैं । अगस्त्य संहिता में यह बात लिखी है कि ब्रह्माजी ने एकादश हनुमत्त्कवच को अगत्स्य को सुनाया है । आदि महर्षि लोमश ने लोमश सहिंता में और वेदब्यास ने हनुमान जी के यश को गाया । वैसे ब्रह्माजी समस्त चराचर के सृष्टिकर्ता हैं। त्रिमूर्त्यांश से उत्पन्न श्री हनुमान जी की सृष्टि ब्रह्माजी की सृष्टि से बढ़कर है। ब्रह्माजी भी हनुमानजी के यश को नहीं गासकते ।

पराशर संहिता के सप्तम पटल में वर्णन आया है कि मात्र हनुमान जी की पूजा करने से समस्त देवता ओं की पूजा हो जाती है –

आंजनेयः पूजितश्चेत्पूजिता स्सर्व देवताः ।

हनुमन्महिमा z शक्यो ब्रह्मणापि न वर्णितुम् ।।

नारद सारद सहीत अहीसा : महर्षि नारद ने नारद पुराण में और पंचरात्र ग्रंथ में श्री हनुमान जी की महिमा का गुण गान किया । श्री सरस्वती भी हनुमानजी की कीर्ति सदा गाती रहती है। इसी प्रकार आदि शेष भी सदा आंजनेय के यश को गाते रहते हैं, फिर भी इन सबको तृप्ति नही मिलती । (ये कभी अघाते नहीं)

चौपाई–१५

जम कुबेर दिगपाल जहां ते ।
कबि कोबिद कहि सके कहां ते ॥

अर्थ : जम = यमधर्मराज, कुबेर = कुबेर, दिगपाल = दिशा ओं के पालक, ते = तुह्मारी (महिमा का वर्णन नहीं कर सकते) जहां = भूलोक में, कबि = कवि कोबिद = पंडित, ते = तुम्हारी, कहां = कैसे, किस प्रकार, कहि सकै = (तुम्हारी महिमा का) वर्णन नहीं कर सकतें।

भाव : श्री हनुमानजी की महिमा का वर्णन जब यम, कुबेर, दिशाओं के पालक नहीं कर सकते तब भूलोक के कवियों और पंडितों के लिये कैसे सुलभ होगा?

व्याख्या : यम कुबेर = यम धर्मराज भी आंजनेय की महिमा का वर्णन करने में असमर्थ हैं । एक समय एक पहलवान मर कर यमलोक गया । वह अपने जीवन में सदा पाप का काम ही करता रहा । पुण्य का काम नहीं किया। लेकिन कुश्ती लड़ते समय विजयी बनने के लिये "जै बजरंग बली" बोल कर कुश्ती लड़ता था। इस प्रकार जब –तब श्री हनुमान का स्मरण किया करता था । यम धर्मराज ने पूछा कि तुम पहले पुण्य का फल चाहते हो या पाप का फल, तो उसने कहा कि पहले पुण्य का फल चाहूंगा । तब यम ने ब्रह्मा के पास जाकर प्रश्न किया कि सकाम भाव से हनुमानजी का स्मरण करने वाले को कैसा फल देना होगा ? ब्रह्माजी ने कहा –भगवान के सेवक आंजनेय के बारेमें तो श्रीमन्नारायण से जाकर पूछ ले। तब यम भगवान के पास गये और पूछने पर भगवान ने कहा । राम नाम जपने से जो फल दिया जाता है उस से कई गुना फल मेरे प्रिय हनुमान के नाम जपने वाले को दे दो । तब यम ने पहलवान से वर मांगने को कहा– पहलवान ने मनुष्य काजन्म प्रदान करने कीप्रार्थना की, कारण फिरसे मनुष्य जन्म मिलने पर वह श्री हनुमान जी की उपासना करके अपने जीवन को सफल बना लेगा । तुरंत उसे मनुष्य काजन्म मिला ।

उसने हनुमान की उपासना कर के मुक्ति पाई । इस प्रकार से यम को हनुमान का महत्व मालूम होने पर भी उनकी महिमा का वर्णन नहीं कर पाते। कुबेर आदि देवता भी हनुमानजी के गुणों को गाते रहते हैं। फिर भी पूर्ण रूप से वर्णन नहीं कर पाते – आखिर "नेति नेति" कहकर चुप हो जाते हैं।

कबिकोविद कहिसके कहां ते : – भूमंडल के कवि और पंड़ित श्री हनुमान जी की महिमा का वर्णन करते हैं । ग्रंथ रूप में लिखते हैं । पर वे भी पूर्ण रूप से उनके बारे में नहीं लिख सकते । चंद्रमा की तुलना दूध के कटोरे से और सूर्य की तुलना सहस्त्रविघुट्टीपों के बारबार कहकर श्री आंजनेय की महिमा का वर्णन कुछ ही हदतक कर पाते हैं । पराशर संहिता के पंचम पटल में कहा गया है ।

चतुर्मुखः पंचमुखश्च षण्मुख स्सहस्त्रशीर्षाद्विमुखैक वक्त्रः।
त्रिमूर्ति तेजोमयमांजनेयं ज्ञातुंसमर्थश्च नहित्रिलोक्याम् ।।

चतुर्मुख ब्रह्माजी, पंचमुख शिवजी, षण्मुख कुमारस्वामीजी, सहस्त्रशीर्ष आदि शेषजी, द्विमुख अग्निदेव, एक मुख श्रीमन्नारायण जी, तीनों लोकों में अन्यकोई भी त्रिमूर्ति तेजोरूप श्री आंजनेय की महिमा का वर्णन करने में असमर्थ हैं । ऐसी स्थिति में हनुमानजी की महिमा का वर्णन इस भूमंडल के कवियों और पंडितों से कैसे संभव होगा ?

चौपाई–१६

तुम उपकार सुग्रीवहि कीन्हा ।
राम मिलाय राजपद दीन्हा ॥

अर्थ : तुम = तुमने, सुग्रीवहिं = सुग्रीव का, उपकार कीन्हा = किया, राम = राम के साथ (उनको) मिलाय = मित्रता करा कर, राज पद —राजा का सिंहासन, दीन्हा = दिलाया ।

भाव : तुमने सुग्रीव का उपकार किया । राम के साथ उनकी मित्रता कराकर उन्हें राजसिंहासन दिलाया ।

व्याख्या : तुम उपकार – श्री हनुमान जी परोपकारी हैं। यहाँ श्री गोस्वामी तुलसीदास के अंतरंग की वाणी प्रकट हो रही है । वे श्री हनुमान की प्रार्थना इस प्रकार करते हैं– हे आंजनेय ! तुम परोपकार की बुद्धि रखते हो। जिस प्रकार सुग्रीव को दारूण संकट से छुड़ाकर श्री राम के साथ मित्रता करायी है उसी प्रकार मुझे इन सांसारिक झंझटों से मुक्ति दिलाकर श्री राम के दर्शन का लाभ कराओ। राममिलाय–आंजनेय ने जब सुग्रीव के साथ मित्रता करने की प्रार्थना की। सबसे पहले वटु के वेश में जाकर श्री राम और लक्ष्मण से जानकारी प्राप्त कर निवेदन किया कि अपने स्वामी सुग्रीव उनसे मित्रता करना चाहते हैं।

युवाभ्यां स हि धर्मात्मा सुग्रीवः सख्यमिच्छति ।
तस्य मां सचिवं वित्तं वानरं पवनात्मजम्।।

वा.रा. कि ष्कि ३–२२

धर्मात्मा सुग्रीव आप दोनों से मित्रता स्थापित करना चाहते हैं। मुझे उन्ही का मंत्री समझे । मैं वायु देवता का वानर जातीय पुत्र हूं। तब श्री हनुमानजी की बातें सुनकर श्री राम की आज्ञा से लक्ष्मण जी ने श्री हनुमान से यों कहा –

विदितानौ गुणा विद्वन् सुग्रीवस्य महात्मनः ।
तमेव चावां मार्गावः सुग्रीवं प्लवगेश्वरम् ।।

वा.रा. कि.का. ३ – ३७

हे विव्दन् ! महात्मा सुग्रीव के गुण हमें ज्ञात हो चुके हैं। हम दोनों भाई वानरराज सुग्रीव की ही खोज में यहां आये हैं।

यथा ब्रवीषि हनुमन् सुग्रीव वचनादिह ।
तत् तथाहि करिष्यावो वचनात् तव सत्तम ।।

वा.रा. कि.कां. ३ – ३८

साधु शिरोमणि हनुमान जी! तुम सुग्रीव के कथनानुसार यहां आकर जो मैत्री की बात चला रहे हो वह हमें स्वीकार है । हम तुम्हारे कहने से ऐसा कर सकते हैं।

इन बातों को सुनकर हनुमान जी निजरूपमें प्रकट होकर श्री राम और लक्ष्मण को अपनी भुजाओं पर चढाकर सुग्रीव के समीप लेगये। सुग्रीव को श्री राम और लक्ष्मण का परिचय कराकर बाद को अग्नि को साक्षी रख कर श्री राम और सुग्रीव को मित्र बनाया । अनंतर सुग्रीव के भाई वालि कावध श्री राम ने किया और सुग्रीव को राजा बनाया । इस प्रकार आंजनेय ने सुग्रीव की मित्रता श्री राम से कराकर राज पद दिलाकर महान् उपकार किया ।

चौपाई–१७

तुम्हरो मंत्र बिभीषन माना ।
लंकेस्वर भए सबजग जाना ॥

अर्थ : तुम्हरे = तुम्हारे, मंत्र = सुझाव को (सलाह को) विभीषन ने = विभीषण ने, माना = स्वीकार किया, (इससे) (वह) लंकेस्वर = लंका के राजा, भए = हुए। (यह बात) सब जग = सारे जगत नें, जाना = जान लिया है (सारे जगत को मालूम है)

भाव : तुम्हारी सलाह को मानने से विभीषण लंका के राजा बन गये। इस बात को सारा संसार जानता है ।

व्याख्या : तुम्हरो मंत्र – लंका में प्रविष्ट होकर सीतान्वेषण में संलग्न आंजनेय से मिलकर विभीषण ने अपनी दुस्थिति यों सुनायी –

सुनहु पवन सुत रहनि हमारी ।
जिमि दसनन्हि महुं जीभ बिचारी ॥
तात कबहुं मोहिं जानि अनाथा ।
करिहहिं कृपा भानुकुलनाथा ॥

हे आंजनेय! मेरी दुर्दशा सुनो । मैं तो यहाँ ऐसा (दबा–दबासा) रहता हूं जैसा दातों के बीच बेचारी जीभ दबी रहती है । यह तो बताइये भाई ! मुझे अनाथ जानकर सूर्यकुल के नाथ श्री राम, कभी मुझ पर कृपा करेंगे या नहीं ।

तब हनुमान ने विभीषण को एक उपाय सुझाया –

सुनहु बिभीषण प्रभुकै रीती
करहिं सदा सेवक पर प्रीती ॥

रा.च.मा. ५–६–३

हे विभीषण जी! सुनिये । यह तो प्रभु की रीति ही है कि जो उनके सेवक होते हैं, उनसे वे सदा प्रेम करते ही हैं । यह बात सुनकर विभीषण सोचने लगे कि श्री राम मुझे स्वीकार करेंगे या नहीं तब आंजनेय ने कहा –

"असमैं अधम सखा सुनु, मोहू पर रधुवीर
कीन्ही कृपा सुमिरि गुनभरे बिलोचन नीर"

रा.चा.मा. ५–७

"देखो सखा ! ऐसा तो मैं अधम हूं (इससे अधम और कोई क्या हो सकता है?) पर प्रभु राम की बड़ाई देखिये कि ऐसे मुझपर भी उनकी कृपा बनी रहती है"।

भगवान श्री राम बड़े उदार हैं, दयालु हैं वे ऐसे प्रभु हैं जो जाति –पांति को नहीं मानते। सब पर समान रूप से कृपा करते हैं। उन्हे छोड़ कर जो इधर – उधर भटकते है, वेदुःखी होते हैं । इसी प्रकार श्री राम के गुणों का गान करते समय हनुमान जी के नेत्र प्रेमाश्रुओं से भरउठे । बिना संकोच के जल्दी से श्री राम की शरण में जाने की सलाह श्री हनुमान जी ने विभीषण को दी। इस सलाह को गुरू मंत्र की भांति मानकर विभीषण ने श्री राम का आश्रय लिया। श्री राम ने विभीषण पर कृपा कर के गले से लगाकर सखा के रूप में स्वीकार किया ।

लंकेस्वर भए : श्री राम ने विभीषण को पहले अस्थायी रूप में लंकेश्वर बनाकर बाद में युद्ध में रावण का वध करके लंका का निष्कंटक राज्य प्रदान किया। बाद में एक कल्प तक (याने ब्रह्मा के एक दिन ४३,२०,०००,०००) की उम्र प्रदान कर यों बोले –

करहु कल्पभरि राजु तुम्ह मोहिं सुमिरेहु मन माहिं ।
पुनि मम धाम पाइहहु जहां संत सब जाहि ।।

रा.च.मा.६–११६

हे विभीषिण! तुम कल्पभर राज्य करते हुए सदा मेरा स्मरण करते रहना। अंत में मेरा वह धाम पाजाओगे जहां सब संत जन पहुंच जाते हैं । इस प्रकार श्री राम पूर्णतया विभीषण पर कृपा करते हैं ।

इस चौपाई में मंत्र शब्द का तात्पर्य हनुमन्महा मंत्र के रूप में ले सकते हैं। पराशर संहिता में कहा गया है कि इस मंत्र विद्या की दीक्षा श्री राम की कृपा से विभीषण लेकर लंका राज्य की शाश्वत राज्य लक्ष्मी को पागये। यह विद्या सद्यः फल देने वाली है।

श्री रामानुग्रहादेनां विद्यां प्राप्य विभीषणः।
अचलां श्रियमाप्नोति लंकाराज्येन सर्वदा।।

प.सं. पहला पटल

"आदौ प्रणवमुच्चार्य हरिमर्कट शब्दतः ।
मर्कटाय पदं वह्निजायांतु प्रोच्चरेत्ततः।।

प.सं. दूसरा पटल

द्वादशाक्षरसंयुक्तो मंत्रो z यंसमुदीरितः

प.सं. दूसरा पटल

"ओं हरि मर्कट मर्कटाय स्वाहा" यह द्वादशाक्षर मंत्र है।
तथा सुवर्चला युक्त हनुम द्वादशाक्षरः
मंत्र श्रेष्ठतर श्शीघ्रं भुक्तिं मुक्तिं प्रयच्छति

महर्षि पराशर ने मैत्रेय से कहा – यह श्री हनुमत् द्वादशाक्षर जो मंत्र है वह सब मंत्रों में श्रेष्ठ है और शीघ्र भुक्ति और मुक्ति दोनों को दे देता है। पराशर संहिता में कहा गया है कि इसमंत्र के जप से देवेंद्र ने वृत्रासुर का, भीमसेन ने जरासंध का संहार किया। ब्रह्माजी ने अपने अस्त्रों को सुरक्षित रखने हेतु इस मंत्र का जप किया । गरूड़ इस मंत्र के जपसे अमृत ले आये। सीता देवी ने इस मंत्र की दीक्षा गर्ग महामुनि से लेकर जपकर के प्राचीन काल में शतानन राक्षस का वध आसानी से किया और कई महात्माओं ने इसे जपकर बहुत बड़ी सफलता पाई।

इस प्रकार विभीषण इस हनुमन्महामंत्र को श्री राम से पाकर – जपकर–राज्य लक्ष्मी को प्राप्त कर अंत में श्रीराम सायुज्य पा गये ।

मंत्र का अर्थ मंत्रणा के रूप में ग्रहण करने पर भी श्री हनुमन्महामंत्र के रूप में ग्रहण करने से उसकी उदात्तता और भी बढ़ जाती है। इसी से स्पष्ट होता हे कि श्री तुलसीदास जी के अंतरंग की वाणी कितनी गंभीर है।

चौपाई–१८

जुग सहस्र जोजन परभानू ।
लील्यो ताहि मधुर फल जानू ॥

अर्थ : जुग = दो । सहस्त्र = हजारों, पर = दूर पर स्थित, भानू = सूर्य को, मधुर= मीठा, फल=फल के रूप में, जानू= जानकर, ताहि = उसे, लील्यो= लील लिया (खालिया)

भावः दो हजार कोस पर स्थित सूर्य को मीठा फल जानकर उसे लील लिया ।

व्याख्या : जुग सहस्त्र जोजन पर भानू = पर माने बाद समझना चहिए । १६ हजार मील दूर के बाद स्थित सूर्य से तात्पर्य है । उससे भी अधिक दूर पर स्थित मान लेना चाहिए । आधुनिक विज्ञान शास्त्र के द्वारा मालूम हो रहा है कि सूर्य पृथ्वी से १ करोड़ मील दूर पर स्थित है (९२९५७000 मील या १४,९६,00,000 कि.मी) । योजन याने चार कोस या आठ मील । पृथ्वी से कई गुना बड़ा सूर्य सचमुच दो हजार योजन याने १६ हजार कोस दूर पर अगर पृथ्वी रहती है तो यह पृथ्वी भस्म हो गई होती इन १६000 मीलों से भी कहीं अधिक दूर पर स्थित सूर्य से तात्पर्य समझना चाहिये। इस से स्पष्ट होता है कि हनुमान जी में जन्म से ही बहुत बड़ी शक्ति मालूम हो रही है कि चाहे जितने ऊंचे, चाहे जितने बड़े चाहे जितने छोटे वानर रूप या मानव रूप धारण कर लेने की शक्ति ईश्वर से उन्हे मिली है।

लील्यो ताहि मधुर फल जानी : वे चाहे जितना बड़ा मुंह खोल सकते हैं। सूर्य से भी बहुत बढाकर अपना मुंह खोल कर मीठा फल समझकर सूर्य को लीललेने गये तो इंद्र ने वज्रायुध से मार दिया । हनुमान मूर्छित हो गये। वायुदेव ने कुपित होकर हनुमान को अपनी गोद में लेकर अपना गमन बंद कर दिया । इस से सारी सृष्टि में हलचल मच गयी। लोग त्राहित्राहि करने लगे । तब ब्रह्मा, इंद्र आदि देवता आकर पवन पुत्र को होश में ले आये और पवन देव को संतुष्ट करने के लिये हनुमान को कई ऐसे वरदान दिये जिस से कोई भी दिव्यास्त्र, ब्रह्मास्त्र और यम का काल दंड भी उन पर अपना प्रभाव नहीं दिखा सकेगा ।

चौपाई– १९

प्रभु मुद्रिका मेलि मुख माही ।
जलधि लांघि गये अचरज नाही ॥

अर्थ : प्रभु = श्री राम चन्द्र की, मुद्रिका = अंगूठी को, मुख माहीं = मुंह में, मेलि= डालकर या रखकर, जलधि = सागर, लांघिगये = श्री हनुमानजी पार कर गये (इसमें) अचरज = आश्चर्य, नाहिं = नहीं है ।

भाव : भगवान श्री रामजी से प्रदत्त राम नामांकित मुद्रिका मुंह में रख कर श्री हनुमान सागर पार कर गये। इसमें जरा भी आश्चर्य नहीं ।

व्याख्या : प्रभु मुद्रिका मेलि मुखमाही – नहीं । मुंह में मुद्रिका रखलीसे तात्पर्य वह रामनामांकित है । भाव यह है कि वे राम नाम का जप करते जा रहे हैं। तुलसी रामायण में यह बात नहीं कही गयी है कि हनुमानजी ने मुद्रिका रख ली है। श्री वाल्मुकि रामायण में तो मुद्रिका के बारे में कहा गया है –

ददौ तस्य ततः प्रीतः स्वनामांकोपशोभितम् ।
अंगुलीयमभिज्ञानं राजपुत्र्याः परंतप : ॥
अनेन त्वां हरिश्रेष्ठ चिह्नेन जनकात्मजा ।
मत्सकाशादनुप्राप्तमनु द्विग्नानु पश्यति ॥

वा.रा.किं. ४४–९२

बाद को शत्रुओं को सताने वाले श्रीराम ने प्रसन्नता पूर्वक अपनी नामांकित मुद्रिका को सीता माता को पहचानने के लिये (हनुमान को) दिया ।

स तद्गृह्य हरि श्रेष्ठः कृत्वा मूर्ध्नि कृतांजलिः
वंदित्वा चरणौ चैव प्रस्थितः प्लवगर्षभः ॥

वा.का.किं. ४४–१५

वानर श्रेष्ठ प्लवंगोत्तम हनुमान जी ने उस मुद्रि का को लेकर सिर पर धारण करके हाथ जोड़कर श्री राम के चरण कमलो में वंदना करके प्रस्थान किया ।

इस श्लोक से मालूम होता है कि श्री हनुमान जी मुद्रिका को अपने सिर पर कुंचित केशों में छिपा लिया । जैसे लोक में बहुमूल्य वस्तु को सावधानी से छिपा कर सदा उसी का स्मरण करते रहते हैं। ठीक वैसे ही श्री हनुमान जी भी मुद्रिका को सिर पर रखकर अपने मन को उसी में लगाकर उसी का जप करते हुए सागर पर कर गये।

श्री तुलसी ने बडी ही चतुरता से इस प्रकार कहा – मुद्रिका को मुंह में डाल लिया "प्रभु मुद्रिका मेलि मुख माही" – श्री हनुमानजी का भाव यह है कि मुद्रिका का जप भी राम नाम जप के समान ही है। श्री हनुमान जी राम नामांकित मुद्रिका के जप से सागर को सरलता से पार कर गये । "**नाम लेत भव सिंधु सुखाही**"

१६ हजार मील दूर से अधिक दूर पर स्थित सूर्य को लील लेने जानेवाले श्री हनुमानजी के लिये शत योजन याने आठ सौ मील समुद्र लांघकर लंका पहुंचना तो बायें हाथ के खेल के समान ही है। श्री राम से आशीर्वाद पाकर रामनामांकित मुद्रिका को सावधानी से लेकर उसका जप करते हुए शतयोजन विस्तीर्ण समुद्र लांधने में अचरज नहीं, आश्चर्य नहीं । इस जगत में श्री राम के नाम जप के लिये कुछ भी असाध्य नहीं, सभी सुसाध्य ही हैं ।

चौपाई– २०

दुर्गम काज जगत के जेते ।
सुगम अनुग्रह तुम्हरे तेते ।।

अर्थ : जगत के = जगत में, जेते = जितने, दुर्गम= कठिन, काज = काम है, तेते = वे सब के सब, तुम्हरे = तुम्हारे, अनुग्रह = अनुग्रह से, सुगम = सुगम हो जाते हैं ।

भाव : इस जगत के जितने – जितने कठिन काम हैं वे सब के सब तुम्हारी कृपा से सुगम हो जाते हैं ।

व्याख्या : दुर्गम काज–इस दारूण संसार के संकटों में जो लोग डूबे हुए हैं, अगर वे श्री हनुमानजी का ध्यान करें तो उनके सभी संकट दूर हो जाते हैं। पिशाच आदि का भय, और भी अनेक प्रकार के भय होने पर यदि लोग हनुमानजी का स्मरण करें, अर्चन करे, तो उनके सभी भय भाग जाते हैं। श्री जांबवान ने यों कहा–

कौन सो काज कठित जग माहीं ।
जोनहि होय तात तुमपाहीं ।

आंजनेय – जगत में तुम्हारी कृपा जिन पर हो जाती है उनके लिये कोई काम कठिन नहीं। उनके लिये हर काम सुगम ही होगा ।

सुगम अनुग्रह – श्री आंजनेय बहुत ही जल्दी और आसानी से प्रसन्न हो जाते हैं। अन्य देवताओं के प्रसन्न होने में भले ही थोड़ी देर लग सकती है पर श्री हनुमान जी सदा अपना स्मरण करने वाले पर बहुत ही जल्दी और सरलता से प्रसन्न होते हैं। बस, विश्वास के साथ स्मरण करने की आवश्यकता है, शौनक संहिता में सूचित किया गया है–

यत्रास्ति भोगो नहि तत्रमोक्षः ।
यत्रास्ति मोक्षो नहि तत्र भोगः ।।

श्री मारुतेस्सेवनतत्पराणाम् ।
भोगश्च मोक्षश्च करस्थ एव ।।

जहां भोग होगा वहां मोक्षनहीं रहता जहां मोक्ष होगा वहां भोग नहीं रहता। लेकिन श्री आंजनेय की पूजा जो करते हैं उनको भोग और मोक्ष दोनों आसानी से उपलब्ध होजाते हैं। श्री आंजनेय की आराधना सद्यःफल देने वाली है। इस कलि काल में भक्तवत्सल और करुणा निधान भगवान श्री हनुमान की पूजा ही करनी चाहिये ।

चौपाई– २१

राम दुआरे तुम रखवारे ।
होत न आज्ञा बिनु पैसारे ॥

अर्थ : तुम= तुम राम के = राम के, दुआरे = द्वार की; रखवारे = रक्षा करते हो (तुम्हारी) आज्ञा = आज्ञा के... बिनु = बिना, पैसारे = अंदर जाने (प्रवेश) न होत = नहीं होता (नहीं पाते)

भाव : आंजनेय ! श्री राम के दरबार में तुम पहरेदार हो(द्वार पालक हो) तुम्हारी आज्ञा के बिना कोई अंदर नहीं जा सकता ।

व्याख्या : राम दुआरे तुम रखवारे – श्री राम का साम्राज्य अयोध्या नगर है। उस साम्राज्य में श्री आंजनेय प्रभु सेवा परायण होकर द्वार पालक के रूप में रहा करते हैं। भक्तों के लिये विशिष्ट कार्यों के बारे में वे खुद जाकर स्वामी से निवेदन करते हैं। श्री तुलसीदास जी को भी श्रीराम जी के दर्शन श्री आंजनेय के द्वारा ही हुए थे। तुलसी दास जी ने जो विनय पत्रिका लिखी थी उसे भी श्री रामचन्द्र जी के समक्ष श्री आंजनेय ने ही प्रस्तुत की थी। इस भूलोक के हर एक राममंदिर में श्री राम की मूर्ति के सामने दासांजनेय के रूप में आंजनेय की मूर्ति रहा करती हैं। भक्तों की रक्षा के साथ –साथ वे सदा श्री राम की भी रक्षा करते रहते हैं। राम रावण युद्ध में कई बार राम के रक्षक के रूप में रह कर अपने प्रभु सेवा की तत्परता को दिखाया ।

होत न आज्ञा बिनु पैसारे – भाव यह है कि श्री आंजनेय की कृपा बिना कोई भी प्रभुके समीप नही पहुंच सकता । इसका रहस्य यों बता सकते हैं – जो लोग सांसारिक यातनाओं में फंस कर व्याकुल होकर सकाम भावना सें श्री राम के दर्शन करना चाहते हैं, ऐसे लोगों को द्वार पर ही रोककर तुरंत उनकी कामना ओं को पूरा करके वे वहीं से लोटा देते है। जो भक्त निष्काम भाव से और सच्चे प्रेम से श्री राम के दर्शन करना चाहते हैं मात्र उन्हीं लोगों को श्री आंजनेय श्री राम के

दरबार में प्रविष्ट होने की अनुमति देते हैं और श्री राम के पास पहुंचाते हैं। यह बात रामरहस्योपनिषद के चतुर्थ अध्याय में श्री आंजनेय ने स्वयं यों कहा है –

ऐहिकेषुच कार्येषु महापत्सुच सर्वदा
नैव योज्यो राम मंत्रः केवलं मोक्षदायकः
ऐहिके समनुप्राप्ते मां स्मरेद्राम सेवकम् ।
यो रामं संस्मरेन्नित्यं भक्त्या मनु परायणः
तस्याह मिष्ट संसिध्यै दीक्षितो z स्मिमुनीश्वराः
वांछितार्थ प्रदास्यामि भक्तानां राघवस्यतु
सर्वदा जागरूको z स्मि राम कार्य धुरंधरः ।।

ऐहिक कार्यो के लिये और महान विपत्तियों के लिये राममंत्र का उपयोग नहीं करना चाहिये, कारण वह केवल मोक्ष प्रदान करनेवाला है। इस लोक के कामों के लिये मुझ राम सेवक का स्मरण कर लेना चाहिये । हे मुनीश्वर ! प्रतिदिन जोलोग श्रद्धा और भक्ति के साथ श्री राम मंत्र का जप करते रहते हैं उनकी कामनाओं को पूरा करने के लिये मैं वचन बद्ध हूं । श्री राम चंन्द्र जी के भक्तों की वांछा ओं को सफल बनाने हेतु राम कार्य धुरंधर मैं सदा जागरूक बना रहता हूं ।

चौपाई – २ २

सब सुख लहै तुम्हारी सरना ।

तुम रच्छक काहू को डरना ।।

अर्थ : तुम्हारी = तुम्हारी, सरना = शरणमें आये हुए को (उनको) सब सुख लहै – सभी सुख प्राप्त हो जाते हैं। तुम = रच्छक = रक्षक के रूप में रहने पर, काहू को = किसी से डर+ना = डर नहीं ।

भाव : आंजनेय । तुम्हारी शरण में आये हुए लोगों के रक्षक के रूप में रहते ऐसे लोगों को किसी से डरने की जरूरत ही नहीं।

व्याख्या : सब सुख लहै – जो लोग श्री हनुमानजी की शरण में जाते हैं उनको इस लोक और उस लोक में सुख मिलेगा ही, और अंत में मोक्ष भी मिलेगा ।

सुर दुर्लभ सुख करि जग माही ।

अंत काल रघुपति पुर जाही ।

श्री हनुमान जी की शरण में जो लोग जाते हैं, उनको देव दुर्लभ सुखों को इस लोक में वे प्रदान करेंगे ही और अंत में मोक्ष भी प्राप्त करायेंगे । जो लोग आंजनेय की आराधना नहीं करते, भले ही वे सांसारिक क्षुद्र भोग विलासों को पालें पर नरक का दुःख भोगना ही पड़ेगा । इसे यों समझ सकते हैं सभी सुख हनुमान जी के अधीन रहते हैं। जिन पर उनकी कृपा हो जाती है उनको सभी सुख बड़ी आसानी से मिल जाते हैं । कहा भी गया है न– "अष्टसिद्धि नव निधि के दाता"।

तुम रच्छक काहू को डरना :– जिसके रक्षक हनुमान जी हैं वह निर्भीक हो जाता है। श्री हनुमान जी के भक्तों को कोई नहीं सता सकता । इस संबंध मे कई प्रमाण हैं और करोड़ो कथाएं प्रसिद्ध हैं ।

चौपाई–२३

आपन तेज सम्हारो आपै ।
तीनों लोक हांकते कांपै ॥

अर्थ : आपन = अपने तेज = तेज से परिपूर्ण बल और पराक्रम, सम्हारो= सम्हालने में, आपै = तुम्ही समर्थ हो, ते = तुम्हारी, हांक = हुंकार सुनकर, तीनों लोक=तीनों लोक, कांपै = थर थर कांपते हैं ।

भाव : अपने तेज से परिपूर्ण बल और पराक्रम को सम्हालने में तुम्हीं समर्थ हो । तुम्हारी हुंकार सुनकर तीनों लोक थर थर कांप जाते हैं।

व्याख्या : आपन तेज = भाव यह है कि श्री हनुमान जी के तेज से परिपूर्ण बल पराक्रम के बढ़ जाने पर उन्हें कोई भी रोकने में समर्थ नहीं । श्री हनुमान जी साक्षात् शंकर ही है। प्रलय मचाने की शक्ति उन्ही में है। अपने रूप को अपने ही आप बढ़ा लेने की या घटा लेने की आंजनेय में अद्भुत शक्ति है ।

तीनों लोक हांकते कापै : आंजनेय की भारी हुंकार सुनकर राक्षस डर जाते थे । लंका नगर को जला कर विजय के उत्साह से उन्होंने इतनी भयंकर गर्जना की कि उसे सुनसुनकर राक्षस स्त्रियों के गर्भ गिर गये।

चलत महाधुनि गर्जेसि भारी
गर्भस्रवहि सुनि निसिचरनारी

राम.च.मा. ५–२७–१

भयंकर राक्षस भी आंजनेय की गर्जना सुनकर भाग जाया करते थे ।

"हनुमान अंगद रण गाजे ।
हांक सुनत रजनीचरभाजे ॥

हनुमान की गर्जना सुनते ही एक दिन विश्व विजेता रावण के अंग अंग के जोड़ ढीले पड़ गये थे ।

"हांक सुनत दसकंधके भये बंधन ढीले"

– विनय पत्रिका ३२–२

श्री हनुमान की इस गर्जना के प्रति जिन्हें संपूर्ण विश्वास है वे सर्वत्र विजयी होते हैं । उन्हें कोई कभी भी, कहीं भी हानि नही पहुंचा सकता

सेवक स्योकाई जानि जानकीस मानै कानि
सानुकूल सूलपानि नवैनाथ नांकको
देवी देव–दानव दयावने हवै जोरै हाथ
भय कहा बापुरे बराक राजारॉंक को
जागत सोवत बैठे बोलत बिनोद मोद
ताकै जो अनर्थसो समर्थ एक अंक को
सबदिन रूरो परै पूरो जहां तहां ताहि
जाके है भरोसो एक हनुमान हांकको

हनुमान बहुक १२

जिनके हृदय में हनुमान जी के गर्जन का ही भरोसा रहता है उसे जानकी नाथ श्री राम भी बहुत मानते हैं कि वह मेरे सेवक (हनुमान) की सेवा करता है शिव भी उस पर प्रसन्न रहते हैं । स्वर्ग के राजा इंद्रभी उसके आगे झुके रहते हैं और सभी देवी देवता और दानव भी जब विनम्रता के साथ उसके सामने हाथ जोड़े खड़े रहते हैं तब बेचारे क्षुद्र राजा राणा रंकों की क्या गिनती है। जागते, उठते, बैठते धूमते फिरते हंसी विनोद में भी कोई उसका अहित करने का साहस कौन कर सकता है, कारण उसका कल्याण ही कल्याण होता रहता हैं और सर्वत्र उसका काम बना रहता है । जो लोग संपूर्ण विश्वास के साथ हनुमान की शरण में जाते हैं, वे कहीं भी रहें सदा उनके मनोरथ सफल होंगे । श्री हनुमान जी की गर्जन पर जिनको भरोसा है उनका कोई भी कुछ नहीं बिगाड़ सकता । वह गर्जना राक्षसों के लिये प्राणनाशक है और भक्तों के लिय भय रहित और परम प्रिय है ।

चौपाई – २४

भूत पिसाच निकट नहि आवै।
महाबीर जब नाम सुनावै।।

अर्थ : महाबीर = हे महावीर हनुमान जी. भूत पिसाच = भूत प्रेत पिशाच, जब= जब (तुम्हारे) नाम= नामको, सुनावै= सुनेंगे (वे) निकट = समीप, आवै, नहि = नहीं आसकेंगे ।

भाव : हे महावीर हनुमानजी! तुम्हारे नाम के स्मरण मात्र से ही भूत प्रेत पिशाच निकट नहीं आ सकेंगे ।

व्याख्या : भूत पिसाच–श्री हनुमान जी के नाम मात्र स्मरण करने से ही भूत प्रेत पिशाच आदि भाग जाते हैं। पराशरसंहिता में कहा गया है कि श्री हनुमन्मंत्र सिद्ध व्यक्ति के कर स्पर्श से ब्रह्मराक्षस, भेताल, भूत, पिशाच आदि तुरंत भाग जाते हैं।

ब्रह्मराक्षस भेताल भूत प्रेत पिशाचकान् ।
दृष्टयै वोच्चाट येत्सद्यो नात्र कार्या विचारणा ।।

संकट मोचन कुपानिधान रक्षाकीजे श्री हनुमान्" नाम का स्मरण करने से भूत प्रेत पिशाचों से या शत्रुओं से किसी भी प्रकार का डर नहीं रहेगा । करुणा सिंधु हनुमान हमें सभी कष्टों से बचायेंगे।

इसी से तो **"संकट मोचन हनुमान"** उनकी उपाधि है ।

को नहि जानत है जग में संकटमोचन नाम तिहारो ।

महाबीर : इसकी चर्चा तीसरी चौपाई में की गई है।

चौपाई–२५

नासै रोग हरै सब पीरा ।
जपत निरंतर हनुमत बीरा॥

अर्थ : निरंतर = निरंतर, हनुमत बीरा = श्री महावीर हनुमान जी का, जपत = जप करैं, तो सब रोग = सभी प्रकार के रोग, नासै = नष्ट हो जायेंगे । सब पीरा = सब पीडाएं, हरै = दूर हो जायेंगी।

भाव : निरंतर महावीर हनुमान जी के नाम का जप करने से सभी प्रकार के रोग दूर हो जायेंगे और सभी प्रकार की पीड़ाएं दूर हो जायेंगी ।

व्याख्या : नासै रोग; श्री हनुमान के नाम को जपने वाले के पास रोग आही नहीं सकते, अगर आ भी जावें तो ये दूर हो जायेंगे।

नारद पुराण में कई प्रकार के रोगों को दूर करने की हनुमदुपासना के कई विधान बताये गये हैं –

एक प्रकार की विधि :

एक अष्टदल पद्म को तैयार कर उसे एक पाटे पर या एक तांबे के लोटे के ऊपर रखना चाहिये । उस पद्म के हर एक दल पर श्री हनुमान जी के नीचे लिखे आठ नामों को लिख लेना चाहिये ।

1. श्रीराम भक्त 2. महातेजोमय 3. कपिराज 4. महाबलवान 5. द्रोणाद्रिहारक 6) मेरूपीठार्चन कारक 7. दक्षिणाशाभास्कर 8. सर्व विध्नविनाशन

इन नामों को फूलों से पूजा करके यों ध्यान करना चाहिये –

उद्यत्कोट्यार्कसंकाशं जगत् प्रक्षोभ कारकम्
श्री रामांघ्रिध्यानिष्ठं सुग्रीव प्रमुखार्चितम्
वित्रासयंतं नादेन राक्षसान् मारुतिं भजेत् ॥

"कोटि सूर्य समान तेजस्वी, समस्त जगत के सृष्टि स्थिति–लय कारक, श्री राम चरणाबिंद चिंतन में संलग्न, अपने सिंहनाद से पापी राक्षसों को सताने वाले महावीर हनुमान जी पधार कर इस पद्मासन पर आसीन हों ।

इस प्रकार आवाहनादि षोडशोपचार पूजा करके–

"ॐ महातेजसे मारुत नंदनाय नमः "

इस मंत्र का प्रति दिन पचास मालाओं का जप करें । माला माने एक सौ आठ बार । इस प्रकार जप करने वाले के पास किसी भी प्रकार के रोग नहीं आसकते । ऐसा संभव नहीं तो पचास दिन तक प्रतिदिन पचास मालाओं का जप करें बाद में चौदह या कम से कम पांच मालाओं का जप अवश्य करना चाहिये। जप के दिनों में ब्रह्मचर्य व्रत का पालन होना चाहिये । जप की संख्या पूरी होने तक रात दिन = संकट मोचन कृपा निधान, रक्षा कीजै श्री हनुमान" का स्मरण करते रहना चाहिये। ऐसा करने से सभी प्रकार के रोग द्वर हो जाते हैं और भूत–प्रेत पिशाच आदि की बाधा भी द्वर हो जाती है।

हरै सब पीरा : पीरा या पीड़ा माने – बाधा । ये बाधाएं कई प्रकार की होती हैं । इन्हें ताप त्रयं भी कहते हैं – 1) आध्यात्मिक 2) आधिभौतिक 3) आधिदैविक – ये त्रिविध ताप कहे जाते हैं।

1) आध्यात्मिक – ज्वर सिर दर्द आदि पीड़ाएँ ।

2) आधिभौतिक – चोर व्याध्रादि उपद्रव ।

3) आधिदैविक – यक्ष राक्षसों के द्वारा होने वाले उपद्रव ।

तैत्तिरीयो z पनिषद की शिक्षावल्ली के प्रथमानुवाक में कहा गया है कि ये त्रिविधताप नष्ट हो जायेंगे । शांतिः शांतिः शांतिः

इस प्रकार हनुमान जी के नाम के जप करने से सभी प्रकार की पीड़ाएं द्वर हो जाती हैं ।

जपत निरंतर हनुमत वीरा – हम लोग अक्सर कहा करते हैं कि एक जगह एक आसन पर बैठकर मन से दो एक माला जपने का समय नहीं मिलता। लेकिन संकट के समय श्री आंजनेय का स्मरण करते हैं । अपने अभीष्ट सिद्धि के लिये श्री हनुमान चालीसा या सुंदरकांड का पाठ करते हैं और मंदिर में जाते हैं लड्डू चढ़ाते हैं और हनुमान जी का दर्शन करते हैं लेकिन अभीष्ट सिद्धि के बाद सब को भूल जाते हैं। यदि हम श्री हनुमान जी को अपने इष्ट देव के रूप में मानकर यदि हम निरंतर उनके नाम का जप करते रहें तो हमें किसी प्रकार के संकट ही नहीं होंगे । हमे सदा शांति और सुख मिलेंगे ।

दुख में सुमिरन सब करै
सुख में करै न कोय ।
जो सुख में सुमिरन करै
ते दुख कबहुं न होय ।।

दुख के समय सब कोई भगवान का स्मरण करते हैं पर सुख के समय उनका ध्यान कोई नहीं करता। अगर सुख के समय में भी उनका स्मरण करते रहें तो कभी दुख ही नहीं आयेगा।

यही नहीं, पराशर संहिता में कहा गया है कि जिसने श्री हनुमान जी ने नाम का जप करके सिद्धि प्राप्त कर ली है, उनके हाथ के स्पर्श मात्र से चर – अचर कृत्रिम विष आदि भी दूर हो जायें गे । वे चिरायु बनेंगे, दुर्लभ भोगैश्वर्य प्राप्त करेंगे और भयंकर ज्वरादि रोगों से छूट जायेंगे ।

स्थावरं जंगमंचापि कृत्रिमं चापि यद्विषम्।
एतत्करस्पर्शनेन सद्यएव विनश्यति ।।
चिरायुष्यं समासाद्य भुंक्तेभोगांश्च दुर्लभान् ।
एकाहि व्द्याहिकादंश्च ज्वरानपि सुदारुणान् ।।

चौपाई २६

संकट ते हनुमान छुडावै
मन क्रम बचन ध्यान जोलावै ।।

अर्थ : जो = जो, मन = मनसा, बचन = वाचा, क्रम = कर्मणा, हनुमान = श्री हनुमान जी का, ध्यान लावै = ध्यान करेंगे (उन्हें आंजनेय) संकट ते = संकटों से, छुडावे = छुडायेंगे ।

भाव : जो लोग मनसा वाचा कर्मणा श्री हनुमान जी का ध्यान करेंगे, उनको वे सभी संकटों से छुडायेंगे ।

व्याख्या : संकट ते हनुमान छुडावै –श्री हनुमान जी दारुण दुःखो, दारुण उपद्रवों, भयंकर रोगों से रक्षा करने को सदैव तैयार रहते हैं, लेकिन जो लोग चोरी करते है, व्यभिचार करते हैं, हिंसा करते हैं, ऐसे दुष्टों को श्री हनुमान जी कभी क्षमा नही करते । बिना भक्ति भाव के संकट के आने पर जो लोग "हमारी रक्षा करो" कहते हैं ऐसे लोगों की रक्षा करने को हनुमान जी तैयार नही रहते । लेकिन जो लोग मनसे, वचन से, कर्म से उनका स्मरण करते हैं, ध्यान करते ही उनकी पुकार सुनते ही तुरंत दौड आयेंगे और उनको संकटों से छुडायेंगे । इस कारण उनका नाम "संकट मोचन हनुमान" प्रसिध्द है ।

मन क्रम वचन ध्यान जो लावै – मन से वचन से कर्म से जो उपासना की जाती है वही सच्ची उपासना है । मन से ध्यान करें, वाणी से प्रार्थना करें, पंचोपचार षोडशोपचार आदि पूजा के कार्य कर्म कहेजाते हैं । इस प्रकार मन वचन कर्म तीनों से एक होकर आंजनेय की उपासना करने वालों पर वे तुरंत कृपा कर सब संकटों से छुडाते हैं ।

चौपाई २७

सब पर राम तपस्वी राजा
तिनके काज सकल तुम साजा

अर्थ : सब पर = सब से बडे, राम = श्री राम, तपस्वी = तप करने वाले के, राजा = राजा हैं, तिनके = उनके, सकल = सभी, काज = कामों को, तुम = तुम, साजा = संभालते रहते हो ।

भाव : श्री रामचंद्र जी सभी राजाओं के मुकुट मणि के समान हैं । तप करने वालों के राजा के समान है । उनके सभी कामों को हे आंजनेय! तुम अच्छी तरह से संभालते रहते हो ।

व्याख्या : सब पर राम तपस्वी राजा = श्री राम सर्वेश्वर है, परमात्मा हैं और सभी तप करने वालों के राजा है । जब श्री रामचंद्र जी वनवास के लिये गयेथे, तब वहां पर राक्षसों से संत्रस्त महर्षियों से वे बोले–

निसिचर हीन करउ महि भुज उठाइ पन कीन्ह

रा.च.मा. (३–९)

श्री रामचंद्रजी ने अपनी भुजा उठाकर प्रतिज्ञा की कि मैं पृथ्वी को निसिचर हीन करके रहूंगा । इस प्रकार से श्री राम ने राक्षसों का संहार कर तप करने वालों की हर तरह से रक्षा करने से वे तपस्वियों के राजा हुए । कारण जो रक्षक हैं वही राजा होते हैं ।

तिनके काज सकल तुम साजा – श्री राम ने उपर्युक्त प्रकार से प्रतिज्ञा तो की पर मानव रूप धारी अकेले श्री राम से यह काम संभव न होने से उन्हें आंजनेय की मदद् की जरूरत पड़ी । सुग्रीव से मैत्री, सीतान्वेषण, लंका दहन, लक्ष्मण की प्राण रक्षा, राम रावण युध्द में अनवरत श्री राम के रक्षक सेवक के रूप में सदा रहते हुए आंजनेय ने श्री राम के सभी कामों को संभाला । तुलसीदास जी ने अपनी कवितावली में यों लिखा है –

रामहूकी बिगडी तैही संभारिलई है ।

भाव यह है कि श्री राम की लीला ओं का महत्व श्री आंजनेय से भी बढगया है । साजा माने सजावट करना, श्री रामायण में श्री हनुमान जी का चरित्र बहुत ही भव्य है । उस चरित्र की माला में श्री आंजनेय एक रत्न तुल्य है । "रामायण महामाला रत्नम् "

महर्षि वाल्मीकि ने श्री रामायण में सभी कांडों का नाम करण संदर्भ की विशेषता के अनुसार किया पर जिस कांड में श्री हनुमानजी का चरित्र है उसका नाम सुंदर कांड रखा । इस कांड में श्री हनुमानजी अशोक वन में शिंशुपा वृक्ष पर से सीता माता को सांत्वना प्रदान करने हेतु श्री राम की कथा संक्षेप में आरंभ से सुनाते हैं। बाद को समुद्र के इस पार आकर अपने महत्कार्य को श्री जांबवान को सुनाते हैं। इस प्रकार सुंदर कांड में श्री राम की कथा दो बार गाई गई है । Repitition इस का पाठ संपूर्ण रामायण के पाठ के समान माना जाता है । यह कांड श्री रामायण महा काव्य के प्राण है, जीवन है और हृदय है श्री राम जी से बते करना, श्री सीता माता को सुनाना, फिर से सीता माता के समाचार को श्री राम जी को सुनाना, रावण से श्री राम जी की महानता का वर्णन करना आदि घटनाओं में श्री राम जी की लीलाओं को आंजनेय ने ही महत्व प्रदान किया। इसी से–

सुंदरे सुंदरो रामः, सुंदरे सुंदरी कथा
सुंदरे सुंदरी सीता, सुंदरे सुंदरं वनम् ।
सुंदरे सुंदरं काव्यं, सुंदरे सुंदरः कपिः
सुंदरे सुंदरं मंत्रं, सुंदरे किं न सुंदरम् ।।

इस सुंदर कांड के सुंदर हेने मे सुंदर कपि का होना ही प्रसिध्द कारण है । श्री रामायण जी में श्री रामजी की लीलाओं को महत्व प्रदान करने वाले तो एकमात्र श्री आंजनेय ही हैं ।

चौपाई–२८

और मनोरथ जो कोइ लावै।
सोई अमित जीवन फल पावै।।

अर्थ : और मनोरथ = विभिन्न मनोरथों को ; जो कोई = जो कोई, लावै = लेकर (श्री हनुमान जी के पास) आयेगा, सोई = वह, अमित = अनंत, जीवन फल = जीवन के फल को, पावै = पावेगा ।

भाव : जो लोग जिस –जिस कामना को लेकर श्री हनुमानजी के दर्शन करते हैं उनकी वे कामनाएं पूरी हो जाती है और अनंत जीवन फल की प्राप्ति भी होगी।

व्याख्या : और मनोरथ = भक्त लोग आंजनेय के पास भक्ति के अतिरिक्त पुत्र पौत्र, कार्य की सफलता, कार्य की विजय आदि की अभिलाषाओं को लेकर आने पर भी वे उनकी उन लौकिक अभिलाषाओं को पूरा कर ही देते हैं। साथ –साथ पारलौकिक मुक्ति भी प्रदान करते हैं । जीवन का फल तो यही है न। इसी से तुलसीदासजी ने यों कहा है –

सियराम स्वरूप अगाध अनूप, विलोचन मीनन काजल हैं।
कृति राम कथा, मुखराम कोनाम, हिये पुनि रामहि को थल है।
मति रामहि सो, गति रामहि सो, रति राम सो, रामहि को बल है
सब की न कहे "तुलसी" के मते, इतनो जग जीवन को फल है।

– कवितावली– उत्तर कांड – ३४

तुलसी के विचार से तो संसार में जीने का फल कुल इतना ही है कि राम और जानकी का अनुपम सौंदर्य नेत्ररूपी मछलियों के लिये अगाध जल बना रहे (नेत्रों की राम और जानकी रूप निहारते रहने का आनंद मिलता रहे) कानों से राम की कथा, मुख में राम का नाम और हृदय में राम का ही वास हो । बुद्धि भी राम में ही लगी हुई हो, गति (मुक्ति) भी राम के ही हाथों होने वाली हो, राम से ही प्रीति जुड़ी हुई हो और बल भी राम का ही हो ।

श्री हनुमान जी के पास मात्र लौकिक कामना ओं के साथ आने पर भी उनको पूरा करते हुए अंत में श्री राम सायुज्य पद या मोक्ष तक बिना मांगे ही प्रदान करते हैं । ये करूणा निधान है न।

सोई अमित : इसे इस प्रकार से समझ सकते है। जो भगत अपने मनोरथ(मन रूपी रथ को) रिक्त रूप में ले जाकर श्री हनुमान जी के सामने रखेगा, उसे श्री हनुमानजी अनेक फलों से भर देंगे। वह भगत अपने मनोरथों को पाकर अनेक जन्मों में कल्पांतर तक उन फलों के रस को (भक्ति रस) आस्वादन करता रहेगा। उन फलों के रस का अंत तो कभी होगा ही नहीं ।

जीवन फल : का अर्थ मोक्ष से भी है पर भक्तों की मुक्ति भगवान के समीप सेवा करते रहने में ही है। दास के रूप में रहने में ही है। वही भक्तों का एक मात्र अभीष्ट है। इसे ही "विलक्षण मोक्ष" कहा करते हैं ॥

चौपाई– २९

चारो जुग परताप तुम्हारा ।
है परसिद्ध जगत उजियारा ॥

अर्थ : तुम्हारा = तुम्हारा, परताप = प्रताप, चारो जुग = चारो युगों में, प्रसिद्ध है = सुप्रसिद्ध है, (तुम्हारी कीर्ति) जग = सारे जगत में ; उजियारा = प्रकाशमान है।

भाव : हे आंजनेय! तुम्हारा महान् प्रताप चारों युगों में सुप्रसिद्ध है । यह सारा जगत तुम्हारी कीर्ति की कांति से प्रकाशमान है ।

व्याख्या : चारों = जुग, कृत, त्रेता, द्वापर, कलियुग इन चारों युगों में श्री हनुमान जी की महिमा चिर स्थायी रहती है । ये चारों युग क्रम से आते रहते हैं। ऐसे युग हजार बीतने पर प्रलय होता है। ऐसे कई प्रलयों के बाद ब्रह्माजी की आयु पूरी हो जाती है। तब ब्रह्माजी अपने सृजन कार्य का श्रीगणेश करते हैं। श्री रामजी की इच्छा पर हनुमानजी उनकी मुद्रिका ले आने ब्रह्मलोक गये। ब्रह्माजी ने पहले मुद्रिका नहीं दी तो हनुमानजी ने कुपित होकर अपना विराट रूप दिखाया तो ब्रह्माजी डर गये और मुद्रिका दे दी । हनुमान जी ने उस मुद्रिका को श्री सीताराम जी को देकर संतुष्ट किया और अपनी यह इच्छा प्रकट की कि वैसे ब्रह्मलोक उन्हें बहुत पसंद आया और आनंद भी मिला पर ब्रह्माजी के सृजन कार्य में सुधार करना चाहता हूं । इस कारण श्री राम जी ने हनुमानजी को ब्रह्मलोक का शासक बनाया और वर भी दिया कि प्रतिकल्प में एक–एक अंश ब्रह्माजी का प्राप्त करते हुए भावी कल्पों में वे ब्रह्माजी बनेंगे।

इसी से श्री हनुमत् स्तोत्र में "भविष्यत् ब्रह्मणे नमः" याने भविष्य में लोकाधिपति बनने वाले को नमस्कार कहा गया है । इस प्रकार चारों युगों में ही नहीं कल्प कल्पांतरों में भी श्री हनुमानजी का प्रताप देदीप्यमान होगा ।

ब्रह्माजी की जिंदगी के सौ वर्षों को "पर" कहते हैं । उसका आधा परार्थ

है । इस समय ब्रह्माजी की आयु आधी खतम हो चुकी है । उनकी पूरी आयु सात कल्पतक की है । उनमें से तीन कल्पबीत गये हैं । चौथा चल रहा है । हजार चतुर्थुग ब्रह्माजी का एक दिन है (४,३२,००,००,०००) दूसरे चतुर्युग उनकी एक रात है याने (८,६४,००,००,०००) ऐसे ३६५ दिन उनका एक साल है। ब्रह्माजी की उम्र इस हिसाब से सौ साल की है। यह जगत उतने ही साल रहेगा। ब्रह्माजी के दिन में १४ मन्वंतर हैं । एक – एक मन्वंतर के एक एक शासक हैं। आजकल सातवें मनु का शासन चल रहा है। इसी सातवें मनु सूर्यवंश के प्रथम मनु है। बह्माजी की आयु बारह मासकी है। ऐसे एक मास मे तीस कल्प रहते हैं । एक कल्प याने २८ मनुओं का समय है ।

"है पर सिद्ध जगत उजियारा" : यह बात सच्ची है कि सारे जगत को श्री हनुमान जी जगमगाते रहते हैं अर्थात् जगत को उज्वल रखते हैं।

चारों जुग परताप तुम्हारा : इसे दूसरे ढंग से भी यों समझ सकते हैं। श्री हनुमान जी का प्रताप चारों भाइयों के साथ सारे जगत में प्रकाशमान हैं । "चारों जुग" याने श्री राम लक्ष्मण भरत शत्रुघ्न के साथ । युग का अर्थ दो और साथ भी है। श्री रामचंद्रजी का प्रताप (चारों भाइयों के साथ) जैसे सारे जगत में प्रकाश मान है वैसे ही श्री हनुमान जी का प्रताप भी सारे जगत में प्रकाशमान है। आंजनेय को पहले भरत के समान बता ही चुके हैं। बाद को उन चारों के साथ पांचवें भाई के समान बताया गया है। तब जाकर श्री राम पंचायतन पूरा होता है।

श्री राम चतुष्टय में श्री सीताराम के साथ केवल लक्ष्मण और हनुमान को स्थान दिया गया है। भरत और शत्रुघ्न को स्थान नहीं मिला है। वास्तव में यह अंतर्भाव है। अंतर्भाव से मतलब एक वस्तु का दूसरी वस्तु में मिल जाना है। लक्ष्मण में शत्रुघ्न को, हनुमान में भरत को समाविष्ट किया गया है। लक्ष्मण शत्रुघ्न स्वरूप मे एक हैं "लखन सत्रुसूदन एकै रूपा" लक्ष्मण के रहते शत्रुघ्न नहीं बोलते। श्री हनुमानजी भरत एक है । "तुम मम प्रिय भरतहिं सम भाई" श्री हनुमान के रहते भरत को कुछ भी नहीं" करना पड़ता । इस प्रकार चारों भाइयों के साथ श्री हनुमानजी का प्रताप भी सारे जगत को देदीप्यमान रखने में समर्थ है।

श्री राम लक्ष्मण यशोध्वज दंडरूपम्
रामायणोपवन–पावन–कल्पवृक्षम्
सुग्रीव सैन्य–गण–तारक– चन्द्र तुल्यम् ।
भूयों z जनीनयननंदन मानतो z स्मि ।।

श्री राम लक्षमण के यशोध्वज रूणी दंड को श्री रामायण जी के उद्यानवन में स्थित कल्पवृक्षको सुग्रीव वानर सैन्य तारागण में स्थित चंद्रमा को अंजनी देवी की आंखों को आनंद प्रदान करने वाले श्री हनुमानजी को नमस्कार करता हूं ।

चौपाई– ३०

साधु संत के तुम रखवारे ।
असुर निकंदन राम दुलारे ॥

अर्थ : साधु = साधना करने वाले महात्माओं की, संत के – अच्छी तरह से तप करने वालों की, तुम= तुम, रखवारे = हर तरह से रक्षा करते रहते हो, असुर=दुष्टों का, निकंदन = नाश करते रहते हो और राम – श्री रामचंन्द्र जी के, दुलारे= अत्यंत प्यारे हो ।

भाव : आंजनेय ! –तुम सदा साथु और संतों की रक्षा करते रहते हो, दुष्टों का नाश करते रहते हो और श्री रामजी के अत्यंत प्यारे हो।

व्याख्या : साधुसंत – श्री रामचंन्द्रजी ने अयोध्या नगर से स्वधाम पधारते समय आंजनेय से कहा – इस पृथ्वी पर साधु संतो की रक्षा करने के लिये अपने दिव्य रूप से रहो । मुझे सदैव उन लोगों की चिंता बनी रहती है। मेरे भक्तों को कोई सतायेगा, तो उनको दंड़ दे देना । तब से आंजनेय सदाजागते रहते हैं। पुकारते ही प्रकट होकर भक्तों की रक्षा करते रहते हैं । इसी से उनको **"पुकारते ही प्रकट होने वाले देवता कहते हैं।"**

राम दुलारे – श्री राम ने आंजनेय को सदा पुत्र रूप में देखा । पुत्र के प्रति पिता को वात्सल्य भाव रहता ही है । हनुमान जी की हर बात को श्री राम मानते थे। अगर हमें कोई काम श्री राम से कराना है तो श्री हनुमान जी से प्रर्थाना करने से वे श्री रामचंन्द्र जी से कहकर पूराकरा देते हैं। आंजनेय की बात श्री राम जी कभी नहीं टालते।

साधुसंत के तुम रखवारे– दुलारे – इसे यों भी समझ सकते हैं दुष्ट संहारक श्री राम के प्रिय भक्तों की आंजनेय सदा रक्षा करते रहते हैं। राम दुलारे माने श्री राम के प्रिय भक्तों की रक्षा करने में हनुमान जी सदा सावधान रहते हैं।

असुर निकंदन राम दुलारे – साधु संत के तुम रख वारे हो इस प्रकार श्री राम जी साधुसंतों की (जनहि राम करि मानत मोरो) रक्षा करते हुए कपट साधुओं को (वंचक भगत कहाइ राम के, किंकर कंचन कोह काम के) कालनेमि जैसे कपट साधुओं को वे दंड देते हैं याने राम भक्तो के अतिरित्त जो भी कपट साधु है उनको वे दंड देते है । साधु संत के तुम रखवारे – इस का एक और रहस्य है। २९ वीं चौपाई में "**राम दुआरे तुम रखवारे**" कहा गया है । यहां पर साधुसंतों के तुम रखवारें बताया गया है। समस्त जगत के जीवों के लिये सांधुसंत जन ही रामद्वार है। रामद्वार के बंदहो जाने पर श्री राम के दर्शन नहीं होते । रामद्वार स्वरूप साधु संतों की रक्षा करते हुए भी सभी राम भक्तों को श्री राम जी के दर्शन श्री आंजनेय सुगमता से कराते हैं।

चौपाई – ३१

अष्ट सिध्दि नौनिधि के दाता ।
अस बर दीन जानकी माता ॥

अर्थ : अष्ट सिध्दि = अष्ट सिध्दियों को, नौनिधि के = नव निधियों के, दाता = देने वालेहो, अस बर = ऐसा वर, जानकी माता = माता जानकी ने, दीन = दिया

भाव : अष्ट सिध्दियों और नवनिधियों को प्रदान की शक्ति का वरदान माता जानकी ने तुम्हें दिया।

व्याख्या : अष्ट सिध्दि नौ निधि के दाता – कृत, त्रैता, व्दापर युगों में तो बहुत बड़े प्रयास करने पर भी, कठोर योगाभ्यास करने पर भी अष्ट सिद्धियों की प्राप्ति नहीं होती थी । तब फिर इस कलि युग में तो और भी कठिन है ।

अष्ट सिद्धियां –

अणिमा महिमाचैव, गरिमा लघिमातथा ।
प्राप्तिः प्राकाम्य मीशत्वं, वशित्वं चाष्ट सिद्धयः॥

अमर कोश १–१–३४(१७–१८)

1. अणिमा = क्षण भरमें अत्यंत सूक्ष्म रूप धारण करने की शक्ति।

2. महिमा = विशाल और उन्नत रूप धारण करने की शक्ति।

3. गरिमा = पर्वतों जैसी भारस्वरूप बनने की शक्ति ।

4. लघिमा = हल्के होकर हवा में उड़ने की शक्ति ।

5. प्राप्ति = अभीष्ट वस्तु को प्राप्त करने की शक्ति ।
क्षणभर में विराट रूप धारण करलेने की शक्ति

6. प्राकाम्य = चाहते ही क्षण भर में अभीष्ट पा लेने की शक्ति ।

8. ईशित्व = सर्वोपरि या सर्वाधिकारी महा शक्ति।

9. वशित्व = सभी लोकों, सभी इंद्रियों को जीत लेने की शक्ति ।

ये अष्ट सिद्धियां बिना योगाभ्यास के श्री हनुमान जी की कृपा से मिल जाती है।

नौनिधि – नव निधियां – वे इस प्रकार हैं–

महापद्मश्च, पद्मश्च शंखो मकर कच्छपौ ।
मुकुंद कुंद नीलाश्च खर्वश्च निधयो नव ।।

महापद्म, पद्म, शंख, मकर, कच्छप, मुकुंद, कुंद, नील, और खर्व ये नव निधियां है। ये सब के सब बिना योगाभ्यास के श्री हनुमान जी की उपासना से आसानी से मिल जाती हैं।

असबर दीन जानकी माता – याने माता जानकी ने यह वर श्री आंजनेय को दिया । इसका दूसरा भाव यों है कि सकल सिध्दियों और नव निधियों का वर देने वाले श्री रामचंन्द्र जी ने आशीर्वाद दिया कि श्री जानकी जी आंजनेय की माता बन जायं ।

अष्ट सिद्धि नवनिधि के दाता (श्री राम)
जानकी, माता, असवरदीन
सुन सुत तव उपकार को–बदलो दियो न जात ।
यहै देहुवर मुदित मन, होहि जानकी मात ।।

ह.चा.हिंदी भाष्य पृ. ६४

आंजनेय ! तुमने जो उपकार किया है उस का प्रत्युपकार मैं कुछ भी नहीं कर सकता। सहर्ष मैं यही एक वर देता हूं देवी जानकी तुम्हारी माता बने।

इस प्रकार श्री हनुमानजी माता जानकी के और श्री राम के सुत होने से श्री राम के पास जो अष्ट सिद्धियां, नौ निधियां और अन्य सभी सिध्दियां भी उन्हें मिल गयी। उन्हें किसी वस्तु की कमी नहीं । सब को सब प्रकार की संपत्तियां वे प्राप्त कराते हैं ।

ब्रह्माजी ने वर दिया कि शैशव में ही श्री हनुमान जी को अणिमादि अष्ट सिद्धियां प्राप्त होंगी। श्री मद् वाल्मीकि रामायण और श्री तुलसी के राम चरितमानस के सुंदर कांड के सुरसा वृत्तांत, छाया ग्राहिणी, सिंहिका संहार, लंका प्रवेश आदि घटनाओं को देखने से स्पष्ट होता है कि सीता माता के दर्शन के पहले– हनुमानजी अपने पास स्थित अणिमादि सिद्धियों में से अणिमा–महिमा आदि विद्याओं का प्रदर्शन किया था । इस चालीसा की ९, १० चौपाइयों में सूक्ष्म रूप– असुर संहारे जैसे शब्द प्रयोगों से भी यह स्पष्ट होजाता है कि ऐसी अष्ट सिद्धियों और नौ निधियों को दूसरो को भी प्रदान करने की शक्ति माता जानकी ने आंजनेय को दी है ।

– पराशर संहिता तीसरा पटल

माता जानकी के सुत होने से और श्री राम के सुत होने से श्री राम के पासजो अष्ट सिद्धियां और नव निधियां है वे आंजनेय को प्राप्त हुई हैं । भाव यह है कि आंजनेय भी अष्ट सिद्धि और नवनिधि के दाता बन गये। पिता की संपत्ति के मालिक तो पुत्र होता ही है न ।

चौपाई – ३२

राम रसायन तुम्हरे पासा ।
सदा रहो रघुपति के दासा ॥

अर्थ : राम रसायन = राम नाम का रसायन, तुम्हारे पासा = तुम्हारे पास है (तुम) रघुपति के = भगवान श्री राम चन्द्र जी के, सदा = हमेशा, दासा रहो′ = दास बनकर रहोगे।

भाव : श्री राम नाम का रसायन तुम्हारे पास है । तुम सदा भगवान श्री राम चन्द्रजी के दास बन कर रहोगे ।

व्याख्या : राम रसायन – आंजनेय के पास राम नाम का रसायन है । "यज्जरा व्याधि विध्वंसि भेषजं तद्रसायनम्" वृध्दावस्था अन्य व्याधियों को दूर कर आयुरारोग्य प्रदान करने वाली औषधि को रसायन कहते हैं। इस रसायन के सेवन से दीर्घायु, स्मरणशक्ति, बुद्धिबल, आरोग्य, यौवन, तेज, सुवर्ण, सुंदर कंठस्वर शरीर और इंद्रियों की पटुता आदि मिलने का उल्लेख चरक संहिता के चिकित्सा स्थान के पहले अध्याय के पहले पाद के सातवें और आठवें श्लोकों में हुआ है। ७८,७९,८० श्लोकों में बताया गया है कि देवताओं के लिये अमृत जैसा है नागों के लिये सुधा जैसी है वैसा ही महर्षियों और मानवों के लिये यह रसायन है। इसका विधिवत सेवन करके महर्षि लोग बिना वार्धक्य, दुर्बलता, रोग और मृत्यु के कई हजार साल तक जीवित रहते रहे और इसके सेवन से शाश्क्त ब्रह्मलोक प्राप्ति मोक्ष तक प्राप्त कर सके हैं ।

दीर्धमायुः स्मृतिं मेधामारोग्यं तरुणं वयः ।
प्रभावर्ण स्वरौदार्यं देहेंद्रिय बलंपरम् ॥
वाक्सिद्धिं प्रणतिं कांतिं लभते नारसायनात् ।
लाभोपायेहि शस्तानां रसादीनां रसायनं।

यथा z मरणाममृतं यथा भोगवतां सुधा ।

तथा भवन्महर्षीणां रसायन विधिः पुरा ।।

नजरां नच दौर्बल्यं – नातुर्यं निधनं नच ।

जग्मुर्वर्ष सहस्राणि – रसायन : पराः पुरा ।।

नकेवलं दीर्घ मिहायुरश्नुते । रसायनं यो विधिवन्निषेवते ।

गतिं स देवर्षि निषेवितां शुभां । प्रपद्यते ब्रह्मतथेति चाक्षयम्

रस+अयनम् = रसायनम्

अयनम् याने भंडार या खजाना है। रस याने प्रेम याने भक्ति । भगवान श्री राम जी भक्ति रस के परब्रह्म हैं । ऐसे श्री रामचंन्द्र की रसमय भक्ति श्री आंजनेय के पास है। इस भक्ति रस को अपने मन पसंद सेवकों को बांटते रहते हैं। रसायन शब्द का अर्थ रसवाद (Alchemy) भी है । लोहा तांबा जैसे निम्न धातुओं के मात्र स्पर्श से सोना जैसे उत्तम धातु के रूप में बदलने के ढंग को रसवाद (Alchemy) कहते हैं । राम रसायन सेवक हनुमान जी की सेवा करने पर श्री हनुमानजी के कृपापात्र बनकर राम रसायन के गुण से क्षणभर में क्षुद्र बुद्धि वाले अज्ञानी लोग भी ज्ञानी बन जाते हैं।

सदा रहो रघुपति के दासा – श्री रामचंन्द्र के सेवकों में आंजनेय सर्वाधिक सन्मानित हैं। आंजनेय से बढकर प्रिय सेवक श्री राम के अन्य कोई नहीं। वे सदा श्री रामजी के सेवक और रामजी के दास है।

जो लोग ऐसे रसायन केभंडार सदा श्री राम के दास के रूप में रहनेवाले आंजनेय की आराधना करते हैं। वे लोग बिना किसी व्याधि केया संपूर्ण आयु के साथ सुखी रहकर अंत में मोक्ष तक प्राप्त कर लेते हैं ।

चौपाई – ३३

तुम्हरे भजन राम कोपावै ।
जनम जनम के दुख बिसरावै ।।

अर्थ : तुम्हरे = तुम्हारे, भजन = भजन से, राम को = श्री राम जी को, पावै = पाते हैं, (उससे) जनम जनम के = कई जन्मों के दुख, बिसरावै = भूल जाते हैं ।

भाव : जो लोग तुम्हारे भजन करते हैं, वे लोग श्री राम जी कृपा प्राप्त कर जन्म जन्मांतरों के दुखों से मुक्त हो जाते हैं या कई जन्मों के दुखों को सदा के लिये भूल जाते हैं ।

व्याख्या : तुम्हरे भजन राम कोपावै – श्री हनुमान जी की आराधना करनेसे श्री रामचंद्र जी के दर्शन हो जाते हैं । आराधना हनुमान जी की और बिना कामना के श्री राम जी के दर्शन । वाह वाह – श्री हनुमान जी की सेवा का कैसा प्रभाव ? श्री हनुमान जी की सेवा करने से वे प्रसन्न होकर श्री राम जी के दर्शन कराते हैं। साक्षात् अपनी सेवा करने वाले से बढकर श्री हनुमान जी की सेवा करने वाले पर श्री रामचंद्र जी बहुत जल्दी प्रसन्न हो जाते हैं । श्री तुलसीदास जी को श्री रामजी के दर्शन कराने का श्रेय श्री हनुमान को ही है । इस कारण जो लोग निष्काम भाव से आंजनेय की आराधना करते हैं उन्हें बहुत आसानी से श्री रामचंद्र जी का साक्षात्कार हो जाता है ।

भजन याने सेवा । यह दो प्रकार की है ।

1) सकाम सेवा 2) निष्काम सेवा

सकाम सेवा से अभीप्सित कामनाएं पूरी होजाती हैं । लेकिन राम की कृपा नहीं मिलती । जो लोग निष्काम भाव से श्री हनुमान जी की आराधना करते हैं उनको श्री आंजनेय श्री राम के दर्शन कराते हैं । धर्म अर्थ काम मोक्ष इन चारों पुरुषार्थों में जो मोक्ष याने प्रभुप्राप्ति है वह मात्र निष्काम सेवा भाव से ही सुसाध्य है । राम चरित मानस में तुलसी दास ने इस प्रकार कहा है –

औरो एक गुपुत मत सबहि कहौ कर जोरि ।
शंकर भजन बिना नर भगति नपावइ मोरि ।।

रा. च. मा. : ७–४५

मैं सबसे हाथजोड कर एक और रहस्य की बात बताए देता हूं कि जब तक कोई शंकर का भजन नहीं करता तब तक मेरी भक्ति नहीं मिल सकती । राम की भक्ति नहीं मिलती ।

जनम जनम के दुख बिसरावै – कई जन्मों के पाप का फल ही दुःख है । उसे भोगना ही पडता है ।

अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम् ।।

चाहे कर्म शुभ हो या अशुभ – उसे भोगना ही पडता है । लेकिन सच्ची भक्ति से हनुमान जी की सेवा करने वाले को श्री राम जी दर्शन देकर अंत में मोक्ष भी प्रदान करते हैं ।

सन्मुख होय जीव मेहि जबही ।
जन्म कोटि अघ नासौ तबही ।।

श्री राम ने कहा – कोई भी जीव मेरे सम्मुख आया कि उसके कई जन्मों के पाप दूर हो जाते हैं । पापों से ही दुखः होते हैं इस लिये हनुमान जी की सेवा करने से करोडों जन्मों के पाप दूर हो जायेंगे और अंत में श्री राम का साक्षात्कार भी होगा ।

मोहि सेवक सब प्रिय कोउ नाहीं

रा.च.मा. ७–२५–४

बिसरावै = भुला देना, श्री हनुमान जी की सेवा करने से दुःखों के भोगने की बात दूर, उन को याद भी नहीं आती । हनुमान जी की सेवा दुःखों को भुलवा देती है। हनुमान जी के सेवक को दुःख का नाम भी नही मालूम होता, मालूम होने पर भी उसे भूल जाता है । वह सदा ब्रह्मानंद में मग्न रहता है फिर उस के लिये दुःख ही कैसा ? इस कलियुग में यज्ञ, याग आदि का करना संभव नहीं । मंत्र की उपासना भी नहीं की जा सकती । इस कारण सरलता से कैवल्य प्राप्त करना चाहे तो हनुमान जी की सेवा के अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं । यही इस चौपाई का रहस्य है ।

चौपाई – ३४

अंतकाल रघुवर पुर जाई ।
जहां जन्म हरि भक्त कहाई ॥

अर्थ : (हनुमान जी के भक्त) अंत काल = मरने के बाद, रघुवर पुर = वैकुंठ, जाई = जायेंगे, जहां जन्म = जहां कहीं भी पैदा होंगे, हरिभक्त = भगवान के भक्त, कहाई = कहे जायेंगे ।

भाव : आंजनेय की आराधना भक्ति भाव से करने वाले मरने के बाद वैकुंठ जायेंगे । फिर यदि उनको कहीं जन्म लेना पडे तो भगवान के भक्त के रूप में प्रसिध्द होंगे ।

व्याखा : अंतकाल रघुबरपुर जाई – बृहत्संहिता में ऐसा वर्णन आया है कि जो लोग हनुमान जी की सेवा करते हैं वे मरने के बाद अपने इष्ट देव के पुर वैकुंठ जायेंगे । जहां पर श्री रामस्वरूप वासुदेव की सन्निधि में जहां पर हनुमान जी का नित्य निवास है । श्री रामस्वरूप वासुदेव याने श्री महा विष्णु है, उनका पुर याने वैकुंठ है । श्री महाविष्णु के पास श्री हनुमान जी शाश्वतदास होकर रहते हैं । श्री रघुवर पुर से मतलब श्री वैकुंठ ही है । भृगु प्रोक्त वैखानस यज्ञाधिकार के उत्सव पटल में श्री महा विष्णु के दिव्य वाहनों में हनुमान जी का वाहन तीसरा कहा गया है ।

अथ विष्णोः वाहनानि व्याख्यास्यामः ।
प्रथमे हनि हंसः, द्वितीये सिंहः, तृतीये ह्यांजनेयः ॥

इस कारण उनका वाहन भी सदा श्री विष्णु के समीप रहेगा । इसी से तुलसीदास जी ३२ वी चौपाई के "सदा रहो रघुपति के दासा" कहा हैं । श्री रामावतार में श्री हनुमान जी का सेवक रूप अल्प कालीन रहा है पर श्री महाविष्णु के समीप उनका सेवक रूप शाश्वत है और नित्य है ।

जहा जन्म हरि भक्त कहा ई – श्री हनुमान जी के भक्त मरने के बाद वैकुंठ जायेंगे। भाव यह है कि यदि किसी कारण वश उन्हें पुनर्जन्म लेनापडे तो वे विषय

लोलुप न बनकर सदा आंजनेय की सेवा करते हुए फिर से वैकुंठ जायेंगे ।

यहां पर हरि भक्त याने हनुमान जी के भक्त । हरि याने कपि–हनुमान । हरि भक्त तो हनुमान जी के भक्त हैं । हनुमान जी की आरती के अंत में है "हनुमान की आरती गावै बसि वैकुंठ परम पद पावे" अर्थात जो लोग हनुमान जी की आरती गायेंगे वे परम पद वैकुंठ अवश्य जायेंगे । इस से भी स्पष्ट है कि हरि भक्त याने हनुमान जी के भक्त ही हैं । इसी से श्री तुलसीदास जी ने इस चौपाई में विशेष रूप से कहा है कि हनुमानजी के भक्त मरने के बाद अपने इष्ट देव श्री हनुमान जी के रहने के स्थान रघुवर पुर याने वैकुंठ जायेंगे । चाहे जैसे भी हो हरि भक्त उस हरि के लोक को जायेंगे और वहां श्री हरि के पास सदा रहेंगे ।

अंत काल रघुवर पुरजाई जहां जन्मि हरि भक्त कहाई – इस का दूसरा भाव यह है कि हरि भक्त कहाई = हरि भक्त क्या कहते हैं, जहां जन्मि = हनुमान जी के भक्त जहां भी जन्म लेंगे उन की कृपा से, अंतकाल = अवसान काल में (सो) वे, रघुवर पुर = परम पवित्र अयोध्या नगर, जाई = पहुंचेंगे ।

अयोध्या नगर पहुंचने से भक्त रामधाम वैकुंठ पुर जाने के योग्य बनेंगे ।

कौनेहू जन्म अवध बस जोई ।
राम परायण सोपरि हो ई ।।

श्री हनुमान जी के भक्त जहां कहीं भी जन्म लेंगे पर हनुमान जी की कृपा से अंतिम क्षण में अयोध्या नगर पहुंचेंगे । बाद में वैकुंठ पहुंचेंगे । यही इस चौपाई का सार है– श्री राम ने स्वयं ही अपनी जन्म भूमि अयोध्या की बडी प्रशंसा की है ।

जन्मभूमि मम पुरी सुहावनी ।

चौपाई – ३५

और देवता चित्त न धरई ।
हनुमत सेइ सर्ब सुख करई ॥

अर्थ : और देवता = अन्य देवताओं को, चित = चित्त में, न धरई = धारण न कर के, (जो) हनुमत सेइ = श्री हनुमान जी का ध्यान करता है, (उसे हनुमान जी) सर्व सुख करई = सभी सुखों को प्रदान करेंगे ।

भाव : अन्य देवताओं को अपने चित्त में स्थान न देकर जो मात्र हनुमान जी का ध्यान करता है उसे श्री हनुमान जी सभी सुखों को प्रदान करेंगे ।

व्याख्या :

और देवता चित्त न धरई – चाहे तुम किसी भी देवता की आराधना करो उसके प्रति अनन्य निष्ठा और भक्ति होनी चाहिए याने अन्य किसी देवता का स्मरण भी नही करना चाहिये तभी उस देवता की कृपा प्राप्त होती है । श्री हनुमान जी की उपासना के विषय में यहीं विधान है । अन्य किसी देवता का ध्यान चित्त में न करके मात्र श्री हनुमान जी का स्मरण करें तो वे शीध्र प्रसन्न हो जाते हैं ।

भक्त माल में एक छोटी सी कथा है । क्षेम गोसाई नाम का भगत श्री हनुमान जी को भक्ति अत्यंत श्रध्दा के साथ करता था । श्री हनुमान जी उसकी निष्ठा की परीक्षा करने हेतु एक साधु के रूप में उसके पास आये और उसे एक सोने की भैरव की मूर्ति देकर "तुम भैरव की पूजा करो, वह तुम्हें दर्शन देगा । प्रतिदिन उस मूर्ति के हाथ पैर तोडकर उस सोने को बेचकर अपनी इच्छा पूरी करलो । फिर से उस मूर्ति के हाथ पैर आ जायेंगे । इस से तुम्हें बहुत फायदा होगा । तुम्हारी इच्छा पूरी होती रहेगी । तुम जिस हनुमान की पूजा कर रहे हो उससे तुम्हें क्या फायदा हुआ । इस प्रकार बोलने पर क्षेम गोसाई ने अपने मन में सोचा, यह साधु मुझे सोने का खिलौना दिखाकर प्रलोभन से अपने इष्ट देव के प्रति जो मेरी निष्ठा है उसे हटाना चाह रहा है । तुरंत आग बबूला होकर अपने पास से हटजाने के लिये

कहकर कई गालियां देता है । उस की निष्ठा से प्रभावित होकर तब आंजनेय ने निज रूप में प्रकट होकर वर मांगने को कहा तो गोसाई ने श्री राम के दर्शन कराने की इच्छा प्रकट की । श्री आंजनेय ने श्री राम जी के दर्शन कराया तो धनुर्बाण धारी श्री राम को देख कर वरदान के रूप में अपने को धनुर्बाण प्रदान करने की इच्छा प्रकट करता है । श्री राम के धनुर्बाण देने पर उस धनुर्बाण का आजीवन पूजन करके अंत में राम सायूज्य पाता है । ऐसी अनन्य निष्ठा होने से श्री हनुमान जी बहुत जल्दी प्रसन्न हो जाते हैं ।

हनुमत सेइ सर्व सुख करई – जब केवल हनुमान जी का भजन करने से ही धर्म अर्थ काम मोक्ष तक मिल जाते हैं तो दूसरे देवी देवताओं के भजन की क्या जरूरत है ? ये "मेरे" स्वामी अन्य देवी देवताओं से किसी बात मे कम हो तो दूसरे देवताओं की शरण लेनी चाहिए –

सुर दुर्लभ सुख कर जगमाहीं ।
अंत काल रघुपति पुर जाहीं ।।

चौपाई – ३६

संकट कटै मिटै सबपीरा ।
जो सुमिरै हनुमत बलबीरा ॥

अर्थ : जो = जो लोग, बलवीर = महा बलवान, महावीर, हनुमत = हनुमान जी का, सुमिरै = स्मरण करेंगे (उनके), सब = सभी संकट = संकट, कटै = दूर होजायेंगे, पीरा = बाधाएं, मिटै = मिट जायेंगी ।

भाव : जो लोग महा बलवान महावीर हनुमान जी का स्मरण करेंगे उनके सभी संकट दूर हो जायेंगे और सारी बाधाएं नष्ट हो जायेंगी ।

व्याख्या : संकट कटै = "ललाट लिखिता रेखा परिमाष्टुं नशक्यते"

कहते हैं कि ललाट पर लिखे गये विधिविधान को कोई नहीं बदल सकता । लेकिन शंकर जी के लिये तो सब संभव है । "भाबिउ मेट सके त्रिपुरारी" कहते हैं भविष्य में होने वाले कार्य को, विधि विधान को भी बदल देने की क्षमता मात्र त्रिपुरारि शंकर को ही है । श्री हनुमान जी साक्षात शंकर जी के अवतार होने से वे विधि के विधान को बदल देने में समर्थ हैं । इसलिये जिनके जीवन में संकट आजाने की संभावना हों वे लोग श्री हनुमान जी की शरण में जाएंतो वे उस करम की गति को मेट देंगे और हर तरह से उनकी रक्षा करेंगे ।

मिटै सबपीराः – सभी पीडाएं दूर हो जाती हैं । जो लोग श्री हनुमान जी की शरण में जाते हैं उन्हें पवन पुत्र भव बंधन से मुक्त कर श्री रामसायुज्य तक प्रदान करेंगे, मोक्ष प्रदान करेंगे ।

जो सुमिरै हनुमत बलबीरा : – श्री आंजनेय महा बलवान और महावीर है । जो लोग श्री आंजनेय के बल का और प्रताप का स्मरण करेंगे उनकी सभी विपत्ति दूर हो जायेगी । वे इस भव सागरसे आसानी से पार होकर अंत में मोक्ष प्राप्त कर सकेंगे ।

चौपाई – ३७

जै जै जै हनुमान गोसाई ।
कृपाकरहु गुरुदेव की नाई ।।

अर्थ : गोसाई = गोस्वामी (जितेंद्रिय सन्यासी) हनुमान = हे हनुमान जी ! (उन्हें) जै जै जै = तीन बार जय जय जय कार । गुरुदेव की = गुरुदेव की, नाई = तरह, कृपा करहु = कृपा करो ।

भाव : जितेंद्रिय हे आंजनेय – तुम्हारी जय जय जय हो । तुम मेरे शरीर मन और इंद्रियों के अधिपति हो । तुम मेरे गुरुदेव बन कर मुझ पर कृपा करो ।

व्याख्या : जै जै जै – यहाँ पर तीन बार जय शब्द का प्रयोग किया गया है । भूत भविष्य वर्तमान तीनों कालों में श्री आंजनेय की विजय होगी या ये तीनों प्रातः – मध्याह्न – संध्या समय को नियंत्रित करने वाले हैं । इस कारण तीन बार जय शब्द प्रयुक्त हुआ है ।

श्री हनुमान चालीसा के प्रारंभ में "जय हनुमान ज्ञान गुणसागर, जय कपीश तिहु लोक उजागर" कहकर दो बार जय शब्द प्रयुक्त हुआ है । यहां पर तीन बार प्रयुक्त हुआ है । इस प्रकार सारी चालीसा में जय शब्द पांच बार आया है । पांच की संख्या हनुमान जी को बहुत प्रिय है । श्री हनुमान जी के नौ अवतार बताये जाते हैं। वे हैं प्रसन्न, वीरांजनेय, विंशतिभुज, पंचमुख, अष्टादश भुज, सुवर्चला, चतुर्भुज, द्वात्रिंशत भुज और वानर । इनमें पंचमुख आंजनेय अवतार बहुत ही प्रसिद्ध हैं। इनके पांचमुखों में पूर्व में वानर, दक्षिण में नरसिंह, पश्चिम में गरूड़, उत्तर में वाराह, ऊर्ध्व में हयग्रीव रूप हैं। इनके ध्यान का श्लोक इस प्रकार है–

वंदेवानर नारसिंह खगराट्क्रोडाश्व वक्त्रान्वितम्
नाना लंकरणं त्रिपंचनयनं देदीप्यामानं रूचा ।।
हस्ताब्जैरसि खेट पुस्तक सुधाकुंभांकुशाद्रीन् हलं।
खट्वांगं फणिभूरूहं दशभुजं सर्वारि गर्वापहम् ।।

श्री पंचमुख हनुमान्

वंदेवानर नारसिंह खगराट्क्रोडाश्व वक्त्रान्वितम्
नानालंकरणं त्रिपंचनयनं देदीप्यमानं रूचा ॥
हस्ताब्जैरसि खेट पुस्तक सुधाकुंभांकुशाद्रीन् हलं।
खट्वांगं फणिभूरूहं दशभुजं सर्वारि गर्वापहम् ॥

इस पंचमुख हनुमान के बारे में एक कथा प्रचलित है –

रावण वध के अनंतर राम राज्य में श्री राम की लोकप्रियता से कुपित होकर रावण के आत्मीयबंधु शतकंठ रावण ने ब्रह्माजी को प्रसन्न करने के लिये तप कर देव, असुर, किन्नर आदि किसी से मृत्यु नहोने का वर पाया। लेकिन स्त्रियों को अबला समझकर उनको छोड़ दिया। उसने सेना के साथ अयोध्या नगर पर चढाई की। श्री राम ने विभीषण का स्मरण किया तो विभीषण आकर बोल– यह शतकंठ अजेय है । यह केवल स्त्री के हाथ से ही मर सकता है और किसी से नहीं। तब राम ने सीता से कहा –यह शतकंठ मायावी है। तुम्हारे हाथों इस की मृत्यु होना लिखा है । तब सीता युद्ध करने को तैयार हुई । हनुमान सीता माता को अपने बाहुओं के ऊपर बिठाकर युद्ध क्षेत्र मे पहुंचे। सीता और शतकंठ के बीच घोर युद्ध होने लगा । उसने अग्नि, वायु, नाग, वरूण आदि अस्त्रों का प्रयोग कियातो सीता माता ने उन सब को तितर बितर कर दिया तो वह अदृश्य होकर सौफण वाले सर्प के रूप में प्रकट हुआं, तब हनुमान ने क्रम से गरूड़, शूकर, अश्व, नारसिंह और वानर रूपों को धारण कर शिवावतार होने से पंच मुख वाले बनकर हर मुख में तीन नेत्र और दस हाथों में दस अस्त्रलेकर उसका सामना किया, तब भी बहुत डटा रहा तो सीता माता ने प्रतिज्ञा कर –अगर मैं श्री राम की अनन्य पतिब्रता पत्नी हूं तो मेरे इस अस्त्रसे शतकंठ का वध हो जाय– कहकर छोड़दिया, तब उसका अंत हो गया। तब देवताओं ने माता सीता के साथ पंचमुख हनुमान की इस प्रकार स्तुति की है।

प.सं.४–५ पटल

पंच वक्त्रं महा भीमं त्रिपंच नयनैर्युतम् ।
दशभिर्बाहु भिर्युक्तं सर्व कामार्थ सिध्दिदम् ॥
पूर्वे तु वानरं वक्त्रं, हृदयं सूर्य सन्निभम् ।
दंष्ट्रा कराल वदनं भृकुटी कुटिलोद्भवम् ॥
अस्त्यैकं दक्षिणं वक्त्रं नारसिंहं महाद्भुतम् ।
अत्युग्रतेजोज्वलितं भीषणं भय नाशनम् ॥

पश्चिमे गारुडं वक्त्रं वज्र दंष्ट्र महाबलम् ।
सर्वरोग प्रशमनं विषरोग निवारणम् ॥
उत्तरे सूकरं वक्त्रं कृष्ण दीप्तनखोज्ज्वलम् ।
पाताले सिद्धिदं नृणां ज्वर रोगादि नाशनम् ॥
ऊर्ध्वं हयाननं घोरं दानवांतकरं परम् ।
येन वक्त्रेण विप्रेंद्र सर्व विद्या विनिर्ययुः ॥
एतत् पंचमुखं तस्य ध्यायतामभयंकरम् ।
खड्गं त्रिशूलं खट्वांगं पाशमंकुशपर्वतौ ॥
द्वौमुष्टि संगतौ मूर्ध्नि सायुधैः दशभिर्भुजैः ।
एतान्यायुध जालानि धारयंतं यजामहे ॥

कर्नूल जिले के तुंगभद्रा नदी के तट पर जो मंत्रालय नामक तीर्थ क्षेत्र हैं उस मे करीब ३०० साल से पहले जो राघवेंद्र स्वामी के नाम से अवतरित हुए वे श्री हनुमान और भीम के अवतार माने जाते हैं।

मंत्रालय से तीन मील दूर पर गणदाड़ नामक एक गांव है वहां पर एक पहाड़ है । वहां एक गुफा में हनुमान जी की मूर्ति है । वहां पर बैठकर हनुमान के मंत्र का जप करने से कामनाओं की पूर्ति हो जाती है, ऐसा लोगों का विश्वास है।

कर्नूल के मंत्रालय के उत्तराधि मठ मे एक ऐसा प्राचीन पेंटिंग है जिसमें यह दिखाया गया है कि प्राचीन युग में राघवेंद्र स्वामी हनुमान और भीम के अवतार के अतिरिक्त और कोई नहीं । उस पेंटिंग मे यह श्लोक लिखा हुआ हैं ।

प्रथमो हनुमान् नाम द्वितीयो भीमएवच ।
पूर्णप्रज्ञः तृतीयोस्तु भगवत् कार्यसाधकः ॥

हनुमान गोसाई – इस शरीर में मन के साथ ग्यारह इंद्रियां है – पांच ज्ञानेंद्रियां (चक्षु – श्रोत्र – जिह्वा – चर्म – नासिका) पांच कर्मेंद्रिय (वाक् – पाणि – पाद – वायु – उपस्थ) इस शरीर के आंजनेय इष्ट देवता हैं, इस कारण "मेरे

शरीर के मन के इंद्रियों के श्री आंजनेय स्वामी अधिनेता है" कहकर श्री गोस्वामी तुलसी दास जी ने आंजनेय के प्रति अपने अनन्य प्रेम और भक्ति भाव को प्रकट किया है । गोसाई याने इंद्रियों के अधिपति ।

कृपा करहु गरूदेव की नाई – तुलसीदास जी प्रार्थना करते हैं कि – हे आंजनेय जैसे गुरूदेव अपने शिष्यों पर कृपा करते हैं वैसे ही तुम मेरे ऊपर कृपा करो ।

"कर्ण धार सत्गुरु दृढ़नावा" गुरूदेव नाविक हैं, शिष्य के शरीर मन इंद्रियां नौका है (कर्णधार = नाविक) गुरूदेव अपने शिष्य को माया के बंधन से मुक्त कर भगवान की प्राप्ति कराते हैं ।

श्री तुलसीदास जी के रामचरित मानस में काकभु शुंडी जी की एक कथा है । उसने श्री गुरूदेव की आज्ञा का उल्लंधन करके अपमानित किया फिर भी गुरूदेव ने बिना कुपित हुए उस पर कृपा की । शिवजी ने शाप दिया तो प्रार्थना करके क्षमा मांगी और काकभु शुंडी ने इस प्रकार कहा –

एक सूल मोहि बिसरनकाऊ ।
गुरु कर कोमल सील सुभाऊ ॥

रा.च.मा. उ.का. १९–१

इस प्रकार अपने सभी अपराधों को श्री रामचंद्र जी से क्षमा कराकर अपने को भगवान की सन्निधि प्रदान करने के लिये श्री तुलसी दास जी श्री आंजनेय से प्रार्थना करते हैं ।

अपने भारतीय संप्रदाय में गुरु और ईश्वर एक समान कहे गये हैं । भगवान के समीप जिस कामना को लेकर जाते हैं उसे श्री गुरूदेव ही दे सकते हैं । परा भक्ति याने अनन्य भक्ति और निष्ठा गुरूदेव के प्रति जैसी रखते हैं वैसी ही निष्ठा और भक्ति श्री गुरूदेव के प्रति भी रखनी चाहिये । गुरूदेव मिलने पर भगवान की जरूरत पडती है । भगवान की भक्ति से भी बढकर गुरूदेव की भक्ति है –

शिवे रुष्टे गुरु स्त्राता गुरौ रुष्टे नकश्चन ।

शिव के रुष्ट होने पर गुरुदेव रक्षा करते हैं पर गुरुदेव के रुष्ट होने पर उसे कोई नहीं बचा सक्ता । कबीर ने भी कहा है –

" हरि रुठैतो ठौर है, गुरुरुठै तो नहीं ठौर "

भगवान की भक्ति के लिये गुरुदेव की भक्ति की अत्यंत आवश्यकता है । गुरुदेव ही हमें दुखों से दूर करेंगे और सुख शांति प्रदान करेंगे ।

गुरुदेव त्रिमूर्ति स्वरुप है । वे ही ब्रह्माजी विष्णु और महेश्वर हैं । इसी से हम लोग नित्य प्रार्थना में –

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वरः ।
गुरुस्साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः ।।

गुरु को साक्षात् परब्रह्म कहकर उन्हें नमस्कार करते हैं । श्री तुलसी दास जी गुरुदेव को ही अपना इष्टदेव मानकर गुरुदेव की तरह अपने को प्रभु का साक्षात्कार कराने की प्रार्थना श्री आंजनेय से करते हैं ।

चौपाई – ३८

जो सत बार पाठ कर कोई ।
छूटहि बदि महा सुख होई ॥

अर्थ : जो कोई = (इस चालीसाको) सतबार = सौ बार, पाठकर = पाठ करेंगे (उनको) छूटहि बंदि = बंधन से छूटकर, महा सुख होई = महासुख होगा ।

भाव : इस हनुमान चालीसा को जो सौ बार पाठ करेंगे वे सब बंधनों से छूट जायेंगे और बाद में उनको महान सुख मिलेगा ।

व्याख्या : जो सत बार पाठ कर कोई = अवधी भाषा मे "श" को 'स' के रूप में बोलते हैं। 'सत' का अर्थ सात या सौ है। प्रतिदिन कम से कम सात बार इस का पाठ कर सकते है, या महा संकट आने पर प्रतिदिन सौबार पाठ कर सकते हैं या संकट से मुक्त होने तक कर सकते है। प्रतिदिन सौ बार के हिसाब से आजीवन जो इसका पाठ करेंगे उन्हें भगवत्साक्षात्कार होगा और भवबंधन से छूट जायेंगे । मोक्ष की प्राप्ति भी होगी ।

छूट हि बंदि महासुख होई – जो कोई किसी कारणवश कारावास का दंड भोग रहा हो अगर वह इस चालीसा का नियम से पाठ करेगा तो अवश्य वह उस दंड से मुक्त हो जायेगा ।

इस चालीसा के पाठ से भवबंधनों से छूटतो जायेंगे ही अंत में मोक्ष के आधकारी बनेंगे । परमात्मा का लीला दर्शन नामक महा सुख भी मिलेगा । इस चौपाई का सारांश यह है कि जो लोग भक्ति और श्रद्धा के साथ श्री हनुमान जी की षोडशोपचार पूजा की विधि से पूजा करके प्रतिदिन इस चालीसा का सात या सौबार पाठ करेंगे उन्हें इस लोक में और उस लोक में महा सुख मिलेगा ।

चौपाई – ३९

जो यह पढे हनुमान चालीसा ।
होय सिद्धि साखी गौरीसा ।।

अर्थ : जो–जो लोग, यह = इस, हनुमान चालीसा = हनुमान चालीसा का, पढै = पाठ करेंगे, (उन्हें) गौरी सा = पार्वती परमेश्वर के, साखी = साक्षी रूपमें, सिद्धि = सफलता, होय = मिलेगी।

भाव : जो लोग इस श्रीं हनुमान चालीसा का पाठ करेंगे उन्हें गौरीशंकर के साक्षी रूप में सफलता मिलेगी।

व्याख्या – जो यह पढै : चाहे वह किसी भी जाति का हो, किसी भी धर्म का हो, और किसी भी देश का वासी हो, इस चालीसा का पाठ श्रद्धा से करेगा तो उसके अभीष्ट सिद्ध होंगे। प्राचीन काल में अयोध्या नगर में एक जूता सीनेवाला रहता था । वह हनुमान के जन्म दिवस के दिन धर को गोबर से लीप कर श्री हनुमानजी की मूर्ति की स्थापना करके षोड़शोपचार से पूजा करके श्री हनुमान चालीसा का पाठ रात दिन (२४ घंटे) एकांत स्थान में पाठ करता रहा तो उसे श्री हनुमानजी के दर्शन हुए । इस प्रकार के कई दृष्टांत और कई कथाएं प्रचलित हैं ।

होय सिद्धि साखी और गौरी सा – गोस्वामी जी ने लिखा है कि चालीसा का पाठ करने से अवश्य सफलता मिलेगी। साक्षात् भगवान शंकर ने उनको आदेश देकर इस चालीसा को उन से लिखाया है, इसी से वे इतने दृढ विश्वास के साथ कह रहे हैं । इस चालीसा की भाषा बहुत ही सरल है। बच्चे, बूढे, स्त्री, पुरूष, शिक्षित, अशिक्षित सभी वर्ण के लोग, सभी वर्ग के लोग अत्यंत भक्ति, श्रद्धा और उत्साह के साथ पढते हैं ।

यह चालीसा अन्य किसी भाषा में होती तो इस का इतना विशेष प्रचार नहीं हुआ होता । साक्षात् भगवान श्री शंकर ने श्री तुलसी दास जी को आदेश देकर

राम चरित मानस और चालीसा उनसे लिखाया है। इसी से उन्हीं को साक्षी के रूप में रखकर लिख रहा हूं – ऐसी नम्रता पूर्वक प्रतिज्ञा तुलसी दास जी ने की है। इस से बढकर विश्वास हमें और क्या चाहिये । इस चौपाई का सार यही है कि इस का प्रेम पूर्वक पाठ करने से वांछित फल की प्राप्ति अवश्य होगी ।

चौपाई – ३९

जो यह पढे हनुमान चालीसा ।

होय सिद्धि साखी गौरीसा ।।

अर्थ : जो–जो लोग, यह = इस, हनुमान चालीसा = हनुमान चालीसा का, पढै = पाठ करेंगे, (उन्हें) गौरी सा = पार्वती परमेश्वर के, साखी = साक्षी रूपमें, सिद्धि = सफलता, होय = मिलेगी।

भाव : जो लोग इस श्री हनुमान चालीसा का पाठ करेंगे उन्हें गौरीशंकर के साक्षी रूप में सफलता मिलेगी।

व्याख्या – जो यह पढै : चाहे वह किसी भी जाति का हो, किसी भी धर्म का हो, और किसी भी देश का वासी हो, इस चालीसा का पाठ श्रद्धा से करेगा तो उसके अभीष्ट सिद्ध होंगे। प्राचीन काल में अयोध्या नगर में एक जूता सीनेवाला रहता था । वह हनुमान के जन्म दिवस के दिन धर को गोबर से लीप कर श्री हनुमानजी की मूर्ति की स्थापना करके षोड़शोपचार से पूजा करके श्री हनुमान चालीसा का पाठ रात दिन (२४ घंटे) एकांत स्थान में पाठ करता रहा तो उसे श्री हनुमानजी के दर्शन हुए । इस प्रकार के कई दृष्टांत और कई कथाएं प्रचलित हैं ।

होय सिद्धि साखी और गौरी सा – गोस्वामी जी ने लिखा है कि चालीसा का पाठ करने से अवश्य सफलता मिलेगी। साक्षात् भगवान शंकर ने उनको आदेश देकर इस चालीसा को उन से लिखाया है, इसी से वे इतने दृढ विश्वास के साथ कह रहे हैं । इस चालीसा की भाषा बहुत ही सरल है। बच्चे, बूढे, स्त्री, पुरुष, शिक्षित, अशिक्षित सभी वर्ण के लोग, सभी वर्ग के लोग अत्यंत भक्ति, श्रद्धा और उत्साह के साथ पढते हैं ।

यह चालीसा अन्य किसी भाषा में होती तो इस का इतना विशेष प्रचार नहीं हुआ होता । साक्षात् भगवान श्री शंकर ने श्री तुलसी दास जी को आदेश देकर

राम चरित मानस और चालीसा उनसे लिखाया है। इसी से उन्हीं को साक्षी के रूप में रखकर लिख रहा हूं – ऐसी नम्रता पूर्वक प्रतिज्ञा तुलसी दास जी ने की है। इस से बढकर विश्वास हमें और क्या चाहिये । इस चौपाई का सार यही है कि इस का प्रेम पूर्वक पाठ करने से वांछित फल की प्राप्ति अवश्य होगी ।

चौपाई – ४०

तुलसीदास सदा हरि चेरा ।
कीजै नाथ हृदय महं डेरा ।।

अर्थ : नाथ – हे आंजनेय ! तुलसी दास = तुलसी दास, सदा = हमेशा, हरि=तुम्हारा (श्री हनुमानजी का) चेरा = दास ही है (तुम) (मेरे) हृदय महं = हृदय में, डेरा कीजै = निवास करो ।

भाव : – हे आंजनेय ! यह तुलसी दास सदा तुम्हारा सेवक ही है। इस कारण सदा मेरे हृदय में आकर निवास करो।

व्याख्या – सदा हरि चेरा : – हरि माने विष्णु स्वरूप श्री रामजी और वानर रूप श्री हनुमान जी दोनों को ले सकते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि श्री तुलसी दास जी श्री रामजी और हनुमानजी दोनों के सेवक हैं । श्री रामजी के हृदय में श्री हनुमानजी रहते हैं और श्री हनुमानजी के हृदय में श्री रामजी विराज मान ही हैं। दोनो में से किसी एक की सेवा करने मे दोनों की सेवा हो जाती है। तुलसीदास जी सदा हरि के दास ही हैं। गीतावली नामक ग्रंथमें अपने को पूर्व जन्म में भी हरि का दास ही बताया है –

जन्म – जन्म जानकी नाथ के गुन गान तुलसी दास गाये

कीजै नाथ हृदयमहंडेरा – इस के रहस्य के बारे में जरा सोचा जाय । जीवात्मा – अंतःकरण चतुष्टय माने मन बुद्धि चित्त अहंकार के साथ हमारे हृदय में रहता है। हृदय शब्द की व्युत्पत्ति देखेंगे –

सदाएष आत्मा हृदि तस्यैतदेव निरूक्तं हृदयमिति

छांदोग्य ८ – ३३

हृदि + अयं + वर्तते = हृदय में यह जीवात्मा विराज मान होने से हृदय नाम आत्मा के लिये प्रसिद्ध है।

"हियते विषयै रिति हृदयं " विषयों से अपहृत है । मंत्रपुष्प में हृदय का वर्णन यों हुआ है।

पद्मकोश प्रतीकाशगुंहृदयं चाप्यधो मुखं
अथो निष्ठया, वितस्यांते नाभ्यामुपरितिष्ठति ।
ज्वाल माला कुलंभाति विश्वस्यायतनं महत् ।।

अष्टदलों से परिवेष्टित पद्म कोश की भांति और लोक में प्रसिद्धि पद्म की भांति नहो कर यह पद्म अधोमुख से विभूषित हृदय कमल कहा गया है। कंठ से नीचे और नभि से ऊपर बारह अंगुल स्थान पर स्थिति इस हृदय कमल के सारे ब्रह्मांड के लियं आधार स्वरूप परब्रह्म या प्रत्यगात्माविराज मान है ।

अंगुष्ट मात्र -- एतत् व्दिदुर मृतास्ते भवति

श्वेताश्वतरोपनिषद ३-१२

यह हृदय अंगुष्ठ मात्र या अंगुष्ठ उंगली केबराबर है । बिना आत्म ज्ञानके, अज्ञान के कारण हम लोग इस शरीर के प्रति "मैं" का भाव रखते हैं। यह बहुत बड़ी भूल है। प्राण के धारण करने पर आत्मा जीवात्मा हो जाता है। पैदा होना, बढ जाना, नष्ट हो जाना, वर्ण व्यवस्था आदि सब जीवात्मा के है पर परमात्मा के नहीं हैं। ये अनात्मा के धर्म हैं । मन की प्रवृत्ति पाप विषयों के प्रति रहती है। चित्त या तो कठोर या स्वभाव से चंचल रहता है। घर आदि के प्रति ममता होने से अहंकार होता है। ऐसे मलिन अंतःकरण चतुष्टय से पूर्ण हृदय में परमात्मा का प्रवेश कैसे होगा ? माने प्रवेश नहीं होगा। लेकिन निरंतर भगवन्नाम के स्मरण करने से ये सब बुरे भाव नष्ट हो जाते है और हृयद निर्मल होजाता है । तब जै से करूणा निधान भगवान अपने सच्चे सेवक की झोंपडी मे भी प्रविष्ट होने में पीछे नही हटते वैसे ही श्री हनुमान जी के आराधकों के हृदय में श्री आंजनेय सदा विराजमान रहते हैं । वैसे तो श्री हनुमानजी के आराधकों के हृदय में श्री आंजनेय सदा विराजमान रहते हैं-

केनापि देवेन हृदिस्थितेन यथानियुक्तोस्मि तथा करोमि

कोई ईश्वर मेरे इस हृदय में रहकर मुझे चला रहा है। श्री विद्यारण्य स्वमी ने कहा है - वह जैसा चलाता है वैस मैं चलरहा हूं। इस प्रकार श्री तुलसी दास जी श्री आंजनेय से "आंजनेय! तुम मेरे इस हृदय कमल में बसजाओ । तुम्हारे अनंत रूप है। इस कारण जिस किसी रूप मे पधार कर बसजाओ । तुम अकेले न आना, अपने इष्टदेव श्री राम जी को सात लेकर आना, सदा शाश्वत रूपसे मेरे हृदय में बसो, नम्रता पूर्वक ऐसी प्रार्थना कर श्री तुलसी दास जी ने अपनी अपार और अनन्य भक्ति प्रदर्शित की है ।

दोहा

पवन तनय संकट हरन,

मंगल मूरति रूप ।

राम लखन सीता सहित,

हृदय बसहु सुर भूप ।।

अर्थ : पवन तनय = पवन पुत्र आंजनेय (तुम) संकट हरन = संकटों को दूर करने वाले हो, मंगल मूरति रूप = मंगल स्वरूप हो, राम लखन सीता साहित = सीता राम लक्ष्मण के साथ, सुर भूप = समस्त देवताओं के स्वामी, आंजनेय = हृदय बसहु = (मेरे) हृदय में बसो ।

भाव : – हे पवन पुत्र । तुम संकटों को दूर करने वाले हो, मंगल स्वरूप हो, समस्त देवताओं के स्वामी हो श्री सीताराम लक्ष्मण के साथ मेरे हृदय में बसो ।

व्याख्या – पवन तनय संकट हरन : पवन तनय के संबोधन से यह मालूम होता है कि जैसे पवन देव बादलों को तितर बितर करके हटा देते हैं, वैसे ही श्री हनुमानजी हमारे ऊपर आये संकट रूपी बादलों के पर्दे को हटा देते हैं ।

मंगल मूरति रूप : श्री हनुमान जी को मंगल मूर्ति कहते है । "मंगल मूरति मारुति नंदन" जिन में ये पांच वस्तु विद्यमान है उन्हें मंगल मूर्ति कहते हैं १. स्वस्थ शरीर २. स्वच्छ शरीर ३. सुंदर शरीर ४. सशक्त शरीर ५. सत्संगी शरीर । जिन का शरीर इन पांच वस्तुओं को पांच संपदाओ को अर्जित कर लेता है, उनका विग्रह मंगल मूर्ति हो जाता है। श्री राम मंगल मूर्ति है और श्री हनुमानजी मंगल मूर्ति है। कारण इन पांच संपदाओं से वे विभूषित हैं। जीव प्रभुका अंश है । उसमें कुछ संपदाएं तो आही जाती हैं पर सभी नहीं आती। इससे हमारा शरीर मंगल मूर्ति नहीं कहा जा सकता। किंतु प्रभु श्रीरामजी और श्री हनुमान जी मंगल मूर्ति हैं। मंगल शब्द का प्रयोग आनंद, शुभ, कल्याण, कुशल आदि कई अर्थो में होता है। किसी उत्सव को या विवाह आदि शुभ कार्यों को मंगल कार्य कहते हैं।

जब हमारे हृदय में मंगल स्वरूप श्री हनुमान जी रहेंगे तब हमे शुभ, आनंद, और मंगल ही मंगल होगा।

भगवान को मंगल मूर्ति कहते हैं –" मंगलं भगवान विष्णु मगंलं गरूड़ ध्वजः मंगल पुंडरीकाक्ष मंगलायतनों हरिः ॥

श्री तुलसी दास जी के विचार में मंगल मूर्ति श्री राम भगवान के स्वरूप होने से आंजनेय भी मंगल मूर्ति ही हैं ।

राम लखन सीता सहित हृदय बसहु सुर भूप – हे आंजनेय! हमारे हृदय में तुम अकेले पधार कर बसना नहीं, कारण तुम अकेले नहीं रह सकते, अतः तुम्हेंजो परम प्रिय सीता राम लक्ष्मण हैं उनके साथ पधार कर बसो ।

सहित माने – स + हित भी कह सकते हैं । हित से प्रेम सूचित है । इस कारण तुम प्रेम को साथ लेकर आ जाओ । तुम श्री रामजी के साथ मेरे हृदय में रहने पर भी यदि प्रेम या अनुराग मेरे हृदय में नहीं रहेगा तो तुम्हारे दर्शन से मुझे मिलने वाला आनंद नहीं मिलेगा ।

प्रेम के दर्शन से विहीन प्रभुके दर्शन से सुख या शांति का अनुभव कैसे होगा? नहीं होगा । मिथिला नगर में धनुर्भग के समय जिन लोगों ने श्री रामचन्द्र जी को देखा उन सब को अपने – अपने भाव के अनुरूप अनुभूति हुई –

डरेकुटिल नृप प्रभुहि निहारी ।
मनहु भयानक मूरति भारी ॥

रा.च.मा. १–२४०–३

वहाँ पर जो कुटिल राजा आये बैठे थे वे तो श्री राम को देखते ही ऐसे डर गये मानो कोई भयानक मूर्ति सामने आखड़ी हुई हो ।

हरिभगतन देखे दोऊ भ्राता ।
इष्ट देव इवसबसुख दाता ॥

रा.च.मा. १–२४१–३

हरिभक्तों को ये दोनों भाई राम और लक्ष्मण ऐसे लग रहे थे जैसे सब सुखों के दाता, हमारे इष्ट देव ही आ विराजे हों । उन सब के अत्यंत आनंद की अनुभूति हुई । इस कारण हे आंजनेय – तुम श्री सीता राम लक्ष्मण के साथ और अपार प्रेम भक्ति के साथ पधार कर मेरे हृदय मंदिर में विराजो । यही मेरी हार्दिक कामना हैं । श्री हनुमान चालीसा के अंत में श्री तुलसी दास जी सविनय श्री आंजनेय से प्रार्थना करते हैं ।

ओं शांतिः शांतिः शांति :

आरती

आंजनेयाय राम सेवा धुरंधराय –
वायुपुत्राय मां–पाहि मंगलम् ॥आंज॥

अष्टसिद्धिदायकाय – अष्टमूर्ति रूपकाय ।
दुष्टदानवांतकाय – शिष्ट मंगलम् ॥ ॥आंज॥

सर्वमंत्रसंहिताय – सर्व यंत्रात्मकाय ।
सर्वरोगवारणे – पाहि मंगलम् ॥ ॥आंज॥

कामरूपिणाय – काल काल वीर्य संभवाय ।
कालनेमि प्रमथनाय – कलय मंगलम् ॥ ॥आंज॥

रामचूडामणि – प्रदाय राम भक्ताय ।
राम कथा लोलाय – रम्य मंगलम् ॥ ॥आंज॥

पंचवक्त्रायते – परम पुरूष पोषणाय ।
पतितपावनाय मां – पाहि मंगलम् ॥ ॥आंज॥

रामकान्वयप्रियाय – रामनगर पूजिताय ।
लक्ष्मणैकरक्षकाय – रमण मंगलम् ॥ ॥आंज॥

मन्युसूक्त

ऋग्वेद के दशम मंडल के २३, २४ के सूक्तों को मन्युसूक्त कहा करते हैं। यह सूक्त बहुत ही महिमान्वित है। मन्यु माने क्रोध । क्रोध के प्रधान देवता मन्यु माने जाते हैं। यह मन्यु देवता ही रूद्राध्यायी में रूद्रदेवता के रूप में प्रसिद्ध है। मंत्र द्रष्टाने इंद्र, वरूण आदि के रूप में मन्युदेवता की प्रशंसा की है। इस मन्यु देवता की आराधना करने से कई लाभ होते हैं, पर जो लोग गायत्रीकी आराधना नहीं करते, वे इस के पाठ के अधिकारी नहीं । रूद्रांश से प्रादुर्भूत श्री हनुमान जी मन्यु देवता के रूप में पूजे जाते हैं। जैसे रूद्राध्यायी या रूद्रसूक्त से भगवान शिव का अभिषेक करते हैं वैसे ही मन्युसूक्त से श्री हनुमान जी का अभिषेक किया जाना प्रचार में है। समस्त शत्रुओं की पराजय केलिये, समस्त रोगों के विनाश केलिये, समस्त भूत–प्रेत–ग्रह बाधाओं के निवारण केलिये और अंतःशत्रुओं– काम–क्रोध–लोभ–मोह–मद–मात्सर्य आदि पर विजय पाने हेतु इस का उपयोग किया जासकता है पर किसी भी हालत में दूसरोंको हानि पहुँचाने केलिये इस का उपयोग नहीं किया जाना चाहिये। अपने आत्मकल्याण निमित्त इस का उपयोग सर्वदा सर्वथा श्रेयोदायक और विशेषलाभप्रद है। इन मंत्रों को गुरू के पास सीखकर स्वरसहित पाठ करना चाहिये ।

मन्युसूक्त के मंत्र

ॐ यस्ते मन्योऽविधद्वज्र सायक सह ओजः पुष्यति विश्वमानुषक्।

साह्याम दासमार्यं त्वया युजा सहस्कृतेन सहसा सहस्वता ॥१॥

मन्युरिन्द्रो मन्युरेवास देवो मन्युर्होता वरुणो जातवेदाः ।

मन्युं विश ईळते मानुषीर्याः पाहि नो मन्यो तपसा सजोषाः ॥२॥

अभीहि मन्यो तवसस्तवीयान्तपसा युजा वि जहि शत्रून् ।

अमित्रहा वृत्रहा दस्युहा च विश्वा वसून्या भरा त्वं नः ॥३॥

त्वं हि मन्यो अभिभूत्योजाः स्वयंभूर्भामो अभिमातिषाहः ।

विश्वचर्षणिः सहुरिः सहावानस्मास्वोजः पृतनासु धेहि ॥४॥

अभागः सन्नव परेतो अस्मि तव क्रत्वा तविषस्य प्रचेतः ।

तं त्वा मन्यो अक्रतुर्जिहीळाहं स्वा तनूर्बलदेयाय मेहि ॥५॥

अयं ते अस्म्युप मेह्यर्वाङ् प्रतीचीनः सहुरे विश्वधायः ।

मन्यो वज्रिन्नभि मामा ववृत्स्व हनाव दस्यूँरुत बोध्यापेः ॥६॥

अभि प्रेहि दक्षिणतो भवा मेऽधा वृत्राणि जङ्घनाव भूरि ।

जुहोमि ते धरुणं मध्वो अग्रमुभा उपांशु प्रथमा पिबाव ॥७॥

त्वया मन्यो सरथमारुजन्तो हर्षमाणासो धृषिता मरुत्वः ।

तिग्मेषव आयुधा संशिशाना अभि प्रयन्तु नरो अग्निरूपाः ॥८॥

अग्निरिव मन्यो त्विषितः सहस्व सेनानीर्नः सहुरे हूत एधि ।

हत्वाय शत्रून्वि भजस्व वेद ओजो मिमानो वि मृधो नुदस्व ॥९॥

सहस्व मन्यो अभिमातिमस्मे रुजन्मृणन्प्रमृणन्प्रेहि शत्रून् ।

उग्रं ते पाजो नन्वा रुरुध्रे वशी वशं नयस एकज त्वम् ॥१०॥

एको बहूनामसि मन्यवीळितो विशंविशं युधये सं शिशाधि ।

अकृत्तरुक्कया युजा वयं द्युमन्तं घोषं विजयाय कृण्महे ॥ ॥११॥

विजेषकृदिन्द्र इवानवब्रवो ३ऽस्माकं मन्यो अधिपा भवेह ।

प्रियं ते नाम सहुरे गृणीमसि विद्मा तमुत्सं यत आबभूथ ॥१२॥

आभूत्या सहजा वज्र सायक सहो बिभर्ष्यभिभूत उत्तरम् ।

क्रत्वा नो मन्यो सह मेद्येधि महाधनस्य पुरुहूत संसृजि ॥१३॥

संसृष्टं धनमुभयं समाकृतमस्मभ्यं दत्तां वरुणश्च मन्युः ।

भियं दधाना हृदयेषु शत्रवः पराजितासो अप नि लयन्ताम् ॥१४॥

ॐ धन्वनागा धन्वनाजिंजयेम धन्वना तीव्रास्समदो जयेम ।

धनुश्शत्रो रपकामं कृणोति धन्वनास्सर्वाः प्रदिशो जयेम ॥

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

श्री हनुमान चालीसा के अनुष्ठान

श्री हनुमान चालीसा श्री गोस्वामी तुलसीदा जी का सर्वकामप्रद स्तोत्र है। श्री तुलसी दासजी ने भगवान शंकर के आदेश ऐसे लोककल्याणनिमित्त लिखा है। इस के दोहे और चौपाई सिद्ध मंत्र हैं यह बात दीर्धकालसे सतत्पुरुष मानते चलेआरहे हैं और लोगों का अनुभव भी यही है । बहुत से लोगों ने इस चालीसा के अनुष्ठानसे लाभ उठाया है।

आवश्यक निर्देश

1. चालीसा के पाठ के सबअधिकारी है। सब वर्णो के, सब आश्रमों के, सभी आयु के स्त्री–पुरुष सब कोई इस का पाठ करसकते है। कोई अहिन्दू सज्जन चाहे तो वे भी पाठ करके लाभ उठासकते हैं।

2. सकाम पाठ शुद्ध आसन पर बैठकर दिन या रात्रि में चाहे जब किया जासकता है। हाथ–पैर धोकर, साफ कपडे पहन कर पाठ करना चाहिये। चलते – फिरते सकाम पाठ नहीं किया जासकता । रोगी व्यक्ति जो बैठने में असमर्थ हैं वे लेटे –लेटे पाठ करसकते हैं।

3. सकाम अनुष्ठान के दिनों में सबकेलिये, ब्रह्मचर्य का पालन और मांस मदिरा का त्याग आवश्यक है ।

4. निष्काम पाठ चलते–फिरते जब चाहे कर सकते हैं।

5. पाठ करने का स्थान शुद्ध होना चाहिये । शंकर जी के मंदिर या श्री हनुमान जी के मंदिर में उनके श्री विग्रहके सामने पाठ करना पीपल, बेल, आँवलेया तुलसी के समीप पाठकरना अधिक लाभ प्रद है।

6. पाठ किसी भी शुभतिथि को आरंभकिया जासकता है। मंगल या शनिवार होतो उत्तम है। स्थाप्यं समाप्यं शनि भौमवारे" कहा गया है।

7. मौन होकर पाठ करना, जल्दीसे जल्दी से पाठ करना, गाकर पाठ करना, सिर या शरीर को हिलाते पाठ करना, बिना ध्यान के पाठ करना, बिना अर्थके समझे पाठ करना दोषयुक्त माना जाता है ।

8. देवता में श्रद्धा– विश्वास नहोने से, व्यग्रचित्त से करने से, बहुत जल्दी करने से, प्रारब्ध में बलवान संस्कार बाधक होने से और दूसरों को हानि पहुँचाने की दृष्टि से पाठ करना निष्फल होता है।

9. अनुष्ठान के दिनों में रात में स्वप्न में कुछ दिखाई पडता है या सुनाई पडता है। कभी कोई आदेश भी मिलता है। लेकिन ऐसे आदेशों की चर्चा कभी किसीसे नहीं करनी चाहिये । यदि आदेश प्रलोभन या साधन विमुख करनेवाला या कोई भय दिखाने वाला होतो उसपर ध्यान नहीं देना चाहि ये।

10. संपुट के दो विधान हैं। पहले में चालीसा के आरंभ में और अंत में चौपाई को जोडकर पूरे चालीसा का पाठ किया जाता है। दूसरे में हर दोहे या चौपाई के पहले और अंत में संपुट की चौपाई की जोड कर किया जाता है। जिन को जैसी सुविधा है, तदनुसार पाठ करके लाभ उठा सकते हैं।

11. कुछ लोग चौबीस घंटे अखंड पाठ भी करके लाभ उठाते है।

12. चालीसा का पाठ १०८ बार, ५१ बार ११ या सात बार करसकते हैं।

संपुट पाठ की चौपाइयाँ

1. कुमति के नाश और सुमति के लिये

महाबीर बिक्रम बजरंगी, कुमति निवार सुमतिके संगी ।

2. बल, विद्या एवं ब्रद्धि की प्राप्ति और मनोविकार के दूर करने केलिये ।

बद्धिहीन तनु जानिके, सुमिरौ पवनकुमार ।
बलबुधि – विद्या देहु मोहि, हरहुकलेस विकार ॥

3. कठिनरोगों से मुक्ति केलिये :–

नासै रोग हरै सबपीरा, जपत निरंतर हनुमत बीरा।

अथवा

रामरसायन तुम्हरे पासा, सदा रहोरघुपतिके दासा।
लाय संजीवन लखन जियाये, श्री रघुवीर हरषि उरलाये ॥

4. संकट से मुक्ति के लिये :-

संकट ते हनुमान छुडावै, मनक्रमवचन ध्यान जोलावै ।

अथवा

संकट कटे मिटे सबपीरा, जोसुमिरै हनुमत बलबीरा ।।

5. अभिलषित वस्तु या कार्य की प्राप्ति के लिये :-

सबपर राम तपस्वी राजा, तिनके काज सकलतुमसाजा ।

और मनोरथ जो कोई लावै, तासु अमित जीवन फल पावै ।।

6. भूत-प्रेत- बाधा निवृत्ति के लिये :-

भूत - पिसाच निकट नहिं आवै, महाबीर जब नाम सुनाबै ।।

7. आसुरीशक्ति के विनाशके लिये :-

भीमरूपधरि असुर सँहारे । राम चंद्र के काज सँवारे ।

साधु -संत के तुम रखवारे। असुर निकंदन रामदुलारे।।

8. कठिन कार्य की सिद्धि के लिये :-

दुर्गम काज जगतके जेते, सुगम अनुग्रह तुम्हरे तेते ।।

9. रक्षा और सुखकी प्राप्ति के लिये :-

सबसुख लहै तुम्हारी सरना । तुम रक्षक काहू को डरना ।।

10. द्रव्य प्राप्ति के लिये :-

अष्टसिद्धि नौ निधिके दाता, असबर दीन जानकी माता।

मंत्रवत् पाठ के लिये संपुट विधि :-

इन अभीष्ट चौपाइयों के चालीसा का पाठ करने के अतिरिक्त कार्य के अनुसार नीचेवाली चौपाई को मंत्र के रूप में बीच में रखकर संपुट करें -

जै जै जै हनुमान गोसाई । कृपाकरहु गुरूदेवकी नाई ।।

घोर संकट से मुक्ति पाने के लिये चालीसाके संकट मेचन हनुमानष्टक का भी पाठ करें जैसाकि पाठ करने वाले प्रायः किया करते हैं।

संकटमोचन हनुमानाष्टक

मत्तगयन्द छन्द

बाल समय रबि भक्षि लियो तब
तीनहुँ लोक भयो अँधियारो ।
ताहि सों त्रास भयो जग को
यह संकट काहु सों जात न टारो ।।
देवन आनि करि बिनती तब
छाँड़ि दियो रबि कष्ट निवारो ।
को नहिं जानत है जगमें कपि
संकटमोचन नाम तिहारो ।।१।।
बालि की त्रास कपीस बसै गिरि
जात महाप्रभु पंथ निहारो ।
चौंकि महा मुनि साप दियो तब
चाहिय कौन बिचार बिचारो ।।
कै द्विज रूप लिवाय महाप्रभु
सो तुम दास के सोक निवारो (को-२)
अंगद के सँग लेन गये सिय
खोज कपीस यह बैन उचारो ।
जीवन ना बचिहौ हम सो जु
बिना सुधि लाए इहाँ पगु धारो ।।
हेरि थके तट सिंधु सबै तब लाय
सिया-सुधि प्रान उबारो (को-३)
रावन त्रास दई सिय को सब
राक्षसि सों करि सोक निवारो।
ताहि समय हनुमान महाप्रभु
जाय महा रजनीचर मारो।।

चाहत सीय असोक सों आगि सु
दै प्रभु मुद्रिका सोक निवारो (को-४)
बान लग्यो उर लछिमन के तब
प्रान तजे सुत रावन मारो।
लै गृह बैद्य सुषेन समेत
तबै गिरि द्रोन सु बीर उपारो ॥
आनि सजीवन हाथ दई तब
लछिमन के तुम प्रान उबारो (को-५)
रावन जुद्ध अजान कियो तब
नाग कि फाँस सबै सिर डारो ।
श्रीरघुनाथ समेत सबै दल
मोह भयो यह संकट भारो ॥
आनि खगेस तबै हनुमान जु
बंधन काटि सुत्रास निवारो (को-६)
लै रघुनाथ पताल सिधारो।
देबिहिं पूजि भली बिधि सों बलि
देउ सबै मिलि मंत्र बिचारो ॥
जाय सहाय भयो तप ही
अहिरावन सैन्य समेत सँहारो (को-७)
काज किये बड़ देवन के तुम
बीर महाप्रभु देखि बिचारो ।
कौन सो संकट मोर गरीब को
जो तुमसों नहिं जात है टारो ॥
बेगि हरो हनुमान महाप्रभु
जो कछु संकट होय हमारो (को-८)

दो :- लाल देह लाली लसे, अरू धरि लाल लँगूर ।
बज्र देह दानव दलन, जय जय जय कपि सूर ॥

॥ इति संकटमोचन हनुमानाष्टक सम्पूर्ण ॥

श्री हनुमन्माला मंत्र

इस मंत्र को प्रति दिन एक बार या तीन बार पाठ कर सकते हैं । इस के पाट से सभी प्रकार के ज्वर, रोग, प्रयोग, भूत–प्रेत–ग्रह बाधाओं और संकटों से छूट जाते हैं। ब्राह्ममुहूर्त में प्रति दिन पाँच बार मानसिक रूप से पाठ करने से अभीष्ट सिद्धि होती है । हर शनिवार को निष्ठाके साथ तीनो समय पाठ करने से समस्त कामनाएँ पूरी हो जाती है। निष्ठा और श्रद्धा के साथ पाठ करने वाले को श्री हनुमान जी स्वप्न में दर्शन भी दे देते हैं ।

ओं, ह्रों, क्ष्रां, क्ष्म्यौं, ग्लौं, ह्सौं ओं नमो भगवते पंच वक्त्र हनुमते, प्रकट पराक्रमाकांत, सकल दिंग्मण्डलाय, निजकीर्ति स्फूर्तिधावल्य, वितानायमान, जगत्रिताय, अतुल बलैश्वर्य रूद्रावताराय, मैरावण मदवारण गर्व निर्वापणोत्कंठ कंठीरवाय, ब्रह्मास्त्र गर्व सर्वंकषाय, वज्र शरीराय, लंका लंकार हारिणे, तृणीकृतार्णवलंघनाय, अक्षशिक्षण विचक्षणाय, दशग्रीव गर्वपर्वतोत्पाटनाय, लक्ष्मण प्राणदायिने, सीता मनोल्लास कराय, राम मानस चकोरामृतकराय, मणिकुंडलमंडित गंडस्थलाय, मंदहासोज्वालन्मुखारविंदाय, मौंजी कौपीन विराजत्कटि तटाय, कनकयज्ञोपवीताय, दुर्वारकीलित लंबशिखाय, तटित्कोटि समुज्वल पीतांबरालंकृताय, तप्तजांबूनद प्रभाभासुर रम्य दिव्य मंगल विग्रहाय, मणिमय ग्रैवेयांगद हार किंकिणी किरीटोदार मूर्तये, रक्तपंकेरूहाक्षाय, त्रिपंचनयन स्फुरत्पंच वक्त्र खट्वांग त्रिशूल खड्गोग्र पाशांकुश क्ष्माधर भूरूह कौमोदकी कपाल हलभृद्दशभुजाटोप प्रताप भूषणाय, वानरनारसिंह तार्ष्य वराह हयग्रीवानन धराय, निरंकुश वाग्वैभवप्रदाय, तत्वज्ञानदायिने सर्वोत्कृष्ट फल प्रदाय सुकुमार ब्रह्मचारिणे, भरतप्राण संरक्षणाय, गंभीरशब्दशालिने, सर्वपापविनाशाय, रामसुग्रीव संधान चातुर्य प्रभावाय, सुग्रीवाह्लादकारिणे, वालिविनाश कारणाय, रूद्रतेजस्विने वायुनंदनाय, अंजनागर्भ रत्नाकरामृतकराय, निरंतर रामचन्द्र पादारविंद मकरंद मत्तमधुकराय माण मानसाय, निजवाल वलयीकृत कपिसैन्य प्रकाराय, सकल जगन्मोदकोत्कृष्ट कार्यनिर्वाहकाय, केसरीनंदनाय, कपिकुंजराय, भविष्यद् ब्रह्मणे ओं नमो भगवते पंत्र वक्त्र हनुमते तेजोराशे, एह्येहि, देवभयं, भूतभयं, प्रेतभयं, पिशाचभयं, विद्रावय, विद्रावय, राजभयं, चोरभयं, शत्रुभयं, सर्पभयं,

वृश्चिकभयं, मृगभयं, पक्षिभयं, क्रिमिभयं, कीटकभयं, खादय, खादय । ओंनमो भगवते पंचवक्त्र हनुमते, जगदाश्चर्यकर शौर्यशालिने, एह्येहि, श्रवणज भूतानां, दृष्टिज भूतानां, शाकिनी, ढाकिनी, कामिनी मोहिनानां भेताल ब्रह्मराक्षस सकल कूश्मांडानां विषय दुष्टानां विषय विशषेजानां भयं हर हर मथ मथ छेदय–छेदय भेदय भेदय मारय मारय शोषय शोषय प्रहारय प्रहारय ठ ठ ठ ठ ख ख ख ख खे खे ओंनमों भगवते पंचवक्त्र हनुमते शृंखलाबेध विमोचनाय, उमामहेश्वर तेजो महिमावतार सर्वविष भेदन सर्व भयोत्पाटन सर्वज्वर च्छेदन सर्वभयभंजन ओंनमो भगवते पंच वक्त्र हनुमते कबलीकृतार्कमंडल भूतमंडल प्रेतमंडल, पिशाचमंडलान्निर्घाटय निर्घाटय भूत ज्वर, प्रेतज्वर, पिशाचज्वर, महेश्वरज्वर, भेतालज्वर, ब्रह्मराक्षसज्वर, ऐहिकाज्वर, द्व्याहिकाज्वर त्र्याहिकाज्वर, चातुर्थिकज्वर, पांचरत्रिकज्वर, विषमज्वर, दोषज्वर, भेतालपाश, महानागकुल विषं निर्विषंकुरूकुरू झट झट दह दह ओं नमोंभगवते पंचवक्त्र हनुमते कालरूद्र रौद्रावतार, सर्वग्रहनुच्चाटयो च्चाटय आह आह एहि एहि दश दिशो बंध बंध सर्वतो रक्ष रक्ष सर्वशत्रून् कंपय कंपय मारय मारय दाहय दाहय कबलय कबलय सर्वजनानावेशय आवेशय मोहय मोहय आकर्षय आकर्षय ओंनमो भगवते पचं वक्त्र हनुमते जगद्गीत कीर्तये प्रत्यथिदर्पदलनाय परमंत्र दर्पदलनाय परमंत्र प्राणनाशाय आत्ममंत्र परिक्षणाय परबलं खादय खादय क्षोभय क्षोभय हारय हारय त्वद्भक्त मनोरथानि पूरय पूरय सकल संजीविनी नायक वरं मे दापय दापय ओंनमो भगवते पंच वक्त्र हनुमते ओं हौं, क्ष्रौं, क्ष्म्यौं ग्लौं ह्सौं, श्रीं भ्रीं, घ्रीं, ओं, न्रूं, क्लीं हां, हीं, हूं, हैं, हौं, हः, हुं फट् खे खे हुं, फट् स्वाहा ।

प्रार्थना

हे पवनसुत श्री हनुमत् प्रभू । तुम हरिहरस्वरूप होकर अवतरित हुए हो

चिरंजीवी होकर निरंतर श्री रामचंद्र के चरण कमल के मकरंद का आस्वादन करते हो। स्वामि भक्ति, त्याग निरति, ज्ञान परिपूर्णता, निरभिमानित्व, अद्भुत चातुर्य इत्यादि सर्व गुणों से संपन्न हो

हमारे सत्य धर्म पर आधारित ऐहिक वांछाओं क़ो अवश्य पूरा करने का तुमने शपथ लिया है। यदि हमारी कामना हो तो श्री राम सायुज्य भी तुम हमें प्राप्त करा सकते हो।

तुम्हारे सद्गुण हमारे लिये आचरण योग्य हैं। अनुकरणीय हैं – उसके लिये हमें शक्ति सामर्थ्य प्रदान कीजिये । तुम्ही हमारे आराध्यदेव हो। हमारी जीवन नौका के सुखान बनकर हमारी रक्षा करते हुए तुम्हेंजो प्रिय हो उस पध्दति में हम जीवन यापन करें ऐसा हम पर अनुग्रह कीजिये।

जय हनुमान्

जय श्री राम

ग्रंथ सूची

रामचरित मानस
वाल्मीकि रामायण
पराशर संहिता
चरकसंहिता
नारदपुराण
ॠग्वेद
हनुमन्नाटक
भगवत्गीता
श्री राम रहस्यो पनिषद
मंत्र महार्णव
गिरिधर रामयाण
हनुमान बाहुक
विनय पत्रिका
पद्मपुराण
महाभारत
रूद्रयामिल
अमर कोश
यतींद्र मत दीपिका
बृहदारण्यको पनिषत्
वाक्य वृत्ति
आनंद रामायण
स्कंदपुराण
पातंजलियोग सूत्र
मेदिनी कोश
एकाक्षर निघंटु
संस्कृत वाक्य प्रबोध
चंपूरामायण
अध्यात्मरामायण
मानस पीयूष
श्रीमद्भागवत
रामोत्तरतापनीयोपनिषत
तारसारोपनिषत्
शिव पुराण
वेदोपदेशचंद्रिका
ब्रह्मांड पुराण
रामस्वयंवर
अथर्ववेद
धन्वंतरि निघंटु
वायुपुराण
शवेताश्वरोपनिषत्
श्री हनुमाद्विषयसर्वस्व
श्री हनुमत्पंचाष्टकम्
भर्तृहरिसुभाषित
राज निघंटु
दोहावली
बृहद्धर्म पुराण
छांदोग्योपनिषत्
मंत्र पुष्प
श्री हनुमान चालीसा हिंदी भाष्य
श्री हनुमंदाकं–हिंदी विशेषांक
गीताप्रेस– गोरखपूर
मानस के राजहंस – अमृत लाल नागर